दो शब्द

संग्रह में आधुनिक कवियों की उत्तम रचनाएँ चुनी गयी है। संग्रह छोटी आयु के विद्यार्थियों के लिये तैयार किया गया है, कवितायें ऐसी चुनी गई हैं जिनकी भाषा सरल हो और जिनके भाव । इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि इस संग्रह में एक कविता आने न पाये जिसको अनुचित कहा जा सके।

ः कविता-संग्रहों में पंजाब के कवियों की उपेक्षा की जाती है; चेत स्थान नहीं दिया जाता। यह संग्रह पंजाब यूनिवर्सिटी का र है। इसलिये इसमें हिन्दी के पंजाबी कवियों को उचित स्थान या है। इनका परिचय भी अन्य प्रांत के कवियों के साथ दिया गया जाब के छः कवियों की रचनायें इस संग्रह मे रखी गई है। ओं को चुनते समय इस बात का पूरा ध्यान रखा गया है कि इनसे का मनोरञ्जन हो और साथ ही उनको शिक्षा भी मिल सके।

जेन कवियों की रचनाओं को इस संग्रह में चुना गया है, हम उनके री हैं। हमें खेद है कि हम श्री मैथिलीशरण गुप्त और श्री सियाराम-गुप्त की चालीस-चालीस पंक्तियों से अधिक रचनाएँ इस संग्रह में दे सकते।

इन्द्रनाथ मदान

भूमिका

मित्र श्री० गुरुनारायण सुकुल ने अपनी पुस्तक के लिए आरभिक
लिखने का जो दायित्व मुझे दिया है मैं सहर्ष उसकी पूर्ति करता
नारायण जी से मेरा परिचय कई वर्षों से है और मैं शुरू से
रुचि सूक्तियों की ओर देख रहा हू। हिन्दी के पत्र-पत्रिकाओं
अक्सर ऐसे ही लेख लिखा करते हैं। एक प्रकार से यह उनकी
प्रवृत्ति है। उनके पूज्य पितामह ने उन्हे इस विषय की बहुत
दी है और जहा तक मुझे पता है उनके पिता प० चद्रमौलि
बी० ए० एल० टी० महोदय भी सूक्तियों की अच्छी निधि
अपने इन अभिभावकों के ससर्ग से स्वभावत. गुरुनारायण
उनके सग्रह करने की प्रवृत्ति हुई और फिर तो उन्होंने
तत्र अध्ययन के द्वारा बडे मनोयोग-पूर्वक यह कार्य सपन्न
।

पुस्तक की सारी रूप-रेखा मेरे देखते हुए तैयार हुई है। मैंने
क्रम-निर्धारण पसद किया है और इसे इस रूप मे प्रकाशित
मेरी पूरी अनुमति है। सभव है शीघ्रता के कारण या दृष्टि-
कुछ सूक्तियाँ अधिक सुरुचिपूर्ण न हों अथवा कुछ का अर्थ-
यथेष्ट स्पष्ट न किया जा सका हो, पर अधिकाश सूक्तियों तो

निश्चय ही मनोरजक और चमत्कार भरी हैं। आशा है उन प
की पर्याप्त प्रीति होगी।

सूक्तियो का क्षेत्र बड़ा विस्तृत है। अलकार मात्र सूक्ति
ऐतिहासिक तथा सार्वजनिक प्रसगों की भी सुदर सूक्तियाँ होती हैं।
बार सूक्तियों के महान् प्रभाव से इतिहास में युगान्तरकारी परिवर्त
हैं। सभी देशो की चुनी हुई सूक्तियो मे उनकी अनुभूति,
सस्कृति की झलक देखी जाती है। सूक्तियॉ मानव-जीवन के
क्षेत्र की ओर सभी रसो की हो सकतो हैं। भाषा का जैसा सौष्ठव
में दिखाई देता है, अन्यत्र कहीं नही देख पड़ता। सब से बड़ी
है उनसे होने वाले मनोरजन की। बुद्धि की जैसी सूक्ष्म
मिलती हैं दूसरी जगह नहीं मिलतीं। एक प्रकार से सूक्तियों
जीवन का समस्त चमत्कार मिल जाता है। गुरुनारायण जी ने
हिन्दी तथा उर्दू तीनों की सूक्तियॉ सग्रह की हैं तथा कहीं कहीं
का भी सन्निवेश किया है। मुझे विश्वास है कि इनसे उस उ
पूर्ति हो सकेगी जिसके लिए सूक्तियों की रचना की जाती है।

नन्ददुलारे वा



परिडत काशीदीन जी सुकुल

समर्पण

श्रोताओं को भागवती कथा के द्वारा अमृतरस पिलानेवाले
भागवत के मर्मज्ञ, हरिभक्ति-परायण, सुभाषित के
अनन्य प्रेमी, परम भागवत, श्रद्धेय पितामह,

पंडित काशीदीन जी सुकुल;

पूज्यवर !

आपने ही
सर्वप्रथम मुझ मे
इन विचारों का सूत्रपात किया,
अतः यह पुष्पाञ्जलि, जिस में आप ही की
लगाई हुई फुलवाड़ी के फूल हैं, आप के ही कर-
कमलों में सादर समर्पित करने की धृष्टता करता हूँ।

—गुरुनारायण।

विषय-सूची

(१)–साहित्य-श्री

[शुद्ध साहित्यिक भाव तथा कला प्रदर्शित करनेवाली सूक्तियाँ]

(२)—वाक्-वैभव

[चमत्कारपूर्ण आलंकारिक उक्तियाँ]

(३)—भूपतियों का काव्य-वैभव

[भारतीय-भूपति अन्य ऐश्वर्यों के साथ साथ काव्यसाधन में भी सपन्न थे—प्रमाण]

(४)–दो महाकवि

[भारत के सर्वश्रेष्ठ कवि कालिदास और तुलसीदास के संबंध की आख्यायिकाएँ]

(५)–कविर्मनीषी

[अन्य उत्तमोत्तम कवियों के काव्यप्रेम के उदाहरण]

(६)—अन्तिम आलोक

[कवियों के देहावसान-काल की उक्तियाँ]

(७)—विचित्र वार्त्ता

[कल्पित किन्तु रोचक कहानियाँ]

(८)—कुसुम-कुञ्ज

[इस कुज में उन कुसुमो का मधु-सचय है जो किसी विशेष काव्य-वाटिका मे नही किन्तु वन-पुष्पो की भाँति प्रकीर्ण या बिखरे हुए हैं]

साहित्य-श्री

[शुद्ध साहित्यिक भाव तथा कला प्रदर्शित करने वाली सूक्तियाँ]

सुख जाता
। किस
ग

भारत का पहला श्लोक

एक दिन वाल्मीकि ऋषि मध्याह्न-समय तमसा नदी के किनारे जा रहे थे। इतने ही में किसी व्याध ने क्रौञ्च पक्षियों के जोड़े में से एक पक्षी को मार गिराया। इस दुष्कर्म को देख ऋषि को क्रोध उत्पन्न हो गया और भावावेश में उनके मुँह से यह श्लोक निकल पड़ा—

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥

अर्थात्—ऐ बहेलिये! तू बहुत दिनों तक प्रतिष्ठा न पा सकेगा क्योंकि तू ने क्रौञ्चद्वय में से एक पक्षी को निरपराध मार डाला है।

वाल्मीकि के मुँह से इतना निकलते ही उनकी शब्दावली से प्रसन्न होकर ब्रह्मा जी प्रकट हो गये। उन्होंने ऋषि से कहा कि आपकी वाणी सिद्ध हुई। इसलिये आप श्री रामचन्द्र जी का चरित्र बनावें। आपकी बुद्धि अप्रतिम होगी और आप 'आदिकवि' के नाम से प्रसिद्ध होंगे। इस प्रकार ब्रह्मा जी का आदेश पाकर महर्षि वाल्मीकि ने रामायण की रचना की, जिसमें उन्होंने वेद से अतिरिक्त नये-नये छन्द भी रक्खे। भारत की पहली कविता यही है।

* * *

चतुर्थ चरण

रावण श्री सीता जी को चुराकर लंका ले भागा और अपनी अशोकवाटिका में उन्हें रक्खा। तदनन्तर उसने अनेक उपाय किये कि सीता जी उसकी पटरानी बन जायँ, परन्तु उसकी एक न चली। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिये वह सीता जी को समय-समय पर साम, दाम,

दण्ड आदि उपायों से वश में करना चाहता था, परन्तु सीता उसे सदैव फटकार देती थीं। एक बार वह घूमता हुआ फुलवाड़ी में आया और सीता जी से बोला—

जमित्री रम्भोरु त्रिदशवदनग्लानिरधुना ।
तनो रामस्थाता न च युधि पुरः लक्ष्मण सख ॥
ध्रुव यास्यत्युच्चैर्विपदमधुना वानरचमू ।

अर्थात्—हे केले की सी जानवाली सीता! अब देवताओं के चेहरे उदास हो जायेंगे। लक्ष्मण के मित्र राम युद्ध में सामने न टिक सकेंगे। यह भी समझ लो कि वानरों की सेना बहुत बड़ी विपत्ति को प्राप्त होगी।

सीता जी भला कब की चूकनेवाली थीं! इन्होंने झट से चौथा चरण बनाकर पढ़ा—

लघिष्ठेदं षष्ठाक्षरपदविलोपात्पठ पुनः ॥

अर्थात्—उपर्युक्त पंक्तियों के छठे अक्षर के बाद का अक्षर लोप कर फिर से पढ़।

रावण ने जो इस तरह उस श्लोक को पढ़ा तो उसका अर्थ होता था—"इस समय रावण के उदासी छा जायगी। लक्ष्मण के सखा राम युद्ध में अवश्य टिकेंगे और उस समय यह वानरी सेना उच्च-पद को प्राप्त होगी।"

यह वाक्य सुनकर वह लज्जित और क्रुद्ध हो चुपचाप वापस चला गया।

* * *

दाम्पत्य सुख

श्री सीता जी अशोक वाटिका में राम-राम जप रही थीं। एकाएक उनके मन में यह बात आई कि दिन रात मैं अपने आराध्यदेव—राम के ध्यान में लीन रहती हूँ, कहीं ऐसा न हो कि मैं स्वयं राम बन जाऊँ।

यदि कहीं स्त्री से मैं पुरुष हो गई तो हम लोगों का दाम्पत्य सुख जाता रहेगा। इस प्रकार उन्हें चिन्तित देख त्रिजटा ने पूछा कि 'बहन! किस बात की चिन्ता कर रही हो?' सीता जी ने अपनी चिन्ता का कारण बताया तो उसने कहा कि जिस प्रकार अहर्निश राम का ध्यान करने के कारण आपको राम हो जाने की आशंका है उसी प्रकार श्रीरामचन्द्र भी आपके ध्यान में निरत हैं, अतः वे सीता बन जायँगे। तब आपका दाम्पत्य सुख कैसे नष्ट हो सकेगा। इसलिये आप व्यर्थ शोक न करें।

आदि-कवि वाल्मीकि ने सीता जी और त्रिजटा का यह कथोपकथन निम्नलिखित श्लोक द्वारा प्रकट किया है—

सीता—कीटोऽहं भ्रमरी भवत्यति निदिध्यासात् यथाह तथा।
स्यामेवं रघुनन्दनोऽपि त्रिजटे दाम्पत्यसौख्यं गतम्॥
त्रिजटा—शोकं मा वह मैथिलेन्द्रतनये तेनापि योगः कृतः।
सीता सोपि भविष्यतीति सरले तन्मेमतं जानकि॥

* * *

भार से अधिक कष्टप्रद शब्द

महाकवि कालिदास की विद्वत्ता की प्रशंसा सुनकर किसी पण्डित ने उनकी परीक्षा लेनी चाही। वह घर से चल पड़ा और महाकवि के नगर में आ पहुँचा। इधर कालिदास को यह बात मालूम हो गई। उन्होंने भी सोचा कि इसे छकाना चाहिये। अतः वेष बदल कर सिर पर लकड़ियों का एक बड़ा गट्ठर रख ये भी उसी तरफ चले, जिधर वह पण्डित गया था। आगे चलकर इन्हें एक पेड के नीचे बैठे हुए पण्डितजी मिल गये और कालिदास का बोझ देख पूछा—

भारवाह! भराक्रान्त, भारस्त्वां बहु बाधति?

अर्थात्—हे बोझ ढोनेवाले! क्या यह बोझा तुम्हे बहुत दुःख दे रहा है?

इनके मुँह से 'बाधति' निकलते ही महाकवि ने कहा—

यथा 'बाधति' बाधते मां, तथा भारो न बाधते ॥*

यानी, जितना (तुम्हारा) 'बाधति' शब्द मेरे हृदय को पीड़ा पहुँचा रहा है, उतना यह बोझ नहीं। (संस्कृत व्याकरण के अनुसार यहाँ 'बाधति' प्रयोग करना अशुद्ध है। इसकी जगह 'बाधते' होना चाहिए था)।

पूछने पर जब कालिदास ने अपने को महाकवि का नौकर बतलाया, तो ये पण्डितजी मारे शर्म के वहीं से लौट आए और इनका घमंड जाता रहा।

* * *

"विद्या" की महिमा

महाकवि कालिदास पहले बड़े मूर्ख थे, परन्तु इनकी स्त्री विद्यावती बड़ी विदुषी निकलीं। जब ये उनसे मिलीं तो इन्होंने महाकवि से कुछ पूछा। उन्होंने उसका अशुद्ध उत्तर दिया।

अब इन्हें मालूम हुआ कि पति-महाशय निरक्षर-भट्टाचार्य हैं तो मारे क्रोध व लज्जा के इन्होंने महाकवि को महल से नीचे ढकेल दिया। गिरते समय इनकी जीभ कट गई और एक देवी के मन्दिर पर जा गिरे। देवी ने सोचा कि यह सचमुच मेरा बड़ा भक्त है, क्योंकि इसने मुझपर अपनी जीभ तक चढ़ा दी। फिर क्या था, वे प्रकट हो गईं और बोलीं—मैं तुझसे बड़ी प्रसन्न हूँ, वर माँग। इन्होंने अपनी पत्नी विद्या की शिकायत की। मुँह से विद्या निकलते ही देवी ने कहा—'एवमस्तु', क्योंकि देवी ने समझा कि यह विद्या चाहता है। फिर क्या था ये उद्भट विद्वान् हो गए।

---

*पाठान्तर—क्षणं विश्राम्यतां जाल्म स्कंधस्ते यदि बाधति।
न बाधते तथा स्कंध यथा 'बाधति' बाधते ॥

जब कालिदास घर लौटे तब स्त्री ने उनसे पूछा—"अस्ति कश्चित् वाग्विशेषः" ? अर्थात् क्या विद्या का कोई चमत्कार है ? इन्होंने कहा, क्यों नहीं। बातचीत होने पर इनकी विद्वत्ता देख विद्या बड़ी प्रसन्न हुई।

ऐसा कहा जाता है, इन्होंने तीन ग्रन्थ ऐसे बनाये जिनके पहले श्लोक का पहला शब्द इनकी स्त्री के प्रश्न मे उपयुक्त शब्द से ही बना था। देखिये न—

अस्ति से—

अस्त्युत्तरस्या दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः॥

—कुमारसंभव

कश्चित् से—

कश्चित् कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारप्रमत्तः।
शापेनास्तगमितमहिमा वर्षभोग्येन भर्त्तुः॥
यत्तश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु।
स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु॥

—मेघदूत

वाग्विशेष से—

वागर्थाविवसंपृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वती परमेश्वरौ॥

—रघुवंश

* * *

आधे श्लोक में दशावतार

एक बार महाकवि कालिदास काशीस्थ वेदव्यास जी के दर्शन करने रामनगर गये। मन्दिर मे जाकर उन्होंने व्यास जी की प्रतिमा के ऊपर हाथ फेरा और 'तु हि चस्मायते नमः' का पाठ करने लगे। बात यह है कि महर्षि व्यास ने अपनी रचना (श्रीमद्भागवत) में 'तु, हि, च, स्म'

आदि अव्ययों का बहुत प्रयोग किया है। इसीलिये कालिदास उनकी चुटकी ले रहे थे।

दैवयोग से 'तु हि चस्मायते नमः' पढते पढते कालिदास का हाथ व्यास जी की मूर्ति में चिपक गया। अब कालिदास बडे बुरे फँसे, परन्तु उन्होंने ज्यों ही व्यास जी का स्मरण कर अपनी धृष्टता के लिये उनसे क्षमा माँगने का विचार किया त्यों ही महाकवि के मन में यह प्रेरणा हुई कि 'अपराध तो तू ने बहुत बड़ा किया और तुझे दण्ड भी बड़ा कठिन मिलना चाहिये; परन्तु यदि तू एक ही श्लोक में दशावतार का वर्णन कर दे तो तेरा हाथ छूट जाय।'

महाकवि कालिदास के लिये यह कौन सी बड़ी बात थी, उन्हों ने कहा—महाराज आपने एक श्लोक की आज्ञा दी है, परन्तु मैं आधे ही श्लोक में अवतारों का वर्णन किये देता हूँ, सुनिये—

वनजौ वनजौ खर्वं त्रिरामः सकृपोऽकृप ।
कल्याणं मे प्रयच्छंतु ह्यवतारा हरेर्दश ॥

अर्थात्—वन अर्थात् जल में रहनेवाले (मत्स्य, कच्छप), वन में रहनेवाले (वाराह, नृसिंह), वामन, तीनो राम (रामचन्द्र, परशुराम और बलराम) बुद्ध (सकृपः) और कल्कि (अकृपः)—विष्णु के ये दस अवतार मेरा कल्याण करें।

कहना न होगा कि श्लोक समाप्त होते ही कालिदास का हाथ छूट गया।

* * *

तीन प्रश्नों का एक ही उत्तर

कुछ लोगों का कथन है कि महर्षि व्यास ने अपने ग्रन्थों में 'च' अव्यय का बहुत जगह प्रयोग किया है। इसकी चुटकी लेने के लिये कविवर कालिदास ने 'चकारात्मने नमः' कह कर उनकी मूर्ति पर हाथ फेरा। इतने में उनके हाथ चपक गये। कालिदास ने मूर्ति को लक्ष्य

कर कहा कि "महाराज ! मैं किस तरह इस विपत्ति से छुटकारा पाऊँ ?" इतने में मूर्ति से आवाज आई—

इक्षुदण्डं च चन्द्रं च समुद्रं चापि वर्णय ।*

अर्थात्—ईख, चन्द्रमा और समुद्र का वर्णन एक साथ ही कर दो (तो तुम्हारा हाथ छूट जाय। महाकवि ने कहा—

पदमेकं प्रदास्यामि "प्रतिपर्वरसोदयम्" ॥

भावार्थ—मैं एक पद में ही यह किये देता हूँ, लीजिये—"प्रतिपर्व में रस की वृद्धि ।" [ऊँख की प्रत्येक गाँठ (पर्व) के बाद रस या मिठास बढ़ती जाती है, अमावस्या के बाद प्रति दिन चन्द्रमा की कला बढ़ती जाती है और पूर्णमासी तक समुद्र का जल रोज बढ़ता रहता है।]

श्लोकार्द्ध पढ़ते ही कालिदास का हाथ छूट गया।

* * *

कविता की कसौटी

जब प्रसिद्ध संस्कृत कवि बाण मृत्यु-शैया पर पड़े हुए थे तो 'कादम्बरी' को समाप्त करने की चिन्ता उन्हें सतत सताया करती थी। उन्होंने अपने पुत्रों को बुलाया और उनकी प्रतिभा एवं साहित्यिक ज्ञान की परीक्षा करने के लिये एक सूखे पेड़ की ओर इशारा कर उनसे निम्नलिखित प्रश्न किया—

यह सम्मुख की वस्तु क्या है ?

उनके एक पुत्र ने जो ज्योतिषी भी थे, इसका उत्तर यों दिया—

शुष्को वृक्षस्तिष्ठत्यग्रे ।

अब दूसरे पुत्र से कहा गया कि तुम भी अपना उत्तर दो। उन्होंने

---

* पाठान्तर—भारतं चेक्षुदडं च सिन्धुविन्दुं च वर्णय ।

अर्थात्—महाभारत, ईख और सिन्धुविन्दु—चन्द्रमा का वर्णन करो।

बडी ही सरस और सुन्दर शब्दावली मे उत्तर दे कर पिता का मन मुग्ध कर लिया। उन्होंने कहा—

नीरसतरुरिह विलसति पुरतः।

बाण भट्ट ने इसकी मधुरता देख दूसरे पुत्र को ही कादम्बरी के समाप्त करने का भार सौंपा।

*　　*　　*

" लिखत 'सुधाकर' लिखिगा 'राहू' "

सुनते हैं "काव्यप्रकाश" के निर्माता मम्मटाचार्य श्रीहर्ष के मामा थे। भाजे ने काव्यरत्नों के परम पारखी मामा के सामने अपने महाकाव्य की चर्चा की और उनकी महत्वपूर्ण सम्मति जानने की अभिलाषा की। मम्मट ने नैषध को पढा और जब श्रीहर्ष आलोचना सुनने के लिये आये तब उन्होंने कहा कि काव्यप्रकाश के सप्तम उल्लास (दोष प्रकरण) लिखने के पहले यदि यह ग्रन्थ मुझे मिलता तो काव्य-दोषों के उदाहरण ढूँढ निकालने मे मुझे इतना प्रयत्न न करना पडता, क्योंकि काव्य के समग्र दोषों के दृष्टात मुझे इसी एक ग्रन्थ मे मिल गये होते। इस अतर्कित सम्मति से आश्चर्यान्वित होकर जब श्रीहर्ष ने उक्त सम्मति की पुष्टि मे उदाहरण जानना चाहा तो मम्मट ने झट से ग्रन्थ खोल इस श्लोक को पढा—

तव वर्त्मनि वर्त्तता शिवम्।
पुनरस्तुत्वरित समागमः॥
अयि साधय साधयेप्सितम्।
स्मरणीया समये वयं वय॥

नोट—यह पद्य केवल पदच्छेद मे किंचित् भिन्नता कर देने से मगल के स्थान पर अमगलार्थ की सूचना दे रहा है। अर्थ यो हुआ—

तुम्हारा कल्याणदायक मार्ग हट जाय (तव शिव वर्त्म निवर्त्ताम्)। तुम फिर कभी न लौटो (स त्व पुन. मा आगमः)। हे रोग

आमेर-महल और वेदमंत्र

एक समय जयपुर के प्रधान सेनापति ठाकुर हरिसिंह जी ने पण्डित अम्बिकादत्त व्यास (संस्कृत तथा हिन्दी के प्रसिद्ध कवि) को वेद के मंत्र—"सहस्रशीर्षा पुरुष. सहस्राक्ष. सहस्रपात्" की समस्या दी। व्यास जी उसी दिन आमेर का महल देख आये थे। अत. आपने वहीं का दृश्य ला रक्खा और समस्या की पूर्त्ति यों की—

प्रविष्टो राजभवने प्रतिबिम्बैर्न को भवेत्।
सहस्रशीर्षा पुरुष. सहस्राक्षः सहस्रपात्॥

अर्थात्—कौन ऐसा है जो राजभवन में जाकर स्वयं प्रतिबिम्बित नहीं हो जाता? कहाँ तक कहें, शेषनाग, इन्द्र और सूर्य जैसे दीप्तिमान व्यक्ति भी वहाँ जाने पर अपनी कान्ति खो बैठते हैं (आशय यह कि महल ऐसा चमकदार है कि इन शक्तियों का तेज भी उसकी चमक में लुप्त हो जाता है।)

* * *

आर्यसमाज और सनातनधर्म का भेद

कहा जाता है कि एक बार महर्षि दयानन्द सरस्वती और एक सनातनधर्मी महात्मा—शायद श्री स्वामी विशुद्धानन्द से काशी में शास्त्रार्थ हुआ। वाद-विवाद का विषय था 'मूर्त्तिपूजा'। स्वामी दयानन्द जी वेद का निम्न-लिखित निर्देश करते थे—

न तस्य प्रतिमाऽस्ति।

अर्थात्—उस परमात्मा की प्रतिमा नहीं है और न तो उसकी कोई आवश्यकता ही है। स्वामी जी के प्रतिवादी का कहना था—

नतस्य प्रतिमाऽस्ति॥

अर्थात्—जो विनत है उसके लिये प्रतिमा है और उसका होना आवश्यक है। पहले तो श्री स्वामी दयानन्द ने समझा कि हमारे ही

एक श्लोक में कई सूत्र

एक व्यक्ति बहुत दिनों के बाद अपने मित्र से मिलने गए। कुशल समाचार के बाद उनके मित्र ने पूछा—आजकल आपके साहबजादे क्या करते हैं? उस व्यक्ति ने उत्तर में जो श्लोक कहा उसका प्रत्येक शब्द पाणिनि का सूत्र था। यथा—

पक्षिमत्स्यमृगान् हन्ति परिपन्थं[1] च तिष्ठति।
व्रात्येन जीवति अधुना न वशः पूर्ववत्सन॥

अर्थात्—वह चिड़ियों, मछलियों और हिरनों का शिकार करता है, चोरी करता है और निन्दित कर्मों द्वारा अपनी जीविका चलाता है। हम लोगों का कोई वश नहीं है। उसकी दशा पहले जैसी ही अब तक है।

कहना न होगा कि 'पक्षिमत्स्यमृगान् हन्ति, परिपन्थ च तिष्ठति, व्रात्येन जीवति, अधुना, न वशः, पूर्ववत्सन' शब्द व्याकरण के सूत्र हैं।

* * *

कितनी 'कुब्जा' चाहिए

गोपियाँ ऊधव से कहती हैं—

यदि यास्यसि मधुनगरीमिदमुद्धव शुद्धभावमावेद्यम्।
तवगुणविलिखनहेतोः वयमपिकुब्जा किमौदास्यम्॥

अर्थात्—हे ऊधव! यदि तुम मथुरा जाते हो तो कृष्ण जी से शुद्ध भाव से इतना कह देना कि वे एक कुब्जा में जा रमे हैं। यहाँ हम सभी उनके गुण लिखते-लिखते कुब्जा (कुबड़ी) बन गई हैं। इसलिये अब क्यों उदासीन हैं।

यहाँ पर 'कुब्जा' शब्द में चमत्कार है।

---

१ परिपन्थं च तिष्ठति=पारिपान्थिकश्चौरः।

रामायण में एक जगह और भी ऐसा ही हुआ है। देखिए—

"संकर-चाप जहाज, सागर रघुवर-बाहुबल।
बूड़े सकल समाज, चढ़े जु प्रथमहिं मोहबस।"

इस सोरठे के विषय में कहा जाता है कि जब गोसाईं जी 'बूड़े सकल समाज' इतना लिख गये तो उनकी क़लम रुक गई। वे आगे कुछ न लिख सके, क्योंकि 'सकल समाज' में तो विश्वामित्र, जनक और रामचन्द्र जी भी आ जाते। उनकी यह विपत्ति देख महावीर जी ने 'चढे जु प्रथमहिं मोह-बस'—बनाकर सोरठा समाप्त कर दिया।

* * *

बार-बार के अर्थ

यशोदा बार-बार यह भाखै।
है ब्रज में कोउ हितू हमारो चलत गोपालहि राखै॥

यह पद्य तानसेन ने अकबर के दरबार में गाया था। इसे सुनकर बादशाह ने तानसेन से पूछा कि इस 'बार बार' के क्या माने हैं। तानसेन ने उत्तर दिया—हुज़ूर! यशोदा लगातार यही कहती थी कि ·· ·· फ़ैजी भी वहीं बैठे थे। उन्हों ने कहा—नहीं सरकार, तानसेन को इसका अर्थ नहीं मालूम। 'बार बार भाखना' के मानी यह कि रोयें रोयें से यशोदा कहती थीं कि कोई मेरे गोपाल को रख ले।

अब अकबर ने राजा टोडरमल से पूछा कि आपकी क्या राय है? इन्होंने कहा—मेरी निगाह में तो ये दोनों ही अर्थ ठीक नहीं, यदि बार-बार का अर्थ घाट-घाट* लगाया जाय तो अर्थ ठीक चिपके।

इस प्रकार अपने दरबार के नव रत्नों के मुँह से भिन्न-भिन्न प्रकार के अर्थ सुनकर बादशाह अकबर बहुत प्रसन्न हुए।

---

* बार=पानी, बार=रोकना। बार-बार=पानी की रोक=घाट।

शब्द दोहरा कर ये (प्रतिवादी महाशय) हमें चिढ़ाते हैं; परन्तु जब उन्होंने अपने प्रतिवादी के 'नतस्य' शब्द के उच्चारण पर ध्यान दिया तो वे उनकी विद्वत्ता के कायल हो गए (जो नत है, अर्थात् भक्त के लिये प्रतिमा है। यह स्वामी विशुद्धानन्द जी का अर्थ था)।

* * *

हनुमानजी ने कविता सुधारी

कहते हैं, रामायण बनाने में गोसाईं तुलसीदास जी को हनुमान् जी ने कई स्थानों पर मदद पहुँचाई है। बालकांड मे रंगभूमि वाले स्थल पर सीता जी की छवि का वर्णन करते समय तुलसीदास जी भूल से गये थे कि सीता जी उनकी माता हैं और उनके वर्णन मे कोई ऐसी बात न आनी चाहिये जिससे किसी प्रकार मन में विकार उत्पन्न हो सके। तुलसीदास जी धुन मे आकर सीता जी के लिये एक से एक बढ़कर उपमाएँ देते चले गये। यहाँ तक कि किसी साधारण युवती के वर्णन की तरह वे सीता जी के शरीर और उनकी साड़ी का वर्णन करने जा रहे थे, यथा—

सोह नवल तनु सुन्दर सारी।

हनुमान् जी भला ऐसी गुस्ताखी कब होने देते। लाचार हो तुलसीदास जी को यहीं रुक जाना पड़ा। कहा जाता है कि नायिका-वर्णन के मे भाव को दूर करने के लिये ही गोसाईं जी ने इसके आगे—

जगत-जननि अतुलित छवि भारी—

चौपाई लिखकर वर्णन समाप्त कर दिया। 'जगत् की माता' शब्द वे इसीलिये लाये कि सीता जी के प्रति मातृवत् श्रद्धा होने लगे और किसी प्रकार के कुभाव का स्थान ही न रहे। यह कार्य हनुमान् जी की ही प्रेरणा से हुआ।

* * *

४१—वेदान्त-रहस्य

(लेखक—श्रीयुत हीरेन्द्रनाथ दत्त एम० ए० बी० एल०।)

इस ग्रन्थ में परब्रह्म का स्वरूप, ब्रह्म और जगत्, जीव और ब्रह्म, ब्रह्मपुर, माया और प्रकृति, भूमावाद, मूर्त और अमूर्त, वेद और वेदान्त, और वेदान्तिक समन्वय, इत्यादि अनेक आध्यात्मिक विषयों का उपनिषद्, गीता, वेदान्तसूत्र और अन्य शास्त्रो के आधार पर ऐसा सरस और सरल विवेचन किया गया है कि पाठक वेदान्त के समान अत्यन्त दुर्गम विषय को भी अत्यन्त सुगमता के साथ हृदयगम कर लेते हैं। ग्रन्थ के बीच बीच में पाश्चात्य दर्शन-शास्त्रो का भी मत दिया गया है। हिन्दी भाषा मे आत्मविद्या और वेदान्त पर यह ग्रन्थ बहुत ही सुन्दर निकला है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य सिर्फ १॥) रुपया है।

पुस्तकें मिलने का पता—

तरुण-भारत-ग्रन्थावली, कार्यालय

लक्ष्मी-आर्ट-प्रेस,

दारागञ्ज, प्रयाग।

सोया-मेथी

दिल्ली शहर में एक कुंजड़िन थी। एक दिन वह सब्ज रंग की धोती पहने हुए अपनी दूकान पर बैठी थी। उधर से एक मनचले कवि जी आ पहुँचे। कुंजड़िन की छटा देख वे बोले—

ऊँची दुकान कुँजड़िन क्या सब्ज रंग में थी[1]।

कुंजडिन भी कवि थी। अत 'मेथी' शब्द के श्लेष को समझ कर उसने तुरन्त उत्तर दिया—

सोया जो होता पास जो चाहती सो लेती॥

इस वाक्य में 'सोया', शब्द में श्लेष है। यथा—सोया=(१) सा॰ (२) सोना।

* * *

भर्त्ता-भामिनी

बैंगन कर ले भामिनी, कहत चितै घनश्याम।
भर्त्ता तोहि बनाइहौं, जो चलिहौ मम धाम॥

इस दोहे का साधारण अर्थ तो यों हुआ कि—

एक स्त्री ने हाथ में काले काले बैंगन लेकर कहा—अगर तुम मेरे यहाँ चलोगे तो मैं तुम्हारा भर्त्ता बनाकर खाऊँगी।

परन्तु इसका एक और भी चमत्कार-पूर्ण अर्थ यह होगा—

घनश्याम—कृष्ण की ओर देखकर एक स्त्री ने कहा कि आप मुझे भी अपना मित्र (वय+गण हमउम्र, दोस्त) बना लीजिये। यदि आप मेरे घर चलेंगे तो मैं आपको अपना भर्त्ता—पति स्वीकार करूँगी।

* * *

ब्रज-भाषा और विदेशी कवि

कहते हैं फारस देश में एक कवि था, वह प्राचीन ढंग की कविता

---

१ मेथी=(१) मेथी का साग (२) मैं थी।

'कल' की करामात

भारतेन्दु बा० हरिश्चन्द्र बडे उदारपुरुष थे। कितने ही लोगो को पुरस्कार देकर इन्होंने कवि और सुलेखक बना दिया। कहते हैं, महा-महोपाध्याय पडित सुधाकर द्विवेदी (काशीनिवासी) को उन्होंने निम्न-लिखित एक दोहे पर सौ रुपये और अँग्रेजी रीति पर अपनी जन्मपत्री बनवा कर पांच सौ रुपये दिये थे—

राजघाट पर बँधत पुल, जहँ 'कुलीन' की ढेर।
आज गये, 'कल' देखि के, आजहि लौटे फेर॥

इस दोहे मे कुलीन शब्द द्वयर्थक है—कुलीन (१) अच्छे अच्छे खान्दान वाले—दर्शकगण। (२) कुली लोग। परन्तु इस दोहे मे सब से बडी विशेषता 'कल' शब्द की है। इसके अर्थ पर गौर कीजिए। कल=(१) मशीन पुर्जे। (२) कल या आगामी दिन।

* * *

शंकर और त्रिशूल

पडित नाथूराम शर्मा 'शकर' हरदुआगज (अलीगढ) के विख्यात [र]
[र]वि हो गये हैं। कहा जाता है कि कानपुर से प्रकाशित होनेवाले किसी
मे उनकी कवितायें प्राय निकला करती थी और उन पर शकर जी
उचित पुरस्कार भी दिया जाता था। कुछ दिनो बाद उस पत्र मे
[का]नपुर के ही रहनेवाले श्री 'त्रिशूल' जी की कवितायें छपने लगी और
[पुर]स्कार उनको दिया जाने लगा। यह देख शकर जी ने उस पत्र मे अपनी
[कवि]तायें भेजना बन्द कर दिया। बहुत दिनो तक जब उक्त पत्र के
[सम्पा]दक को शकर जी की कोई कविता प्रकाशनार्थ न मिली तो सम्पा-
[दक]ने शकर जी को पत्र लिखा कि आपने हमारे पत्र में कवितायें
[भेजन]ा बन्द क्यो कर दिया? शकर जी ने इसके उत्तर मे सम्पादक जी
[को य]ह दोहा लिख भेजा।

इसमें भी प्रायः वही बात है परन्तु कहने का ढँग और है। ख्वाजा साहब की यह भावमयी आलोचना निस्सन्देह बड़ी उत्तम हुई है।

* * *

मुहावरे की बात

लखनऊ में एक दिन कुछ साहित्य-प्रेमियों ने एकत्र होकर मीर तकी 'मीर' से भेंट करनी चाही। वे मीर साहब के घर गये। बाहर से पुकारा। लौंडी ने दरवाजा खोला। हाल पूछकर वह भीतर गई। थोड़ी देर में मीर साहब आये तो सामयिक शिष्टाचार के बाद आगन्तुकों ने कुछ शेर सुनने की इच्छा प्रकट की। मीर साहब ने पहले तो कुछ टाल-मटोल की पर बहुत आग्रह किये जाने पर स्पष्ट कह दिया कि मेरे शेर आपकी समझ में नहीं आ सकते। इस उत्तर से खिन्न होने पर भी उन लोगों ने फिर आग्रह किया। मीर साहब ने इनकार किया। फिर उन लोगों ने कहा—जनाब! हम लोग 'अनवारी' और 'खाकानी' की कविताएँ समझते हैं—आप ही की न समझेंगे! मीर साहब ने कहा, यह ठीक है, पर उनकी कुंजियाँ, टीका-टिप्पणियाँ और आलोचनाएँ प्रत्यालोचनाएँ भी तो बहुत सी हैं। और मेरी कविता के लिये तो उर्दू के मुहावरों का ज्ञान होना आवश्यक है। आप उनसे वञ्चित हैं। यह कहकर मीर साहब ने निम्नांकित शेर पढ़ा—

इश्क़ बुरे ही ख़्याल पड़ा है, चैन गया आराम गया।
दिल का जाना ठहर गया है, सुबह गया या शाम गया॥

फिर कहने लगे—आप इसमें कहेंगे कि खयाल शब्द को 'ख़्याल' क्यों कहा। इस विषय में इतना कह देना पर्याप्त होगा कि मुहावरा ऐसा ही है।

* * *

शंकर कविता क्या करे क्या पावे उपहार ।
पुरस्कार सब ले गया शंकर का हथियार ॥*

* * *

वासित साहब का फ़ैसला

एक दिन मीर तक़ी 'मीर' और मिर्जा मुहम्मद रफी 'सौदा' की रचनाओं पर दो आदमियों में झगड़ा हो गया। दोनों ख्वाजा वासित के शिष्य थे। अतः वासित के ही पास जाकर प्रार्थना की कि आप फैसला कर दीजिये। उस्ताद ने कहा—दोनों प्रतिभाशाली कवि हैं। फर्क इतना है कि मीर साहब का कलाम 'आह' है और मिर्ज़ा साहब का 'वाह'। उदाहरण स्वरूप उन्होंने मीर का निम्न लिखित शेर पढ़ा—

सिहाने मीर के आहिस्ता बोलो।
अभी टुक रोते-रोते सो गया है ॥

अर्थात्—यदि मीर साहब जग पड़ेंगे और अपनी शायरी करने लगेंगे तो फिर उनका रोना शुरू हो जायगा। इसलिये उन्हें थोड़ा सो लेने दो। आशय यह कि मीर का "विरह-वर्णन" निराला है।

पश्चात् मिर्जा का शेर पढ़ा—

सौदा की जो बाली[1] पै गया शोरे-क़यामत[2]।
खुद्दामे-अदब[3] बोले अभी आँख लगी है ॥

---

*शंकर का हथियार=त्रिशूल। यह संकेत "त्रिशूल" कवि की ओर था।

१ बाली=सिरहाना, तकिया।
२ शोरे-क़यामत=प्रलय का आर्त्तनाद।
३ खुद्दामे-अदब=सभ्यता के उपासक, विद्वान्।

अर्थात्—आँधी, पहाड आदि मे यदि आग, पानी, पृथ्वी और हवा ये चार तत्व पाये जाते हैं, तो आज वे निरर्थक हो जायँगे। मेरी शान के आगे उनकी एक न चल सकेगी।

इस पर शाह नसीर की ओर से यह आक्षेप हुआ कि पत्थर मे आग की गति का क्या प्रमाण है। जौक़ ने कहा—जब पहाड़ मे बढने के कारण गति है तो उसके भीतर की अग्नि मे भी गति होनी चाहिये। विरोधी ने पत्थर मे अग्नि होने का प्रमाण माँगा तो जौक़ ने फारसी का निम्नलिखित शेर सुनाया—

हर संग मे शरार है तेरे ज़हूर का।
मूसा नहीं कि सैर करूं कोह तूर का॥

अर्थात्—हरएक पत्थर मे परमात्मा के जलवे की चिनगारी दिखाई पड़ती है। मैं हजरत मूसा नहीं हूँ जो आपको प्रमाण देने के लिये 'तूर पहाड़' की सैर करूँ।*

इस विवाद से लोगों का बड़ा मनोरंजन हुआ। जौक़ उस दिन से पुराने कवियों के काव्य-ग्रन्थो को और भी ध्यान से पढने लगे।

* * *

खालिकबारी का मिसरा

महाकवि गालिब को कौन नही जानता। आप उर्दू शायरी के जाज्वल्यमान कविरत्नो में एक हो गये हैं। कहते हैं मौलवी फजलहक इनके दिली दोस्तों मे से थे। उनकी आदत थी कि जब कोई घनिष्ठ मित्र उनसे मिलने आता तो वे खालिकबारी का यह मिसरा—

---

* कहा जाता है कि हज़रतमूसा को एक वार पहाडों पर आग की ज़रूरत पड़ी। तब तक उन्हें 'कोह तूर' पर आग की चिनगारियाँ देख पड़ीं, परन्तु ज्योंही वे उस ओर बढ़े, आवाज़ आई 'तू यहाँ मत आ। यह आग नहीं है जिसके लिये तू आ रहा है। यह खुदा का जलवा (ईश्वर की ज्योति) है।'

दूर की सूझ

एक दिन 'इशा' जुरअत के यहाँ गये। वे उस वक्त कुछ सोच रहे थे। इन्होंने पूछा—क्यों जनाब! क्या सोच रहे हैं? जुरअत ने जवाब दिया—'एक मिसरे की पूर्त्ति कर रहा हूँ।' इशा ने कहा—मिसरा पढ़ो हम पूरा कर देंगे। उन्होंने जवाब दिया कि पूरा होने पर ही सुनाऊँगा। जब इशा ने न माना और मिसरा सुना देने का हठ किया तो जुरअत ने सुना दिया। मिसरा यों था—

उस जुल्फ पै फबती शबे दैजूर की सूझी।

अर्थात्—उसकी काली जुल्फों पर अँधेरी रात भी शर्माती थी।

इशा ने उसकी पूर्त्ति यों की—

अंधे को अंधेरे में बड़ी दूर की सूझी॥

इसे सुनना था कि जुरअत खिलखिला कर हँस पड़े। जुरअत अंधे थे। इसमें उनकी चुटकी ली गई थी।

* * *

पत्थर में आग

एक दिन शाह नसीर ने एक गजल पढ़ी जिसकी तरह थी—आतिशो आबो खाको बाद। उन्होंने कहा—इस जमीन पर जो चलेगा उसे मैं भी उस्ताद मानूँगा। जौक़ ने दूसरे मशायरे में उस तरह पर एक गजल पढ़ी। शाह साहब ने उस पर बहुत से तर्क-वितर्क किये, परन्तु जौक़ ने प्रमाण दे देकर अपना पक्ष बड़ी ख़ूबी से समर्थन किया। जौक ने उसी छन्द और काफिये में एक गजल और लिखी जिसका पहला छन्द यह है—

सरसरो कोह में हों गर आतिशो आबो ख़ाको बाद।
आज न चल सकेंगे पर आतिशो आबो ख़ाको बाद॥

अधखुली आँख

एक दिन नासिख किसी सौदागर की कोठी मे गए। उसका लडका जो बहुत सुन्दर था सामने लेटा हुआ सो रहा था। उसकी आँखें अधखुली थीं जिन्हे देख ये मुग्ध हो गए। मुँह से आधा मिसरा निकल पडा—

है चश्म नीम बाज़ अजब ख्वाबे नाज़ है।

परन्तु दूसरा मिसरा बैठता न था। घर आने पर भी ये उसी की चिन्ता मे लगे रहे। इनके एक शागिर्द वजीर मिलने आये। चुप्पी का कारण जानने पर उन्होंने दूसरा मिसरा लगा दिया, जिससे ये बडे खुश हुए। इस तरह पूरा शेर यों हुआ—

है चश्म नीम बाज़ अजब ख्वाबे नाज़ है।
फितना तो सो रहा है दरे फितना बाज है॥

अर्थात्—(प्रियतम की) आधी आँख खुली है। वे अजीब अन्दाज से सो रहे हैं। यद्यपि आशिक सोते हैं, परन्तु उन्होंने मन को आशिक कर लेनेवाला दरवाजा (दरे) आँख खोल रक्खा है।

* * *

मन्दिर अच्छा या मस्जिद

'नसीम बडे प्रसन्नचित्त और हाजिरजवाब थे। एक बार किसी मशायरे में लखनऊ के सब मशहूर मशहूर शायर मौजूद थे। मशायरा शुरू होने मे जरा सी देर थी। शेख नासिख ने नसीम की ओर आकर्षित हो कर कहा—पडित जी देखिये एक मिसरा कहा है, दूसरा मिसरा नहीं उठता—

शेख ने मसजिद बना मिसमार बुतखाना किया।

अर्थात्—शेख ने मस्जिद बनाकर मन्दिर को हटवा दिया।

वया बिरादर आब रे भाई ।

पढा करते थे। एक दिन गालिब उनसे मिलने गये। उन्होंने वही मिसरा कह कर इन्हे बैठाया। इतने मे मौलवी साहब की वेश्या भी दूसरी दालान से निकल आई। इन्होंने कहा—हाँ साहब ! अब वह दूसरा मिसरा भी फरमा दीजिये—

ब नशीं मादर बैऽ री माई ॥

इसे सुनते ही वे झेप गए।

* * *

हार-स्वीकार

'नासिख' एक दिन प्रयाग के किसी मुशायरे मे 'शामिल' हुए। वहाँ उन्होंने जो गजल पढी उसका मतला था—

दिल अब महू तरसा हुआ चाहता है।
य' काबा कलीसा हुआ चाहता है ॥

अर्थात्—अब मेरा दिल यहूदी के लडके (माशूक) मे लिप्त होता जाता है। मालूम होता है मस्जिद गिर्जाघर बनेगी—माशूक़ के पीछे मुझे भी यहूदी मत स्वीकार करके गिर्जाघर जाना होगा।

एक भोले-भाले लडके ने भी उसी तरह पर अपनी गजल पढी जिसका पहला मतला यह था—

दिल उस बुत पै शैदा हुआ चाहता है।
ख़ुदा जाने अब क्या हुआ चाहता है ॥

महफिल मे धूम मच गई। सब वाह वाह करने लगे। नासिख़ बडे न्यायप्रिय थे। इन्होंने भी लड़के की पीठ ठोकी और कहा—तुम्हारा मतला मतलों मे सूर्य है। मैं अपना पहला मिसरा ग़ज़ल मे से निकाल डालूगा।

* * *

वाक्-वैभव

[चमत्कारपूण आलंकारिक उक्तियाँ]

नासिख़ के मुँह से यह मिसरा निकलना था कि 'नसीम' ने तत्काल दूसरा कह दिया—

तब तो यक सूरत भी थी अब साफ वीराना किया ।

अर्थात्—जब मन्दिर था तब तो वहाँ एक सूरत (मूर्त्ति) भी थी और अब साफ उजाड़ हो गया !

यह सुनना था कि सारी मजलिस चहचहा उठी । लोग फड़क उठे । नासिख ने कविता की आड मे मजहबी चोट की थी, लेकिन नसीम ने उन्हें ठढा कर दिया ।

* * *

तस्वीर क्यों नहीं खिंचवाई

उर्दू के कवियो की एक बार गोष्ठी हुई । कवि-सम्मेलन में यह समस्या रक्खी गई—

इस लिये तस्वीर जानाँ हमने खिंचवाई नहीं ।

इस समस्या को एक कवि ने यों पूरा किया—

एक से जब दो हुए तब लुत्फ़ एकताई नहीं ।
इस लिये तस्वीर जानाँ हमने खिंचवाई नहीं ।।

इस पर मौलाना आसी ने अपनी पूर्त्ति सुनाई—



दाम माँगा था मुसव्विर* पास में पाई नहीं ।
इस लिये तसवीर जानाँ हमने खिंचवाई नहीं ।।

सुनते ही शायरों मे कहकहा मच गया ।

---

* मुसव्विर = फोटो खींचनेवाला । तस्वीर बनाने वाला ।

चमत्कारपूर्ण उक्तियाँ

मुरहासाधुनिहन्ता वकव्राधी स्वसुरगणः कशायी ।
अवतु[1] सदा तव पुत्रम् सत्यानाशी क्लेशकुलजः ॥

यह श्लोक देखने में गालियों से भरा हुआ मालूम होता है, क्योंकि मुरहा, साधू को मारनेवाला, कसाई, सत्यानाशी, आदि शब्द इसमें आये हैं। परन्तु वास्तव में ये शब्द भगवान् विष्णु के विशेषण हैं और इनके द्वारा उनकी स्तुति की गई है। यथा—

मुरहा = मुर नामक दैत्य को मारनेवाले ।
ऽसाधुनिहन्ता = असाधु (दुष्टों) को मारनेवाले ।
वकवाधी = वकासुर का वध करनेवाले ।
स्वसुरगण = अपने हैं देवतालोग जिसके—देवताओं के प्रिय ।
कशायी = जल में शयन करनेवाले (के—जले—शेते इति कशायी ।)

* * *

(२)

प्रातः स्नायी नरकं याति, माघ स्नायी विशेषतः ।
परस्त्री कठ लग्नो यः, तस्य मुक्तिर्न संशयः ॥

अर्थ हुआ—प्रातःकाल स्नान करनेवाला नरक को जाता है और माघ मास में प्रातःस्नान करनेवाला (व्यक्ति) विशेष कर (नरक का अधिकारी होता है)। यदि कोई दूसरे की स्त्री को अपने गले लगाता है (पर-स्त्री-गामी है) तो उसकी मुक्ति हो जाने में कोई सन्देह नहीं।

---

१ अवतु = कल्याण करे ।

(४)

तमाखुपत्रं राजेन्द्र ! भज माऽज्ञानदायकम् ।

इस श्लोकार्द्ध के अन्वय करने से एक दूसरे के विपरीत दो अर्थ निकाले जा सकते हैं, यथाः—

अर्थ (१)—हे राजेन्द्र ! तमाखू का सेवन मत करो (तमाखुपत्र मा भज) क्योंकि वह अज्ञान का देनेवाला है (अज्ञानदायकम्)।

अर्थ (२)—हे राजेन्द्र ! तमाखू का सेवन करो (तमाखुपत्र भज)। तमाखू मा—लक्ष्मी और ज्ञान की देनेवाली है (मा-ज्ञानदायकम्)।

* * *

(५)

हिन्दी मे भी इस प्रकार की चमत्कारपूर्ण वस्तुओ का अभाव नहीं है, यथा—

हताराम कपि ने जबहि, हरखी जनकसुताहु ।
राक्षसगण रोवत फिरहिं, हा हाराम हताहु ॥

इसमे शब्दो की विचित्रता पाई जाती है। सुनने मे तो विरुद्ध अर्थ प्रतीत होता है कि "कपि (हनुमान्) ने राम जी को हता (मारा)। इस कारण सीता जी को हर्ष हुआ और राक्षसगण रोते फिरते हैं कि हाय हाय राम जी मारे गए।" परन्तु यथार्थ मे ऐसा नहीं है, बल्कि शुद्ध अर्थ यों होगा कि हनुमान् जी ने हताराम (हत+आराम) अर्थात् बाग—अशोकवाटिका—को ध्वंस किया। इस कारण सीता जी हर्षित हुई और राक्षसगण रोते फिरते हैं कि हा हाराम हता (हा हा+आराम+हता) हाय हाय बागीचा नष्ट हो गया।

(६)

दुइ बनचर, दुइ रैनिचर; चारि विप्र, दुइ भूप ।
जो निसिदिन सुमिरन करै; कीरति बढ़ै अनूप ॥

परन्तु नहीं, थोड़ा सा ध्यान देकर पढ़ने से इसका अर्थ स्पष्ट हो जाता है और वह यों है—

प्रातःकाल स्नान करनेवाला मनुष्य (नर) स्वर्ग (क) को जाता है (और) माघ मास में प्रातः स्नान करनेवाला (मनुष्य) विशेष कर स्वर्ग जाता है। तुलसी (परस्त्री)* की बनी माला को गले में पहनने वालों की मुक्ति में कोई सन्देह नहीं।

* * *

(२)

केशवं पतितं दृष्ट्वा द्रोणो हर्षमुपागतः।
रुदन्ति कौरवाः सर्वे हा हा केशव केशव॥

इस श्लोक का अर्थ देखने में यह प्रतीत होता है—केशव (कृष्ण जी) को गिरा हुआ देख द्रोण प्रसन्नता को प्राप्त हुए। सब कौरव "हा हा केशव केशव" कह कर रोते हैं।

परन्तु यह अर्थ ठीक नहीं है, क्योंकि कृष्ण जी लड़ाई करते समय युद्ध-स्थल में नहीं मारे गये और उनकी मृत्यु हो जाने पर कौरव लोग (जो उनके विरुद्ध लड़ रहे थे) रो कैसे सकते हैं। उन्हें तो प्रसन्न होना चाहिये था। इस लिये यदि श्लोक का अर्थ यों किया जाय तो अधिक न्यायसंगत हो :—

जल में (के) लाश को (शव) बहते देख स्यार (द्रोण) हर्ष को प्राप्त हुआ। सब गृद्ध (कौरवाः) रो रो कर कहते हैं कि "जल में (के) लाश है (शव), जल में (के) लाश है (शव)।"

---

* तुलसी जी वास्तव में 'वृन्द' नामक दैत्य की स्त्री थीं (इसीलिये तुलसी जी का 'वृन्दा' भी नाम है)। वृन्दा विष्णु-परायणा थीं। अतः भगवान् ने इन्हें अपनाया। तब से तुलसी जी 'परस्त्री' कहलाती हैं।

अङ्क १.२,३,४.५,६, आदि के पढ़ने से यह नामावली निकलेगी—

रमापति गौरीपती राधापति

नोट—इस श्लोक में देवी-देवताओं के नाम लेकर उनकी प्रार्थना की गई है।

* * *

(३)

थ	रिश	शो	ग	ज	उ	छिद्	ह्य
ना	वा	त्री	णा	न	मा	ि	व
ता	स्वा	वि	धि	व	सू	रा	न्तु
सी	मी	सा	प.	प	नु	सु	व

यह श्लोक भी ऊपर जैसा ही है। पढ़ने का क्रम भी वही है। उस से पढ़ने पर श्लोक या होगा—

सीतानाथगिरिशदास्वामी सावित्रीशो गणाधिप।
पवनज उमासूनु: सुरारिच्छिद् ह्यवन्तु व ॥

* * *

(४)

हिन्दी में भी इसके उदाहरण देखिए—

मासरा मोह सजे बन बीन नवीन बजे सहसो ससमा।
सार लतान बनावत सारि रिसात वनादन तालरमा ॥
मानवही रहि मोरद मोद दमोदर मोहि रही वनमा।
माल बनी बल केशवदास सदावश केल बनी बलमा ॥

इस सवैया के प्रत्येक पद को चाहे सीधा (शुरू से) पढ़िये चाहे उलटा (अन्त से)। अर्थ में कोई भेद न पड़ेगा।

* * *

अर्थात्‌ः—दो वनचर—अंगद और हनुमान्, दो राक्षस—विभीषण और प्रह्लाद, चार विप्र—सनक, सनन्दन, सनातन सनत्कुमार, और दो राजे—दशरथ और जनक इनको जो रात-दिन स्मरण करता है उसकी कीर्त्ति बढती है।

* * *

लोम-विलोम तथा उच्चारण-सम्बन्धी कौशल

(१)

लंबाधरो रुग्नयलंब नासे।
त्वं याहि याहि क्षरमा गताज्ञा॥
ज्ञाता गमा रक्ष हि याहि या त्वं।
सेना बलं यत्र रुरोध बालं॥

यह ऐसा श्लोक है जिसे प्रारम्भ से और अन्त से—चाहे जिधर से पढ़िये वही शब्दावली निकलेगी और अर्थ में कोई भेद न होगा।

* * *

(२)

२	३	६					
ति	गौ	ति	ग	ति	वा	ति.	त्वां
प	री	प	न	प	नी	प	पा
मा	प	धा	प	र	प	धा	तु
र	ती	रा	ती	सु	ती	वि	ते
१	४	५					

इस श्लोक में विचित्रता यह है कि इसे नीचे (नं० १) से पढ़ना प्रारम्भ करते हैं और ऊपर (नं० २) तक आकर फिर दूसरी लाइन में ऊपर की ओर (नं० ३) से नीचे (नं० ४) तक पढ़ते चले जाते हैं। पढ़ने का यह ढग अन्तिम पंक्ति तक चालू रहेगा।

हिरन की सी आँख वाली स्त्रियों के मस्तक पर क्या शोभा देता है ? अभागिनी कौन है ? चन्द्रमा शिव के कहाँ है ? हास्यास्पद क्या है ? इन बातों को कहिये,

इन चारों प्रश्नों के उत्तर श्लोक के चौथे चरण—'सिन्दूरविन्दु-र्विधवाललाटे' में हमें प्राप्त हो जायगा। यथा—

पहले प्रश्न का उत्तर=सिन्दूरविन्दु।

दूसरे प्रश्न का उत्तर=विधवा।

तीसरे प्रश्न उत्तर=मस्तक पर।

चौथे प्रश्न का उत्तर=विधवा की माँग में सेंदुर।

* * *

(४)

कि जीवनं कं दमयन्त्यवाप ?
कीदृग्तमः किं न विकारमेति
शीतापहं किं द्विजता निहन्ति ?
शिशोर्वचः किं जननीकुतूहलम्

जीवन क्या है ? दमयन्ती किसे चाहती थी ? अँधेरा कैसा होता है ? किसमें विकार नहीं आता ? ठढक को दूर करनेवाली क्या वस्तु है ? ब्राह्मणता का नाश क्या चीज करती है ? बच्चे की बात कैसी होती है ?

इन सब प्रश्नों के उत्तर 'जननीकुतूहलम्' शब्द में छिपे हैं। यथा—

पहले प्रश्न का उत्तर='जननीकुतूहलम्' का पहिला, सातवाँ, आठवाँ अक्षर=जलम्—जल।

दूसरे प्रश्न का उत्तर=जननीकुतूहलम् का दूसरा, सातवाँ, आठवाँ अक्षर=नलम्—राजा नल को।

तीसरे प्रश्न का उत्तर=जननीकुतूहलम् का तीसरा, सातवाँ, आठवाँ अक्षर=नीलम्—काला।

त्रिपुररिपु—महादेव ने किसे मारा ? कर्ण का मारनेवाला कौन है नदी का किनारा कौन तोडता है ? कौन परस्त्री में रत है ? समर—लड़ा में कोन मजबूत होता है ? स्तनों की शोभा क्या है ? कुसगति से व का क्या होता है ?

उत्तर—मानपूजापहार. । यथा—

पहले प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहार का पहला और सातवं अक्षर=मार.—कामदेव ।

दूसरे प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहार. का दूसरा और सातवं अक्षर=नर—अर्जुन ।

तीसरे प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहार का तीसरा और सातवं अक्षर=पूर —प्रवाह ।

चौथे प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहार का चौथा और सातवं अक्षर=जार—पराई स्त्री से प्रेम करनेवाला पुरुष ।

पाँचवे प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहार का पाँचवाँ और सातवं अक्षर=पर —दुश्मन ।

छठे प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहार. का छठा और सातवं अक्षर=हार —हार ।

सातवे प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहार· (समूचा शब्द)=आदर भाव में कमी ।

* * *

(२)

किं भाति भाले मृगलोचनानाम् ?
का दुर्भगा, कुत्र शिवे शशांक. ?
हास्यास्पदं किं ? कथनीयमत्र
सिन्दूरविन्दुर्विधवाललाटे ।

हिरन की सी आँख वाली स्त्रियों के मस्तक पर क्या शोभा देता है ? अभागिनी कौन है ? चन्द्रमा शिव के कहाँ है ? हास्यास्पद क्या है ? इन बातों को कहिये,

इन चारों प्रश्नों के उत्तर श्लोक के चौथे चरण—'सिन्दूरविन्दु-विधवाललाटे' में हमें प्राप्त हो जायगा। यथा—

पहले प्रश्न का उत्तर = सिन्दूरविन्दु ।
दूसरे प्रश्न का उत्तर = विधवा ।
तीसरे प्रश्न उत्तर = मस्तक पर ।
चौथे प्रश्न का उत्तर = विधवा की माँग में सेंदुर ।

* * *

(४)

किं जीवनं कं दमयन्त्यवाप ?
कीदृग्तमः किं न विकारमेति
शीतापहं किं द्विजतां निहन्ति ?
शिशोर्वचः किं जननीकुतूहलम्

जीवन क्या है ? दमयन्ती किसे चाहती थी ? अँधेरा कैसा होता है ? किसमें विकार नहीं आता ? ठढक को दूर करनेवाली क्या वस्तु है ? ब्राह्मणता का नाश क्या चीज करती है ? बच्चे की बात कैसी होती है ?

इन सब प्रश्नों के उत्तर 'जननीकुतूहलम्' शब्द में छिपे हैं। यथा—

पहले प्रश्न का उत्तर = 'जननीकुतूहलम्' का पहिला, सातवाँ, आठवाँ अक्षर = जलम्—जल ।

दूसरे प्रश्न का उत्तर = जननीकुतूहलम् का दूसरा, सातवाँ, आठवाँ अक्षर = नलम्—राजा नल को ।

तीसरे प्रश्न का उत्तर = जननीकुतूहलम् का तीसरा, सातवाँ, आठवाँ अक्षर = नीलम्—काला ।

त्रिपुररिपु—महादेव ने किसे मारा ? कर्ण का मारनेवाला कौन है ? नदी का किनारा कौन तोडता है ? कौन परस्त्री मे रत है ? समर—लड़ाई मे कौन सन्नद्ध होता है ? स्तनो की शोभा क्या है ? कुसगति मे मान का क्या होना है ?

उत्तर—मानपूजापहार. । यथा—

पहले प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहार का पहला और सातवाँ अक्षर=मारः—कामदेव ।

दूसरे प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहारः का दूसरा और सातवाँ अक्षर=नर—अर्जुन ।

तीसरे प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहार का तीसरा और सातवाँ अक्षर=पूर—प्रवाह ।

चौथे प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहार का चौथा और सातवाँ अक्षर=जार—पराई स्त्री से प्रेम करनेवाला पुरुष ।

पाँचवे प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहार का पाँचवाँ और सातवाँ अक्षर=पर—दुश्मन ।

छठे प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहार का छठा और सातवाँ अक्षर=हार—हार ।

सातवे प्रश्न का उत्तर=मानपूजापहार. (समूचा शब्द)=आदर भाव में कमी ।

* * *

(२)

किं भाति भाले मृगलोचनानाम् ?
का दुर्भगा, कुत्र शिवे शशाङ्कः ?
हास्यास्पदं किं ? कथनीयमत्र
सिन्दूरबिन्दुर्विधवाललाटे ।

अर्थात्—सात ताल ऊँची मद्गु (एक मछली विशेष) कहाँ है ? सुमेरु पर्वत (सोने का पहाड़) किसके लिये सरसों के एक टुकडे मे है ? एक बूँद भी समुद्र (की तरह) कहाँ है ? समुद्र भी बूँद भर किसमे है ?

उत्तर—समुद्र मे (अब्धौ)।
कृपण के लिये (लुब्धे)।
साधु, सज्जन पुरुष के उपकार मे (साधुउपकार)।
नीच, दुष्ट के साथ उपकार करने में (नीचोपकारे)।

नोट—यह श्लोक कमालकार का एक बढ़िया नमूना है।

* * *

(७)

हिन्दी की अन्तर्लापिका

अजब पखेरू एक हाड है न चाम जाके
आप उडि जात पर पख ना दिखात हैं।
ताके बार बीनि बीनि बसन बनावै लोग
ओढ़त न मैले दिव्य रोज ही दिखात हैं॥
जप तप योगवारे षटरस भोगवारे,
लाल चन्द्र ओढि ओढ़ि हिये हरखात हैं।
सुर मुनि ईशन को पंडित कवीशन को
मत सब को है यहै वाको मास खात हैं॥

शब्दार्थ—पख=(१) पक्ष, पाख (२) पखने। बार=(१) दिन (२) रोयें। बसन=(१) साल, वर्ष (२) साल (वस्त्रविशेष)। मास=(१) महीना (२) मास।

* * *

चौथे प्रश्न का उत्तर = जननीकुतूहलम् का चौथा, सातवाँ, आठवाँ
अक्षर = कुलम्—कुल ।

पाँचवें प्रश्न का उत्तर = जननीकुतूहलम् का पाँचवाँ, सातवाँ, आठवाँ
अक्षर = तूलम्—रुई ।

छठवें प्रश्न का उत्तर = जननीकुतूहलम् का छठवाँ, सातवाँ, आठवाँ
अक्षर = हलम्—हल ।

अन्तिम प्रश्न का उत्तर = जननीकुतूहलम् (कुल शब्द) = माँ को
आनन्द देनेवाली ।

* * *

(५)

का काली ? का मधुरा ? का शीतलवाहिनी गंगा ?
कं संजघान कृष्ण: ? कं बलवन्तं न बाधते शीतः ?

अर्थात्—काली क्या (वस्तु) है ? मधुर क्या होती है ? शीतल वाहिनी गंगा कैसी हैं ? कृष्ण ने किसको मारा ? किस बलवान् को ठंढक नहीं सताती ?

उत्तर—कौओं की पाँत (काकाली), स्त्री (कामधुरा), काशी के किनारे किनारे बहनेवाली गंगा (काशीतलवाहिनी गंगा), कंस को मारा (कंस जघान), कम्बलवाले को (कम्बलवन्तम्) ।

* * *

(६)

मद्गो श्रृंगं सप्ततालप्रमाणम् ।
मेरो श्रृंग सर्षपस्यैक देशे ॥
विन्दुस्सिन्धुः सिन्धुरप्येकविन्दु ।
अब्धौ लुब्धे साधु नीचोपकारे ॥

दस सिर किसके हैं ? सोने का मृग बन कर कौन आया था ?
यम की बहन कौन है ? स्त्री को कैसा पति रुचता है ?
मेघ को देखकर किसे सुख मिलता है ? छोटे भाई को क्या कहते हैं ?
किसका रूप भयानक है ? किससे अनेक दुःख प्राप्त होते हैं ?
कौन सी अवस्था सुन्दर कही गई है ? देवता लोग क्या बजाते हैं ?
इन प्रश्नों के उत्तर क्रमशः ये हैं—

१ रावण २ मारीच ३ यमुना ४ नवीन ५ सिखडी=मोर ६ अनुज ७ राक्षस ८ मदन ९ तरुण १० नगारा।

इन सब शब्दो के आदि एक एक अक्षर लेने से "रामायन सियरामतन" उत्तर निकलता है। यह उत्तर उपरोक्त छप्पय की अंतिम पंक्ति मे मौजूद ही है।

* * *

बहिर्लापिका

(१)

जगन्निर्मितं केन ? को रुद्र शिष्यै—
हर्त ? कस्य चत्वारि शीर्षाणि मित्र ?
तृषार्त्ता कमिच्छन्ति ? कैश्चण्डिका तुष्टि—
माप्नोति ? कं प्राप्य नामोदतेरम् ?

अर्थात्—ससार किससे बनाया गया ? रुद्र—(शकर) के शिष्य ने किसे मारा ?

हे मित्र ! किसके चार सिर हैं ?

प्यास से व्याकुल क्या चाहते हैं ? किसे पाकर चडिका—(देवी) प्रसन्न होती हैं ?

किसे पाकर प्रसन्न नही होती (क्रुद्ध होती हैं) ?

(८)

भूषित को हरि-अंग ? कोह भरे का तिय करे ?
काके होत अनंग ? को मराल हित ? मानसर

हरि (विष्णु) के वामाग को कौन भूषित करता है ? रूठ जाने पर स्त्री क्या करती है ? काम किसके होता है ? हस की प्रिय वस्तु क्या है ?

इन सब प्रश्नो के उत्तर सोरठे के अन्तिम शब्द—'मानसर' मे छिपे हैं। यथा—

मानसर का पहला अक्षर 'मा' =लक्ष्मी। यह पहले प्रश्न का उत्तर है।

,, ,, पहला और दूसरा अक्षर 'मान'=रूठना। यह दूसरे प्रश्न का उत्तर है।

,, के पहले तीन अक्षर 'मानस'=मन। यह तीसरे प्रश्न का उत्तर है।

'मानसर' (यह कुल शब्द) =मानसरोवर (प्रसिद्ध झील) यह चौथे प्रश्न का उत्तर है।

* * *

(६)

काके है दशशीश[1] ? कनकमृग[2] को बनि आयो ?
यमभगिनी[3] कहि कौन ? तियहि कस पुरुष[4] सुहायो ??
मेघ निरखि सुख[5] काहि ? कहा लघु भ्रातहि[6] कहिये ?
काको रूप[7] कराल ? विविधि किहि तें दुख[8] लहिये ?
है कौन अवस्था[9] रुचिर अति ? काहि बजावैं[10] देवगन ?
विश्वास जानि निशि दिन भजो रामायन सियराम तन ॥

बन्धन क्या है ? किसके अत्यन्त सुन्दर नेत्र हैं। महादेव का पुत्र कौन है ? सीप ने किस (लड़के) को पैदा किया ? शोभा का सुन्दर नाम क्या है ? कृष्ण ने किसे अपने नाखून पर धारण किया है ? समुद्र से कौन मिलती है ? तिरछी कौन सी वस्तु है ?

इन प्रश्नों के जवाब क्रम से निम्नलिखित हैं—

१ सयाने २ बरढ ३ मुकती ४ कपाल ५ मॉकर ६ हरिणी ७ गनेश ८ मुकता ९ पानिप १० पहाड ११ सरिता १२ नयन। इन शब्दों के मध्याक्षर लेने से यह उत्तर निकलता है—"यार कृपा करि नेक निहारिय।" यही इच्छा मेरे हृदय की है भी।

* * *

प्रश्नोत्तर

(१)

एक बार एक सेठ जी नौकरी की तलाश में किसी दूसरे शहर को गये। वहाँ उन्होंने किसी ब्राह्मण से पूछा—

विप्रास्मिन्नगरे महान् वसति कः ?

अर्थात्—हे विप्र जी ! इस शहर में सबसे बड़ा कौन रहता है ?

उत्तर मिला—तालद्रुमाणां वनम्।

अर्थात्—ताड़ के पेड़ों का जंगल।

सेठ जी ने पूछा—को दाता ?

ब्राह्मण ने उत्तर दिया—रजको ददाति वसनं प्रातर्गृहीत्वा निशि।

अर्थात्—धोबी रात को कपड़े ले जाता है और दूसरे दिन प्रातः-काल दे जाता है।

शब्दार्थ—सा सुन्ती=सीता।

कुत =पृथ्वीत·।

उत्तर के लिये श्लोक के चतुर्थ चरण का यों अर्थ कीजिये तो भी सुन्दर दाँतवाली वे सीता पृथ्वी से रो रो कर कहती हैं कि 'माता! हमें जगह दे।'

तदपि सा सुदती—सीता, कुत· (पृथ्वीत·)
रुदती—रुरोद (पृथिव्या स्थानप्राप्त्यर्थम्)

नोट—यह श्लोक उस समय का है जब श्रीरामचन्द्र जी (जो गुणी सुन्दर, युवा और सच्चरित्र सभी कुछ थे) ने सीता जी को त्याग दिया था। सीता जी का बनवास हो गया था और आश्रम में ही उनके दो पुत्र—लव और कुश हुए थे। बनवास के उपरात अयोध्या आने पर यह घटना घटी।

* * *

हिन्दी की भी एक बहिर्लापिका लीजिये—

(४)

भावै काह सज्जन[1] को ? कौन शम्भुवाहन[2] है ?
काको सुख[3] होत ? काकी माला[4] शिव धारो है ?
काह गजबन्धन[5] ? छबीले दृग[6] काके अति ?
कौन हरपुत्र[7] ? सीपसुत[8] को विखारो है ?
शोभा को सुनाम[9] का है ? कृष्ण नख धारो[10] कहा ?
सिन्धु से मिलत[11] कौन ? काह अंधियारो[12] है
उत्तर के वर्णन में आदि अन्त दीजै छोड
मध्य लीजे सो हिये मनोरथ हमारो है।

सज्जन को क्या कहते हैं ? महादेव जी की सवारी कौन है ? सुख किसको होता है ? शिव ने किसकी माला धारण की है ? हाथियों के

महादेव जी और पार्वती से आपस में मजाक होता है। महादेव जी पार्वती से कहते हैं—

गौरवशालिनि प्यारी हमारी सदा तुमहीं इक इष्ट अहौ।

अर्थात्—हे मेरे गौरव को बढ़ानेवाली प्यारी, तुम्हीं एक मेरी इष्ट हो। परन्तु पार्वती जी ने हास्य करने के लिये महादेव जी के वाक्य का पद भंग कर डाला और उसका अर्थ बिठाया—

गौरवशालिनि = गौ + अवशा + अलिनी।

इस व्यंगपूर्ण नवीन अर्थ के अनुसार उन्होंने महादेव जी को उत्तर दिया—

हौं न गऊ, नहि हौं अवशा, अलिनी हूँ नहीं, अस काहे कहौ॥

अर्थात्—मैं न गाय हूँ, न अवशा (जो किसी के वश में न हो) हूँ और न अलिनी—भौंरी हूँ। तुम मुझे ऐसा क्यों कहते हो?

नाहं घोरोऽहिमर्दी, किं विहगपतिः ? नो हरिः, किं कपीशः ?
इत्थं राधावचोभिः प्रहसितवदनः पातु वश्चक्रपाणिः॥

नोट—इस श्लोक के उत्तरार्ध का पाठान्तर यों भी है—

मुग्धेऽहं मधुसूदनः पिबलता तामेव तन्वीमले।
इत्थं निर्वचनी कृतो दयितया हीतो हरिः पातु वः॥

*　　*　　*

खोलो जू किवाड़ तुम को हो एती बार ?
हरि नाम है हमारो बसो कानन पहार में।
रागी हूँ रँगीली ! तो जु जाउ काहु दाता पास
भोगी हूँ छबीली ! कहीं पैठिये पताल में॥
मैं तो बनवारी कहीं सींचो जाके बाग-बारी
घनश्याम हौं री बावरी ! बरीसो कहीं खार में।
नागर हौं नागरी तो टाँडा क्यों न लादे जात
लाल हौं री लाड़िली तो लागौ काहू हार में॥

विग्रह करके कहा—'नहीं नहीं तुम अत्यन्त पुण्यवती हो तुम्हारे पाप नहीं हैं।' अब स्त्री ने मेघ के पर्याय—पयोधर-शब्द से पति को बोध कराना चाहा परन्तु पति महाशय ने हँसी करने के लिये 'पयोधर' का "स्तन" अर्थ लेकर कहा—अच्छा तो कंचुकी को निकाल दो, देखूँ।

* * *

हिन्दी कवियों की प्रश्नोत्तर सम्बन्धी पहुँच देखिए—

एक बार कृष्णचन्द्र जी राधा के यहाँ गये। किवाड बन्द थे अत: कृष्ण जी ने दरवाजा खटखटाया। निदान राधा जी उनसे प्रश्न करती हैं और कृष्ण जी उन्हे उत्तर देते हैं। यह प्रश्नोत्तर साहित्यिक दृष्टि से बड़ा महत्वपूर्ण है। देखिये—

राधा—को तुम ?

कृष्ण—हरि, प्यारी !*

राधा—कहा बागर को पुर काम ?

कृष्ण—श्याम, सलोनी !

राधा—श्याम कपि ? क्यों न डर तब बाम।

ध्यान देने की बात यह है कि यदि राधा और कृष्ण के प्रश्नोत्तर को एक साथ पढ़ा जाय तो एक सुन्दर दोहा बन जाता है, यथा—

को तुम ? हरि प्यारी ! कहा बागर को पुर काम ?
श्याम, सलोनी ! श्याम-कपि ? क्यों न डरै तब बाम ॥‡

* * *

---

* 'हरि' शब्द का दूसरा अर्थ 'बन्दर' भी होता है।

† श्याम-कपि=काले मुँह वाला बन्दर—लंगूर।

‡ संस्कृत और हिन्दी के निम्नलिखित छंद भी इसी आशय के हैं—

अंगुल्या क: कपाटं प्रहरति कुटिलो ? माधव: किंवसन्त: ?
नाऽहं चक्री, कुलाल नहि धरणिधरो, किं द्विजिह्वो फणीन्द्र: ?

कूट

(१)

रावणस्य सुतो हन्यात् मुखवारिजधारितः ।
श्वसनं कसनं चापि तमिवानिलनन्दनः ॥

अर्थात्—मुखकमल में रखने से रावण का लड़का श्वास और खाँसी दोनों का वैसा ही नाश करता है जैसे उसका (रावण के लड़के का) नाश पवनसुत (हनूमान्) ने किया।

हनूमान् के हाथ से मारे जानेवाले रावण के लडके का नाम 'अक्ष' था। अक्ष बहेडे को कहते हैं, अर्थात्—बहेडे को मुँह में रखने से श्वास और खाँसी जाती रहती है।

* * *

(२)

हिन्दी में भी कवियो ने कूट लिखे हैं, यथा—

किसी नायिका का पति विदेश में था। इधर यह विरह से व्याकुल हो रही थी। भोग की सारी चीजें इसे विषवत् लग रही थीं। इन वस्तुओं से चिढकर इसने इन्हें नाश करने की सोची। बसती हवा इसके शरीर में कामोद्दीपन न कर सके इसलिये उसके पी जाने के लिये उसने शेष-नाग का चित्र दीवार पर खींचा। कामदेव के नाश के लिये इसे महादेव की तस्वीर बनानी पड़ी। विरहाग्नि में जलकर मरने के बजाय साधारण अग्नि में जल मरना अच्छा समझ कर इसने हुताशन (अग्नि) का चित्र बनाया। रात्रि बीत रही थी। चिड़ियाँ अपनी मीठी बोली से इसके मन को और भी दुखी कर रही थी। अतः इस मधुर कलरव को दूर करने

पार्वती जी का साहित्यिक व्यग सुन महादेव जी को चुप ही ह
जाना पड़ा ।

* * *

(६)

पार्वती और लक्ष्मी मे परस्पर मजाक होता है । जो बात श्रीलक्ष
जी पार्वती से पूछती हैं, श्लेष से उसका उत्तर पार्वती जी उन्हे ऐ
देती हैं कि उलट कर वह लक्ष्मी जी पर ही लागू होता है । यथा—

लक्ष्मी—भिक्षुक[1] गो कितको गिरिजे ?
पार्वती—सु तो मॉगन को बलिद्वार गयो री ।
लक्ष्मी—नाच नच्यो कित हो भवभाम ?
पार्वती—कलिन्दसुता[2] तट नीके ठयो री ।
लक्ष्मी—भागि गयो वृषपाल[3] सो जानत ?
गोधन सग सदा सो छयो री ।
(सागर-शैल-सुतान में आज—
परस्पर यो परिहास भयो री ॥[4])

* * *

१ भिक्षुक=महादेव । पार्वती जी श्लेप से भिक्षुक का अर्थ 'वाम
समझती है ।

२ कलिन्दसुता=यमुना ।

३ वृषपाल=बैल के पालन करनेवाले महादेव । पार्वती जी
श्लिष्ट शब्द बनाकर इसका अर्थ श्रीकृष्ण लिया है ।

४ इसी भाव का सस्कृत का यह श्लोक भी है—

भिक्षार्थी स क्व यात सुतनु ? बलिगृहे, ताण्डव क्वाद्य भद्रे ?
मन्ये वृन्दावनान्ते, क नु स मृगशिशुर्नैव जाने वराहम् ।
बाले कच्चिन्न दृष्टो जरठ वृषपतिः ? गोपएवास्य वेत्ता ।
लीलासलाप इत्थं जलनिधिहिमवत्कन्ययोस्त्रायतां न. ॥

बालक = लड़के-वाले।

श्री = लक्ष्मी

घनधान्य = धान्यबाहुल्य

विश्व = संसार

अर्थात—विरक्तों को इनसे कोई प्रयोजन नहीं। अतीसार के पक्ष में इन्हीं शब्दों का दूसरा अर्थ होता है। यथा—

बालक = सुगंधवाला।

श्री = बेल।

घन = नागरमोथा।

धान्य = धनियाँ।

विश्व = सोंठ।

अर्थात्—जिसको अतीसार नहीं है उसे इन ओषधियों के होने से कोई लाभ नहीं। (इनके काढ़े से अतीसार रोग जाता रहता है।)

* * *

(१२)

हिन्दी साहित्य में भी श्लेष का एक विशेष स्थान है। यथा—

चिरजीवौ जोरी, जुरै क्यों न सनेह गँभीर।
को घटि? ये वृषभानुजा वे हलधर के बीर॥

यह ऐसा दोहा है जिसमें 'वृषभानुजा' और 'हलधर के वीर' शब्द श्लिष्ट हैं। अत: इस दोहे के दो अर्थ हैं—

अर्थ १—यह जोड़ी चिरजीवी हो। दोनों में प्रेम भी निरन्तर बढ़ता जाय। हलधर के वीर—(कृष्ण) और वृषभानुजा—(राधा) की प्रीति समान ही है। कोई एक दूसरे से कम नहीं है।

अर्थ २—कहते हैं, वैर, प्रीति और व्याह बराबर वाले में ही ठिकाता है सो हलधर के वीर—(बैल) और वृषभानुजा—(गाय) की

इन्द्र को वाहन रविसुत पवनकुमार।
ये तीनों इक ठौर हैं कहु सखि कौन विचार॥

अर्थात्—बहन! इन्द्र का वाहन—हस्त अर्थात् हाथ, रविसुत—कर्ण यानी कान, और पवनकुमार—हनु अथवा ठुड्डी—ये तीना एक जगह किये क्या सोच रही हो?

इसका उत्तर वह नायिका यों देती है—

राम न दीन्हीं रावणहि, नहिं पारथ भगदन्त।
त्रिपुर न दीन्ही शंकरहिं, सो मोहि दीन्ही कन्त॥

अर्थात्—राम ने (युद्ध में) रावण को पीठ नहीं दी, पार्थ—अर्जुन ने भगदन्त (एक राजा) को पीठ नहीं दी। त्रिपुरासुर ने शङ्कर को पीठ नहीं दी, परन्तु मेरे पति ने आज मुझे पीठ दे दी है। यानी मुझसे क्रुद्ध हो गये हैं और पीठ देकर बैठ रहे!

* * *

श्लेष

(१)

अयि प्रिये! प्रीतिभृतां मुरद्विषे।
किम्बालक श्रीघनधान्यविश्वैः॥
यस्याप्यतीसार रुजो न तस्य।
किम्बालकश्रीघनधान्यविश्वैः॥

अर्थात्—हे प्रिये! जिनको कृष्ण से प्रेम है उनको बालक, धनधान्य और विश्व से क्या प्रयोजन? अर्थात् कुछ भी नहीं। और जि अतीसार का रोग नहीं उनको भी इन वस्तुओं से क्या प्रयोजन? पर 'बालकश्रीघनधान्यविश्वै' यह पद द्वयर्थक है। कृष्ण के पक्ष इसका यह अर्थ है—

एक दिन एक स्त्री ने रसोई बनाकर तथा दूध औट कर बिना उसे ढके ही रख दिया। जब उसका पति भोजन के लिये बैठा और वह स्त्री रसोई परोसने लगी तो देखा कि दूध के पास एक साँप मरा हुआ पड़ा है। अनुमान से उसने समझ लिया कि गर्म दूध पीने से ही इसकी मृत्यु हुई है। वह स्त्री अपने मन में प्रसन्न हो कहने लगी—अच्छा हुआ जो तुम (साँप) दूध पीकर मर गये! नहीं तो इसका जूठा—विषयुक्त—दूध यदि मेरे पति महोदय पीते तो अवश्य मैं विधवा हो जाती। लोग मुझ पर हँसते और पति की अनायास मृत्यु से राजा सन्देह करके मुझे दंड देते।

* * *

एक काव्य में दो काव्य

शस्त्राहतोऽथ स तु लक्ष्मण ! पाहि सीते !
रेणौ लुठन्तमिति कैतवतोऽपि जल्पन्
णैकाक्षरोज्झित उपैद् हरिणो हरित्वं
केऽशिक्षिता विमलितान्त्यदशास्तरन्ति॥

अर्थात्—हरिणवेशधारी मारीच जब श्रीरामचन्द्र जी के बाण से बिंध गया, तब वह "हा लक्ष्मण! हा सीते! धूल में छटपटाते हुए मुझको बचाओ"—यों छलपूर्वक (राम की तरफ से) कहता हुआ भी अपने अन्तिम अक्षर 'ण' को छोड़कर 'हरि' बन गया (अर्थात् मुक्त हो गया) क्योंकि हरि जिनकी अन्तिम दशा सुधार देते हैं वे अवश्य ही तर जाते हैं।

इस श्लोक में ध्यान देने की बात यह है कि 'णै' इस अक्षर को निकालते हुए कवि ने कैसा अच्छा भाव रक्खा है। इस पर अर्थान्तर-न्यास के चौथे चरण में प्रश्नोत्तर अलंकार भी दिखाया है। यथा—

के अशिक्षिता विमलितान्त्यदशा तरन्ति ?

प्रीति में कोई कोर-कसर है ही नहीं। कवि कहता है कि यह जोडी (गाय बैल की) तृण चर कर जीवन बितानेवाली (चिरजीवनी) हो।

*　　*　　*

(३)

तीकी जो न लागे तो लखाऊँ अतलस आज
　　तूल तजि भौन मारकीन इमि गायो है।
खासे चार खाने चमलेट डोरिया सों लाय
　　बलदेव विशद विचार ठहरायो है॥
गाढ़ा हेत राखो तो गवन हू दरेस होत
　　चिकन को टारि सुख जारी मन भायो है।
नैन सुख लीजै तनजेब लखि सारो लाल
　　विशद किनारी गुलबदन सुहायो है॥

यह एक ऐसा विचित्र छन्द है जो श्लेष से अपने में दो अर्थ रखता है। कहना न होगा कि तूल, मारकीन, चारखाना, डोरिया, गाढा, चिकन, नैनसुख, तजेब, गुलबदन आदि शिलष्ट शब्द कपडों के नाम हैं। प्रसंग के अनुसार इन शब्दों का दूसरा अर्थ भी है।

*　　*　　*

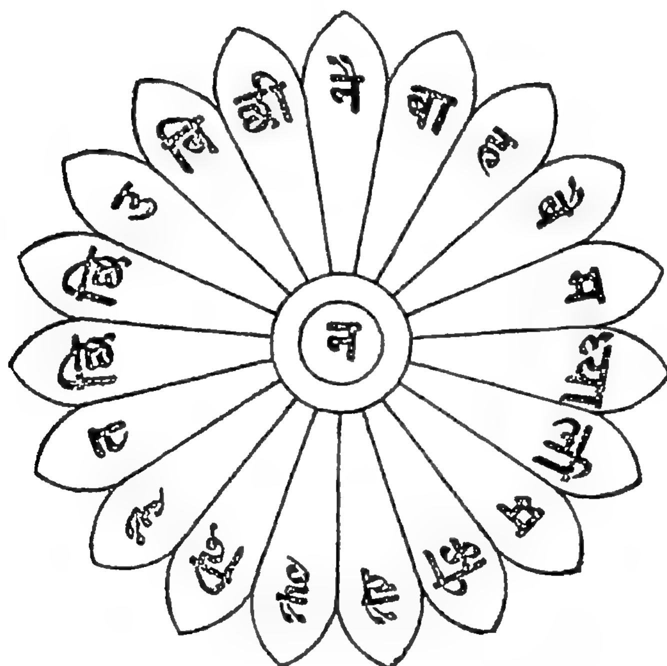
(४)

भली भई जो पी मरे, नहिं तो होती रॉड।
हँसते लोग जहान के, राजा करतो डॉड॥

इस दोहे का शब्दार्थ एक साधारण पढा-लिखा बालक भी समझ लेगा। परन्तु इस (भली भई जो पी मरे नहिं तो होती रॉड) श्लेषयुक्त उक्ति को समझना कुछ कठिन है। वास्तव में इस दोहे से सम्बद्ध एक कथानक है जो नीचे दिया जाता है—

दूसरे का एक उदाहरण उपस्थित किया जाता है। इस कमलबद्ध चित्रकाव्य में प्रत्येक शब्द का दूसरा वर्ण 'न' है—अर्थात् शब्दों का दूसरा वर्ण 'न' एक ही है। इस प्रकार प्रत्येक शब्द में 'न' (दूसरा अक्षर) जोडकर पढ़ने से निम्नलिखित दोहा बन जाता है—

नैन बान हन बैन मन, ध्यान लीन मन कीन।
चैन है न दिन रैन तन, छिन छिन उन बिन छीन॥



* * *

एक छन्द में आठो सवैयों के लक्षण

सैल भगा, वसुभा, मुनि भागग, सात भगोल लसै लभगा।
लै मुनि भागग, ही लल सत्त भगी, लल सात भगंग पगा॥
पी मदिरा, ब्रजनारि किरीटि, सु मालति चित्रपदा भ्रम गा।
मल्लिक, माधवि, दुर्मिलिका, कमला सु सवैय वसुक्रम गा॥

अर्थात्—किन अशिक्षितों की अन्तिम दशा सुधरती है और वे संसार को पार कर लेते हैं ? इस प्रश्न का उत्तर भी उन्हीं अक्षरों से दिया गया है।

"केशिच्चिता* विमलितान्त्यदशाः तरन्ति ?

अर्थात्—हरि जिनकी अन्तिम दशा सुधार देते हैं वे तर जाते हैं।

नोट—ऊपर के श्लोक में एक विलक्षणता और भी है कि प्रत्येक पाद के आदि के एक एक अक्षर को क्रमशः पढ जाने से 'शरेणैके' बन जाता है। इसी प्रकार इसके आगे के श्लोक में 'नराघवः' आता है। 'शरेणैके नराघव' प्रथम सर्ग बालकाड (मूलरामायण) के एक श्लोक का पादार्द्ध है।

यह श्लोक "श्रीरामचरिताब्धिरत्न" नामक ग्रंथ से लिया गया है। इस ग्रंथ में सभी श्लोक ऐसे ही चमत्कारपूर्ण हैं। उनके प्रत्येक चरण के आदि के अक्षरों का पाठ करने से मूल-रामायण के बालकाड के प्रथम सर्ग का पूरा पाठ हो जाता है।

* * *

चित्रकाव्य

साहित्यशास्त्र में काव्य के तीन भेद किये गये हैं—(१) ध्वनि (२) गुणीभूत व्यंग्य, और (३) चित्र। ध्वनि अथवा व्यंग्य–अर्थात् शब्दार्थ से भिन्न, मार्मिक अभिप्राय–जिसमें स्पष्ट होता है, वह उत्तम काव्य है, और जिसमें इसकी प्रधानता नहीं, वह मध्यम और जिसमें बिलकुल नहीं, वह कनिष्ठ। चित्रकाव्य के भी साहित्य में दो भेद किये गये हैं। एक अर्थ-चित्र और दूसरा शब्द-चित्र। पहले में अर्थ में विचित्रता रहती है, और दूसरे में केवल पदरचना की। यहाँ पर

* केशिनं चिणोतीति केशिच्चित् तेन हरिणेत्यर्थः।

विराम-चिह्नों का चमत्कार

Every lady in this land
Has twenty nails upon each hand
Five and twenty on hands and feet,
All this is true without deceit

अर्थात्—इस देश में प्रत्येक स्त्री के—
बीस नाखून होते हैं हर एक हाथ में
पांच और बीस हाथों और पैरों में
यह सब सत्य है इसमें कोई सन्देह नहीं।

परन्तु किसी भी स्त्री के हाथों में बीस नाखून नहीं होते, दस ही होते हैं। अतः इस छन्द को यों पढ़ने से इसका शुद्ध अर्थ निकलेगा—

Every lady in this land has twenty nails,
Upon each hand five;
And twenty on hands and feet,
All this is true without deceit.

अर्थात्—इस देश की प्रत्येक स्त्री के बीस नाखून होते हैं,
हर एक हाथ में पाँच;
और बीस (नाखून) हाथ और पैरों में मिलाकर।
यह सब सत्य है। इसमें कोई सन्देह नहीं।

* * *

रविर्यात्येवान्तं प्रतिदिनमपारस्य नभसः ।
क्रियासिद्धि॰ सत्वे भवति महतां नोपकरणे ॥

सूर्य के रथ मे एक ही पहिया है, सात घोडे जुते हैं जो साँपों से बँधे हुए हैं । उनका सारथी पागल और मार्ग आकाश मे है । ऐसे सूर्यदेव भी प्रति दिन अपार आकाश को पार कर जाते हैं । इसीलिये कहा गया है कि बडो की क्रियासिद्धि उनकी सामग्री में नहीं होती, बल्कि उनकी शक्ति मे होती है ।

इसके बाद राजा साहब ने ब्राह्मण के लडके को आज्ञा दी—बेटा तू भी कुछ सुना दे । वह पढता है—

विजेतव्या लंका चरणतरणीयो जलनिधि-
विपक्ष॰ पौलस्त्यो रणभुविसहायाश्च कपय॰ ।
पदातिर्मर्त्योसौ सकलमवधीद्राक्षसकुलम्
क्रियासिद्धि॰ सत्वे भवति महता नोपकरणे ॥

श्रीरामचन्द्र जी को लका जीतनी थी । उन्होंने पैरो से ही चलकर समुद्र पार किया, पुलस्त्य ऋषि का पुत्र रावण बडा शूरवीर था । उसे मारा । युद्धस्थल मे बन्दरों ने मदद की । यद्यपि रामचन्द्र जी पैदल लडे, इधर राक्षस बडे मायावी थे, तो भी रामजी ने सबो को मार गिराया । अत॰ बडे आदमियो का बड़ा काम उनके साधनो मे नहीं, प्रत्युत उनकी शक्ति से होता है ।

तत्पश्चात् वृद्ध ब्राह्मण की पुत्रबधू का नम्बर आया । उसने अपनी समस्यापूर्त्ति यो पढी—

धनु पौष्पं मौर्वी मधुकरमयी चंचलदृशाम् ।
दृशां कोणो बाण॰ सुहृदपि जडात्मा हिमकर॰ ॥
स्वयं चैकोनंगः सकलभुवनं व्याकुलयति ।
क्रियासिद्धि॰ सत्वे भवति महतां नोपकरणे ॥

समस्यापूर्त्ति

(१)

एक बार राजाभोज के यहाँ कुटुम्ब सहित एक ब्राह्मण आया और कहा कि हम सब लोग कवि हैं। आप कोई समस्या दे दीजिये। हम लोग उसकी पूर्ति करेंगे। यह सुनकर राजा भोज ने उन्हें समस्या दी—

क्रियासिद्धिः सत्वे भवति महतां नोपकरणे।

अर्थात्—महान् पुरुषों (बड़ों) की क्रियासिद्धि शक्ति में ही होती है, सामग्री मे नहीं। इसकी पूर्ति वृद्ध ब्राह्मण ने यों की—

घटो जन्मस्थानं मृग परिजनो भूर्ज वसनम्।
वने वासः कन्दादिकमशनमेवंविध गुणः॥
अगस्त्यः पाथोधिं यदकृतकरांभोज कुहरे।
क्रियासिद्धिः सत्वे भवति महतां नोपकरणे॥

अर्थात्—जिसका जन्मस्थान तो घडा है और जंगली जीव उसके कुटुम्बी, जिसका वस्त्र भोजपत्र है, रहना जंगल में होता है, और कन्द मूल फल जिसका भोजन है ऐसे गुणोंवाले अगस्त्य मुनि ने समुद्र का आचमन कर उसे पी लिया। अतः बड़ों की क्रियासिद्धि शक्ति में ही होती है, सामग्री मे नहीं।

राजा ने अब ब्राह्मणी से कहा कि आप भी अपनी पूर्ति सुनायें। वह बोली सुनिये भोजराज—

रथस्यैकं चक्रं भुजगनमिताः सप्त तुरगा।
निरालम्बो मार्गश्चरणाविकलः सारथिरपि॥

बीरबल को देखते ही अकबर समझ गये कि यह असली साधु नहीं
। इसलिये इनसे पूछा—आप कौन हैं और यह वेश क्यों धारण किया
? आपकी क्या फरियाद है ? बीरबल मन में तो ख़ुश थे परन्तु ऊपर
गम्भीरता दिखाते हुए बोले—

पाया हीरा लाख का आया बेचन काज।
छीन लिया छक्का लगा, निपट छली ने आज॥

यह सुनते ही बादशाह ने इनसे पूछा—वह कौन है जिसने तुम्हारे
ाथ ऐसा बुरा बर्ताव किया है ? उत्तर में बीरबल ने सन्तरी का नाम
ताकर कहा कि उसी ने मेरा एक अमूल्य रत्न छीनकर नष्ट कर दिया।
म्राट् ने तुरन्त सन्तरी को बुलवाया और उसे कड़ी सजा दी। परन्तु
सके पास रत्न कहाँ ? बीरबल ने यह देखकर कहा—जिसे मैं रत्न
हता हूँ वह एक दोहा था जो मुझे भगवती के प्रसाद से मिला था।
कबर ने कहा 'भाई ! उसका मिलना तो असम्भव है। हाँ, उसके
वज में मूल्यस्वरूप जो कहिये दे दूँ।' बीरबल ने कहा—हुजूर !
सका मूल्य तो आंका नहीं जा सकता। मुझको उसका कुछ अंश याद
। यदि शेष—चौथा चरण—आप अपने यहाँ के विद्वानों से तैयार
रवा दें तो मैं सन्तुष्ट हो जाऊँगा। उस दोहे के तीन पद यों हैं—

खड़े रहत जागृत सदा, मम रक्षक अति शक्त।
यह कह सोवत चैन से, ... ॥

यह सुनकर अकबर ने कहा, अच्छा ! आप कल सभा में आइये।
स दोहे को पूरा करने की यथोचित चेष्टा की जायगी। बीरबल प्रसन्न
कर लौट आए। उधर सम्राट् भी इन्हें न भूल सका। यहाँ तक कि
त में बादशाह को अन्यमनस्क देख बेगम साहबा शंकित हो उठीं।
ब उनसे न रहा गया तो बादशाह से पूछा—आज आप चिंतित क्यों
? सम्राट् ने बीरबल का हाल बताकर उस दोहे के तीनों पद सुनाये
ौर चौथे पद को पूरा करने के लिये बेगम से कहा। बादशाह की बात

फूल जिसका धनुष है, भौरा रूप प्रत्यंचा (धनुष की डोर) है, चंचल नेत्रवाली स्त्रियों के नेत्रकोण जिसके बाण हैं, जड़ात्मा-चन्द्रमा मित्र और स्वयं अंगहीन है। ऐसा अकेला ही कामदेव सारे जगत् को अपने वशीभूत कर व्याकुल कर देता है। इससे मालूम हुआ कि बड़ों की क्रियासिद्धि उनके प्रताप में है, सामग्री में नहीं।

राजा भोज ने बड़ा पुरस्कार देकर सम्मानपूर्वक ब्राह्मण के उस कुटुम्ब को बिदा किया।

* * *

(२)

हिन्दी साहित्य में भी समस्यापूर्त्तियों का आदि से ही प्रचार रहा है। उदाहरण लीजिए—

बचपन में बीरबल नौकरी की तलाश में दिल्ली पहुँचे। दूसरे दिन उन्होंने बादशाह अकबर से मुलाक़ात करनी चाही, क्योंकि वे जानते थे कि अकबर बड़े उदार हैं और मुझे अवश्य आश्रय देंगे। वे राजसभा में जाने लगे, परन्तु सन्तरी ने उन्हें जाने नहीं दिया और कहा—अगर आप मुझको सौ मुहरें देंगे तो अन्दर जाने पायेंगे। यह सुनकर वे स्तब्ध रह गये और बादशाह तक पहुँचने की दूसरी तरकीब सोचने लगे। इन्होंने एक कागज में कुछ लिख कर उस सन्तरी से कहा—"अच्छा इसे बादशाह तक पहुँचा दो।" सन्तरी यह सब देख बहुत बिगड़ा और उसने दो धक्के देकर बीरबल को बाहर कर दिया।

और बादशाहों की तरह अकबर भी इन्साफ-पसन्द था। वह नित्य एक झरोखे में बैठ सब की फरियादें सुनता और फैसला करता था। बीरबल अकबर बादशाह से यहीं मिलना चाहते थे। अतः वे झरोखे के नीचे उपस्थित हो 'फरियाद फरियाद' पुकारने लगे। जाने के पहले बीरबल ने अपना वेश एक साधु का सा बना लिया था ताकि बादशाह उनकी ओर आकर्षित हो जाय।

कि परसों मेरी पतोहू आपके प्रश्नों का उत्तर देगी, अतः पालकी भेज दी जाय।"

तब उसने कविजी से वे समस्याएँ पूछीं। कविजी ने कहा—

(१) सो बभन मरि जाय।

(२) अब हम करबै काह ?

(३) केहि मुख डारौं छीर ?

(४) अस हम कतौं न दीख

तीसरे दिन, अपने वादे के अनुसार, इनकी पतोहू साहब दरबार पहुँची, और वहाँ राजा साहब को यों कह सुनाया—

(१)

त्री को जो करै, बासी अन्न जो खाय ;
खित गऊ बियाई, सो बंभन मरि जाय।

(२)

सात बरस की कन्या, सत्तर बर भयो बियाह ;
वह या यह झंखत है, अब हम करबै काह।

(३)

लंका में फ रावण उपजा, दस मुँह एक सरीर ;
वाकी माता यह झवखत है, केहि मुँह डारौं छीर।

(४)

तीन लोक पिरथी के ढूंढ़ा, ढूंढ़ा जंबूद्वीप ;
बिना बुद्धि क भकुआ राजा, अस हम कतौं न दीख।

एक स्त्री के मुँह से ऐसी सुन्दर रचना की आशा राजा साहब न करते थे। अतः यह सब सुनकर वे बड़े लज्जित हुए। राजा ने कवि की पतोहू को बहुत सा धन और उपहार देकर बिदा किया।

* * *

(३)

एक बार अब्दुर्रहीम खानखाना ने किसी दोहे का अर्द्धभा बनाया। दोहे की पूर्त्ति वे कई दिनो तक सोचते रहे, परन्तु वह न बन सका। तब से रात को सोते समय नित्य वे एक बार उसे अवश्य पढ़ लिया करते थे कि सम्भव है शेष भाग बन जाय। एक रात को वे वह दोहार्द्ध पढ रहे थे—

'तारायन शशि रैनि प्रति, सूर होहिं शशि गैन।'

अर्थात्—रात्रि को तारागण एक एक चन्द्रमा हो जायँ और चन्द्रमा सूर्य की गति (रूप) धारण कर ले।

उनके इस दोहार्द्ध को एक खत्रानी ने सुना। उसे सूझ गई और उसने उत्तर-पक्ष का दोहार्द्ध यों बनाया—

तदपि अँधेरो हे सखी, पीय न देखे नैन॥

* * *

(४)

किसी राजा ने अपनी सभा मे एक बार चार समस्याएँ कही, और एक कवि से इनकी पूर्त्ति करने को कहा। कवि जी को दो दिन का समय दिया गया। कवि महाशय बडे चक्कर मे पडे और चिंतित घ लौटे। इनको उदास देख इनकी पतोहू ने अन्यमनस्क होने का कार पूछा। तब इन्होने चारों समस्यायें पढ़ सुनाई और यह भी कहा कि परसों तक यदि मैं इनकी पूर्त्तियाँ न कर सकूगा तो मुझे कठिन दंड दिया जायगा। यह सब सुनकर कवि जी की पतोहू ने कहा—बा जी! आप किसी प्रकार की चिन्ता न करे। यह कोई बडी बात है। अभी आप चलिए, हाथ मुँह धोकर भोजन कीजिये। इन्हे पूरा क मैं ही राजासाहब को सुना आऊँगी। हाँ, आप उन्हे खबर कर दीजि

गर तुलसी की माल सुभिरनी श्याम की।
भोजन एकै जून भक्ति भगवान की॥
औ संतन को संग तीर्थ को डोलना।
इतना दे करतार और नहि माँगना॥

इस अन्तिम समस्या की पूर्त्ति कैसी विचित्र भाषा में की गई है, पाठक देखें—

उठे ही पीरो होय उठे ही सासुरो।
आथूनो हो खेत चवै नहि आसुरो॥
भैसडल्या द्वै चारि और दूजै पापडी।
इतरो दे करतार, फेर कहि चावणो॥

एक स्त्री को साधारण सुखमय-जीवन बिताने के लिये कवि की दृष्टि से निम्नलिखित बाते होनी चाहिये—नजदीक ही नैहर और नजदीक ही ससुराल हो, खेत पश्चिम दिशा की ओर हो (ताकि इनपर धूप एकसाँ लग सके) और सुरक्षित हो। घर मे दो चार भैसे हो। यदि परमात्मा इतना देदे तो और क्या चाहिये?

* * *

(६)

पडित अम्बिकादत्त व्यास हिन्दी के प्रतिभाशाली लेखक और कवि थे। आप बहुत थोडी उम्र म ही आश्चर्यजनक कविता करने लगे थे। कहते हैं, स० १६२६ में जोधपुर के राजगुरु ओझा तुलसीदत्त जी काशी आए। इनको व्यास जी का गुण सुनकर आश्चर्य हुआ। सन्देह निवारण करने के लिये झा जी ने इनको एक समस्या देकर उसकी पर्त्ति करने को कहा। समस्या थी—"मूँदि गई आँखै तब लाखै कौन काम की।" व्यास जी ने तुरन्त यह कवित्त बना दिया:—

किसी रा ने अपनी कवि-मण्डली के सम्मुख "याही दे करता और नहिं माँगने" यह स्या रक्खी और इसकी पूर्त्ति के लिये एक सप्ताह का समय दिया। कहा जाता है कि उस राजा के दरबार में पाँच कवि थे। इन कवियों की विषता यह थी कि उनमें से प्रत्ये की रुचि एक दूसरे के बिलकुल भि थी। अतः उनकी पूर्त्तियाँ भी अपने अपने रस मे अद्वितीय होतीं थ अर्थात् यदि एक वीर-रस-प्रधान तो दूसरी शृङ्गार-रससम्बन्धी और ती गन्तरस मे डूबी हुई। इस समस्या की पूर्त्तियों मे भी यही बात पाई ग ए। वे पूर्त्तियाँ यों थीं:—

बट बरगद की छाँह मुहब्बत की।
औ बूटी की रगड़ मूठि दुइ चने
सुरा गऊ का दूध शकर में छा
याही दे करतार और नहिं माँग॥

दूसरी पूर्त्ति के पढने से स्पष्ट हो जाता है कि मे वीर रस बाहुल्य है और आखेट (शिकार) में उसकी रुचि—

सिर गुजराती पाग दुपट्टा जरी ग।
खोंसे कमर कटार सुजूता नरी ग॥
औ कच्छी की पीठ शिकार का खेलना।
याही दे करतार और नहिं मागना॥२॥

शृङ्गार-रस मे की गई तीसरी पूर्त्ति थी—

रिमझिम बरसै मेघ सु ऊँची रावटी
कामिनि करै सिंगार सु बाजै वटी।
औ फूलो की सेज पंख का झेलना।
इतना दे करतार और नहिं माँगना॥३॥

इस चौथी पूर्त्ति मे कवि ने दिखाया है कि यदि ससार मे कोई मागने योग्य है तो वह—

बस यही था शतरंजबाजजी का बताया हुआ वह करामाती कवित्त। नवनीतजी ने इसकी पूर्त्ति यों की—

"मोदक पान को भोग लगै,
प्रभु मो-से अजान पै कृपा ही किए रहैं ;
कहै नवनीत गुरु गणपत सुमर करिकै,
धोय घोट छान प्रेम-प्याला पिए रहैं ॥१॥"

*　　　*　　　*

(८)

एक बार फतेहपूर मे कवियो की एक गोष्टी हुई। उसमें यह ठहरी कि एक समस्या दी जाय जिसकी हर एक आदमी पूर्त्ति करे—देखे कौन पहले अपनी शायरी सुनाता है। शकरजी से समस्या माँगी गई। आपने सोचा कि ऐसी कड़ी समस्या दूँ कि इन सबो को भी मालूम हो। यह सोच आपने "चाहत हैं कवि और चितेरे" की पूर्त्ति करने को कहा। प्रत्येक कवि को पन्द्रह मिनट समय दिया गया।

सारी मडली शकर जी की दी हुई समस्या पर माथापच्ची कर रही थी, परन्तु किसी को कुछ सूझता न था॥अभी मुश्किल से आठ मिनट बीते होगे कि शकरजी ने वही टँगे हुए एक चित्र को लक्ष्य कर अपनी पूर्त्ति यो कह सुनाई—

स्वान उढंग मनोहर अंग, लिये कर बाम प्रसून घनेरे।
राजत बालक सी कुरसी पर, चारु चितौनि खुले कच हेरे॥
×　　　×　　　×
चन्द्रकला मिल शंकर सों, यह चाहत हैं कवि और चितेरे॥

शकरजी की ऐसी काव्य-पटुता देख सारी सुकवि मडली दग रह गई, और तभी से सुकवियों मे शंकर जी की धाक बँध गई।

*　　　*　　　*

चमकि चमाचम रहे हैं मनिगन चारु,
सोहत चहूँघा धूमधाम धन धाम की।
फूल फुलवारी फल फैलि कै फबे हैं तऊ.
छबि छटकीली यह नाहिन अराम की॥
काया हाड चाम की लै राम की बिसारी सुधि,
जाम की को जानै बात करत हराम की।
अम्बादत्त भाखे अभिलाखैं क्यों करत झूठ,
मूँदि गई आँखैं तब लाखैं कौन काम की॥

*　　*　　*

(७)

प० गंगादत्तजी के शिष्यो मे 'शतरंजबाज' उपाधिधारी कोई लल्लूजी थे। इन्हे श्रीगणेशजी की वंदना का कोई अशुद्ध-सा कवित्त याद था, जिसे वह ऐब की तरह छिपाते थे। नवनीतजी के कान मे भी उसकी भनक पड़ी। 'शतरंजबाज' जी से सुनाने और सिखाने के लिये बहुत बहुत प्रार्थना की, पर वह तो पूरे शतरंजबाज थे—अपनी चाल काहे को छोड़ने लगे! बराबर चाल चलते रहे। टालते रहे। कृपण के सोने के समान उस कविता को छिपाए रहे। अन्त को बहुत सेवाशुश्रूषा से किसी तरह पसीजे भी, तो सिर्फ आधा कवित्त ही सुनाकर रह गए, फिर पूरा भी न बतलाया। नवनीतजी के सिर पर कवित्त पूरा करने की धुन सवार थी। आखिरकार ज्यो-त्यो करके उसकी पूर्त्ति नवनीतजी ने स्वय कर डाली। सुनिए—

सुन्दर चन्दन मस्तक चर्चित,
　　हस्त त्रिसूल को धारण किए रहैं,
एक ही दंत उमासुत के
　　तेल-सिंदूर को लेपन किए रहैं;

आजु मनाए न मानती हौ,
फल्ह आपु मनाइहौ राधिका रानी ॥

"कदम्ब की डारन" मे शृङ्गार की बहार देखिए। भारतेन्दु जी के प्रभाव और प्रोत्साहन का यह अनूठा निदर्शक है। सुनिए—

भूलि जैहैं हँसि माँगिबो दान को,
रुख दही हित पानि पसारन।
भूलि हैं फाग के राग सबै
वह ताकहि ताकि कै कुंकुम मारन ॥
सो तो भयो सब ही 'मकरन्दजू'
दाखहि चाखि कै बैर बिसारन।
तापर चीर चुराय चढ़े वह,
भूलि हैं कैसे कदम्ब की डारन ॥
भारत चारहुँ ओर दुखी,
दुख भोगत बीतिगे वर्ष हजारन।
ध्यान रतीक दियो चहिए,
दुख कौन उपाय सों होय निवारन ॥
सो सब दूरि रहै 'मकरन्द',
रमै इन बातन में किहि कारन।
होय सो होय इहाँ नहिं भूलनो,
राधिका रानी कदम्ब की डारन ॥

मालवीय जी की कविता

भारतेन्दु बा० हरिश्चन्द्र के अनन्य मित्रों में आदरणीय पंडित मदन मोहन मालवीय "मकरन्द"* भी हैं। भारतेन्दु बाबू के सहयोग और प्रोत्साहन से मालवीय जी को भी कविता का शौक हुआ। "रीझि लट्टू भई राधिका रानी' समस्या की पूर्त्ति पढिये.—

इन्दु सुधा बरस्यो नलिनीन पै,
वे न बिना रवि के हरखानी।
त्यौं रवि तेज दिखायो तऊ,
बिनु इन्दु कुमोदिनी ना विकसानी॥
न्यारी कछू यह प्रीति की रीति,
नहीं 'मकरन्दजू' जात बखानी।
साँवरे कामरीवारे गुपाल पै,
रीझि लट्टू भई राधिका रानी॥

जरा राधिका मानिनी का मनाना देखिए। मालवीय जी महाराज का ब्रजभाषा-प्रेम निरखिए—

वे कब के उत ठाढ़े अहैं,
इत बैठि अहो तुम नारि चुपानी।
थाकी तुम्हें समुझावत साम तें,
ऐसी न रावरी बानि मैं जानी॥
मोहिं कहा पै यहै 'मकरन्दजू'
जो कहुँ खीझि कै रूसन ठानी।

---

* महामना मालवीय जी कविता में अपना उपनाम "मकरन्द" रखते थे।

भूपतियों का काव्य-वैभव

[भारतीय भूपति अन्य ऐश्वर्यों के साथ काव्य-साधन
से भी संपन्न थे—प्रमाण ।]

महाराज भोज की काव्य-प्रतिभा

[महाराज भोज काव्य-साहित्य के उन्नायक नृपति तथा गुणग्राही व्यक्ति थे। आप के बराबर पुरस्कर्ता तो भारतवर्ष में शायद ही कोई राजा हुआ हो। अनेक उत्तमोत्तम कवि आपके दरबार में थे। भोजराज उत्तम कविता पर पुरस्कार तो देते ही थे, साथ ही स्वय भी एक प्रतिभा-शाली कवि थे। नीचे के आख्यान इसके प्रमाण हैं।]

(१)

एक दिन धारानगरी में महाराज भोज की सभा लगी थी। तब तक द्वारपाल ने आकर कहा—लँगोटी लगाये कोई विद्वान् ड्योढी पर खडे हैं। राजा साहब ने कहा बुला लाओ। भोजराज को देख प्रसन्नता के मारे उस कवि की आँखो में आँसू आ गए। उसे रोते देख राजा ने पूछा—कवि जी! क्यो रोते हैं? कवि जी ने उत्तर में यह श्लोक कहा—

अये लाजानुच्चै. पथिवचनमाकर्ण्य गृहिणी।
शिशो. कर्णौ यत्नात् सुपिहितवती दीनवदना॥
मयि क्षीणोपाये यदकृतदृशावश्रुशबले।
तदन्त्य-शल्यं मे त्वमिवपुनरुद्धर्तुमुचितः॥

अर्थात्—'ले लाई! ले लाई!!' इस शब्द को रास्ते में सुन मेरी स्त्री ने दुखी होकर अपने बच्चे के दोनों कान यत्न-पूर्वक मूद दिये ताकि वह लइया न माँगने लग जाय। आँसू भरकर मेरी स्त्री ने जो बात कही थी उसे पूरा करने में असमर्थ हूँ। आप मेरे हृदय के दरिद्रतारूपी काँटे को उखाड़ फेकने में समर्थ हैं।

महाराज भोज को सदैव धन बाँटते देख राज्य के प्रधान मन्त्री ने सोचा कि इस प्रकार तो कुछ दिनों मे खजाना ही खाली हो जायगा। राजा साहब को कैसे समझाया जाय। यह बात उसकी समझ मे न आती थी। एक दिन उसे इसका एक उपाय सूझा। उसने राजा के कमरे मे लिख दिया—

आपदर्थं धनं रक्षेत्

भोजराज जब कमरे मे गये तो उन्होंने इसे पढा। तदनन्तर उस पंक्ति के नीचे ही महाराज ने लिख दिया—

श्रीमतामापदः कुतः।

दूसरे दिन दूसरा चरण लिखा देखकर मन्त्री जी ने फिर उसके नीचे लिखा—

सा चेदपगता लक्ष्मीः

तीसरा चरण लिखा पाकर राजा साहब ने उसका अन्तिम चरण यों लिखा—

संचितार्थोऽपि नश्यति* ॥

अब प्रधान मन्त्री के होश ठिकाने आ गये और उन्होंने अपनी गुस्ताखी के लिये महाराज से क्षमा माँगी।

* * *

---

* कुल श्लोक का अर्थ हुआ—

विपत्ति के लिये धन की रक्षा करे।
श्रीमानो को विपत्ति कहाँ ?
यदि धन चला गया तो—
इकट्ठा किया हुआ (धन) भी नष्ट हो जाता है।

यह सुन महाराज ने उसे प्रति अक्षर पाँच लाख रुपया देकर विदा किया।

*　　*　　*

(२)

एक समय नर्मदा नदी के महाकुण्ड में जाली खोदनेवाले कारीगरों ने एक ऐसा पत्थर का टुकड़ा पाया जिस पर कुछ लिखा हुआ था परन्तु उसके अक्षर कुछ बिगड़ गए थे। वे कारीगर उसे लेकर राजा भोज के पास गए। बड़ी मुश्किल से दो चरण पढे गये। वे थे—

अयि खलु विषमः पुराकृतानाम्।
भवति हि जंतुषु कर्मणाम्विपाकः॥

अर्थात्—हे मित्र! पहले किये कर्मों का फल जीवों को निश्चय भोगना पड़ता है।

फिर भोज ने भवभूति कवि से उसका पूर्वार्द्ध कहने के लिये आज्ञा दी। भवभूति ने पूर्वार्द्ध तैयार करके पढा—

क्व नु कुलमकलंकमायताक्ष्याः।
क्व नु रजनीचरसंगमापवादः॥

अर्थात्—कहाँ तो सुन्दर स्त्री (जानकी) का कलकरहित कुल और कहाँ राक्षसों के संग का अपवाद।

इसमें ध्वनिदोष मानते हुए भोजराज ने उसी पूर्वार्द्ध को और तरह से पढा—

क्व जनकतनया क्व रामजाया।
क्व च दशकंधरमंदिरे निवासः॥

अर्थात्—कहाँ जनकपुत्री, कहाँ रघुनाथ जी की स्त्री और कहाँ रावण के घर में निवास।

*　　*　　*

भवभूति ने कहा—

अरुणकिरणजालैरंतरिक्षे गतर्क्षे ॥

सूर्यनारायण के किरण-समूह-द्वारा आकाश मे नक्षत्र दूर हो गये। इस पर दण्डी ने कहा—

चलति शिशिरवाते मन्दमन्दं प्रभाते।

प्रत.काल मन्द मन्द शीतल हवा चलती है। इसे सुन कालिदास ने कहा—

युवतिजन कदम्बे नाथ मुक्तोष्ठबिम्बे।
चरमगिरिनितम्बे चन्द्रबिम्बं ललम्बे ॥

अर्थात्—हे नाथ! पतियों ने जब अपनी रमणियों के ओष्ठबिम्ब ाग दिये तो पश्चिम-पर्वत-रूपी नितम्ब में चन्द्रबिम्ब लटक आया।

* * *

(६)

एक बार अवन्तिकापुरी के महाराज (भोज) अपने दरबार मे ठे थे। इतने में द्वारपाल ने समाचार दिया कि ड्योढी पर एक ब्राह्मण गोटी लगाये खडे हैं और आपके दर्शन करना चाहते हैं। भोज कहा लिवा लाओ। ब्राह्मण आया और प्रणाम कर निम्निलिखित लोक कहा—

महाराज श्रीमज्जगति यशसा ते धवलिते।
पय पारावार परमपुरुषोयं मृगयते ॥
कपर्दी कैलाशं गिरिवरमभौमं कुलिशभृत्।
कलानाथं राहुः कमलभवनो हंसमधुना ॥

अर्थात्—हे श्रीमान् महाराज! आपके यश से ससार की प्रत्येक स्तु सफेद हो गई (यश का रग सफेद माना गया है।) उस सफ़ेदी भगवान् विष्णु का क्षीरसमुद्र, महादेवजी का निवास-स्थान—कैलाश

(४)

एक बार राजा भोज अपने महल में क्रीडा में तत्पर थे। चाँदनी रात थी। एकाएक उनकी दृष्टि चन्द्रमा पर गई और उन्होंने कहा—

यदेतच्चन्द्रान्तर्जलदलवलीला वितनुते-
तदाचष्टे लोकः शशक इति, नो मां प्रति तथा॥

भावार्थ—चन्द्रमा में यह जो काला काला अंश दिखाई पडता है, लोग उसे खरगोश बताते हैं। परन्तु मेरे मन में यह बात नहीं बैठती।

तब तक महल में घुसे हुए एक चोर ने कहा—

अहंत्विन्दुम्मन्ये त्वदरिविरहाक्रान्ततरुणी—
कटाक्षोल्कापातव्रणकणकलंकांकिततनुम्॥

अर्थात्—मेरी समझ मे तो यह आता है कि आपके शत्रुओं के विरह मे दु:खिता जो स्त्रियाँ हैं उनके कटाक्षरूपी वज्रपात से चन्द्रमा का इतना अंग काला पड गया है।

इसे सुनकर भोजराज ने पूछा कि रात्रि के समय मेरे महल में घुसा हुआ तू कौन है? चोर ने उत्तर दिया—महाराज, पहले क्षमादान दें तो बताऊँ। राजा ने कहा—'माफ है कह।' निदान वह अपना सच्चा हाल कह कर चला गया।

* * *

(५)

एक बार राजा भोज प्रातःकाल घूमने निकले। पश्चिम में पर्वत पर अस्त होते हुए चन्द्रमा को देखकर वे प्रसन्न मन सभा में आ बैठे। उस दिन उन्होंने अपनी कवि-मण्डली में समस्या रक्खी—

चरमगिरिनितम्बे चन्द्रबिम्बं ललम्बे।

पश्चिम पर्वतरूपी नितम्ब पर चन्द्रमा का बिंब लटकता है।

भवभूति ने कहा—

अरुणकिरणजालैरंतरिक्षे गतर्क्षे ॥

सूर्यनारायण के किरण-समूह-द्वारा आकाश मे नक्षत्र दूर हो गये।

इस पर दण्डी ने कहा—

चलति शिशिरवाते मन्दमन्दं प्रभाते।

प्रतःकाल मन्द मन्द शीतल हवा चलती है।

इसे सुन कालिदास ने कहा—

युवतिजन कदम्बे नाथ मुक्तोष्ठबिम्बे।
चरमगिरिनितम्बे चन्द्रबिम्बं ललम्बे ॥

अर्थात्—हे नाथ! पतियों ने जब अपनी रमणियों के ओष्ठबिम्ब त्याग दिये तो पश्चिम-पर्वत-रूपी नितम्ब में चन्द्रबिम्ब लटक आया।

* * *

(६)

एक बार अवन्तिकापुरी के महाराज (भोज) अपने दरबार में बैठे थे। इतने में द्वारपाल ने समाचार दिया कि ड्योढी पर एक ब्राह्मण लंगोटी लगाये खडे हैं और आपके दर्शन करना चाहते हैं। भोज ने कहा लिवा लाओ। ब्राह्मण आया और प्रणाम कर निम्निलिखित श्लोक कहा—

महाराज श्रीमज्जगति यशसा ते धवलिते।
पयः पारावारं परमपुरुषोयं मृगयते ॥
कपर्दी कैलाशं गिरिवरमभौमं कुलिशभृत्।
कलानाथं राहुः कमलभवनो हंसमधुना ॥

अर्थात्—हे श्रीमान् महाराज! आपके यश से ससार की प्रत्येक वस्तु सफेद हो गई (यश का रग सफेद माना गया है।) उस सफ़ेदी में भगवान् विष्णु का क्षीरसमुद्र, महादेवजी का निवास-स्थान—कैलाश

(४)

एक बार राजा भोज अपने महल में क्रीड़ा में तत्पर थे। चाँदनी रात थी। एकाएक उनकी दृष्टि चन्द्रमा पर गई और उन्होंने कहा—

यदेतच्चन्द्रान्तर्जलदलवलीला वितनुते-
तदाचष्टे लोकः शशक इति, नो मां प्रति तथा॥

भावार्थ—चन्द्रमा में यह जो काला काला अंश दिखाई पड़ता है, लोग उसे खरगोश बताते हैं। परन्तु मेरे मन में यह बात नहीं बैठती।

तब तक महल में घुसे हुए एक चोर ने कहा—

अहंत्विन्दुम्मन्ये त्वदरिविरहाक्रान्ततरुणी—
कटाक्षोल्कापातव्रणकणकलंकाङ्कितततनुम्॥

अर्थात्—मेरी समझ मे तो यह आता है कि आपके शत्रुओं के विरह मे दु:खिता जो स्त्रियाँ हैं उनके कटाक्षरूपी वज्रपात से चन्द्रमा का इतना अंग काला पड़ गया है।

इसे सुनकर भोजराज ने पूछा कि रात्रि के समय मेरे महल में घुसा हुआ तू कौन है? चोर ने उत्तर दिया—महाराज, पहले क्षमादान दें तो बताऊँ। राजा ने कहा—'माफ है कह।' निदान वह अपना सच्चा हाल कह कर चला गया।

* * *

(५)

एक बार राजा भोज प्रातःकाल घूमने निकले। पश्चिम में पर्वत पर अस्त होते हुए चन्द्रमा को देखकर वे प्रसन्न मन सभा में आ बैठे। उस दिन उन्होंने अपनी कवि-मण्डली में समस्या रक्खी—

चरमगिरिनितम्बे चन्द्रबिम्बं ललम्बे।

पश्चिम-पर्वतरूपी नितम्ब पर चन्द्रमा का बिम्ब लटकता है।

तरह नींद मुझे छोड़कर चली गई है तथा सुपात्र को दी हुई पृथ्वी की तरह रात नहीं घट रही है।"

महाराज विक्रमादित्य गुणियों को पहचानते थे। उन्हीं दिनों काश्मीर का राजा हिरण्य नि:सन्तान मर गया था। उसकी गद्दी खाली थी। ये कवि अपनी प्रतिभा के कारण काश्मीर के राजा बना दिये गये।

*　　　*　　　*

महाराज भर्तृहरि और पिंगला वेश्या

महाराज भर्तृहरि अपनी रानी को जी-जान से चाहते थे। परन्तु रानी का प्रेम एक दारोगा से था। एक बार किसी ब्राह्मण ने महाराज को एक अमृतफल भेंट किया और कहा कि इसके खाने से मनुष्य चिर-काल तक युवा बना रहता है। फल ले कर महाराज ने सोचा कि इसे रानी को खिलाना चाहिये। उन्होंने रानी को फल देकर उसका गुण बता दिया। राजा के चले जाने पर रानी ने अपने प्रेमी दारोगा को बुलवाया और कहा कि इस फल को आप खाइये। दारोगा ने फल ले लिया। परन्तु वे पिंगला वेश्या के यहाँ आया-जाया करते थे। अतः उन्हों ने वह फल वेश्या को दिया। पिंगला वेश्या ने वह फल ले लिया परन्तु खाया नहीं। रात को उसने विचार किया कि महाराज भर्तृहरि के अजर-अमर रहने से सब को सुख होगा अतः क्यों न चलकर महाराज को यह भेंट करूँ।

दूसरे दिन पिंगला फल ले कर दरबार में पहुँची। वेश्या के हाथ में उस फल को देख महाराज को बड़ा आश्चर्य हुआ। पीछे से अनु-सन्धान द्वारा जब भर्तृहरि को सब भेद मालूम हो गया तो उन्होंने खिन्न होकर कहा—

यां चिन्तयामि सततं मयि सा विरक्ता।
साप्यन्यमिच्छति जनं सजनोऽन्यसक्तः॥

पर्वत, इन्द्र का ऐरावत हाथी, राहु का शत्रु चन्द्रमा और ब्रह्मा जी की सवारी हंस खो गया और ये लोग ढूढते फिरते हैं।*

इस श्लोक द्वारा भोज के यश की प्रशसा की गई थी। अतः उन्होंने उस ब्राह्मण को बहुत सा पुरस्कार दिया।

*　　　*　　　*

कवि मातृगुप्त का सत्कार

सस्कृत के कवि मातृगुप्त ने राजा हर्ष विक्रमादित्य के यहाँ अपनी कविता सुनाने के लिये प्रस्थान किया। कवि होते हुए भी वे निर्धन थे। अत' द्वारपाल ने इन्हे भीतर नहीं जाने दिया। निराश होकर वे राज के द्वार पर ही टिक गये। सर्दी के कारण, बिना वस्त्र के, कवि जी को नींद भी नहीं आती थी। अकस्मात् आधी रात को राजा ने दरबान पुकारा। परन्तु वे सब खर्राटे ले रहे थे। अवसर पाकर मातृगुप्त ने राजा से अपनी शोचनीय दशा का वर्णन यों किया—

शीतेनोद्धूषितस्य मापशिभिवच्चिन्तार्णवे मज्जत ।
शान्ताग्निं स्फुटिताधरस्य धमत॰ क्षुत्क्षामकण्ठस्य मे ॥
निद्राक्काप्यवमानितेव दयिता संत्यज्य दूर गता ।
सत्पात्रप्रतिपादितेव वसुधा न क्षीयते शर्वरी ॥

पद्य का भाव यह है कि—"उर्द की फली की भाति मैं पाले से त्रस्त हो रहा हूँ। मेरे ओठ फट गये हैं। आग बुझती जाती है। भूख के मारे मेरा गला सूख गया है। मेरी दशा देख अपमानित भार्या

---

* भोजप्रबन्ध का यह श्लोक भी प्राय' इसी भाव का है—

यथा यथा भोजयशो विवर्द्धते ।
सितां त्रिलोकीमिव कर्तुमुद्यत ॥
तथा तथा मे हृदयं विदूयते ।
प्रियालकालीधवलत्वशंकया ॥

प्राण-रक्षक श्लोक

भारवि संस्कृत साहित्य के एक प्रसिद्ध कवि हो गये हैं। इनकी आर्थिक दशा अच्छी न थी। कहीं ना[illegible] की तलाश में ये बाहर जाने लगे। चलते समय इन्होंने अपनी स्त्री को एक श्लोकार्द्ध लिखकर दे दिया और कहा कि जब कभी तुम्हें धन की आवश्यकता पड़े तुम राजा साहब के यहाँ इस कागज को ले जाना।

दैववश एक दिन भारवि के यहाँ खर्च करने के लिये कुछ न रहा। इनकी पत्नी चिंतित थीं। तब तक उन्हें अपने पति के दिये हुए श्लोक की याद आगई और वे राजा के यहाँ पहुँचीं। महल में रानी मिलीं। रानी ने उनसे वह अर्द्ध लिखित-श्लोक ले अपने कमरे में टँगवा दिया और उचित पुरस्कार देकर उन्हें विदा किया।

उसी रात को राजा साहब परदेश से लौटे। उन्होंने रानी के कमरे में आकर देखा तो वे सो रही थीं और बगल में बच्चा लेटा था। राजकुमार के ऊपर चादर पड़ी थी इसलिये उन्हें रानी के सतीत्व पर सन्देह हो गया। जब किसी तरह भी वे अपने मनोवेग को न रोक सके तो उन्होंने तलवार निकाली कि इस कुलटा का सिर उड़ा दूँ। तब तक उनकी निगाह उस श्लोक पर पड़ी जिसे रानी ने अपने सिरहाने टाँग रक्खा था। उस श्लोक को उन्होंने पढ़ा। उसमें लिखा था—

सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम् ॥

अर्थात्—आवेश में आकर एकाएक किसी काम को न कर डालना चाहिये क्योंकि बिना सोचे-समझे काम करने पर बड़े बड़े दुःख भोगने पड़ते हैं।

अस्मत्कृते च परितुष्यति काचिदन्या।
धिक् तां च तं च मदनं च इमां च मां च॥

अर्थात्—मैं जिसको सदा चाहता हूं वह (रानी) मुझे नहीं चाहती। वह दूसरे पुरुष को चाहती है। वह पुरुष (दारोगा) रानी को नहीं चाहता—वह एक वेश्या पर मरता है। वह वेश्या–जिसे रानी का यार दारोगा चाहता है, मुझे चाहती है। इसलिये रानी को धिक्कार है, उस दारोगा को धिक्कार है, उस वेश्या को धिक्कार है, मुझको धिक्कार है और उस कामदेव को धिक्कार है जो यह सब काड कराता है।

कहा जाता है कि इस घटना से भर्तृहरि को संसार से विरक्ति होगई और वे राजपाट छोड़ भगवद्भजन के लिये जंगल की ओर निकल पडे। चलते समय उन्होंने निम्नलिखित श्लोक कहकर संसार को अनित्य बतलाया है—

भोगे रोगभयं कुले च्युतिभयं वित्ते नृपालाद्भयम्।
माने दैन्यभयं बले रिपुभयं रूपे जराया भयम्॥
शास्त्रे वादिभय गुणे खलभयं काये कृतांताद्भयम्।
सर्वं वस्तु भयान्वितं भुवि नृणा वैराग्यमेवाभयम्॥

अर्थात्—भोग में रोग का भय है, अच्छे कुल को पतन का भय है, धन होने पर राजा का भय है, मान में दीनता का भय है, बल होने पर शत्रु से पराजित होने का भय है, रूपवान होने में वृद्धावस्था का भय है, शास्त्रज्ञ होने में वाद-विवाद का भय है, गुण होने पर दुष्टों का भय है और शरीर को काल का भय है। इस संसार में मनुष्यों के लिये सब वस्तुओं में भय है—केवल एक वैराग्य अभय है।

* * *

पानी से भरकर, हे बादल ! यदि तुम खाली हो गए हो तो इसी में तुम्हारी उत्तमोत्तम शोभा है।

इस प्रकार अनेक कवियों तथा भिक्षुकों को विमुख लौटते देख जब माघ को बडा दु:ख हुआ तो उन्होंने कहा—

दारिद्र्यज्वलसन्ताप: शान्त: सन्तोषवारिणा ।
दीनाशा-भङ्ग-जन्मातु - केनायमुपशाम्यतु ॥

अर्थात्—मैं अपनी दारिद्र्याग्नि को सन्तोषरूपी जल से शान्त कर लेता हूँ परन्तु दीनों को निराश होते देख जो सन्ताप होता है उसे क्यों कर शान्त करूँ ?

* * *

महाकवि माघ को भोज का पुरस्कार

एक दिन कविवर माघ अपनी गरीबी के कारण बहुत दुखी हुए तो उन्होंने अपनी स्त्री से कहा—प्रिये !

देशं स्वमपि मुञ्चन्ति मानम्लान महाशया ।
दिनावसाने व्रजति द्वीपान्तरमहर्मणि: ॥

अर्थात्—जो महापुरुष हैं वे आपत्तिकाल में अपना देश भी छोड़ देते हैं। देखो दिन के समाप्त हो जाने पर सूर्य भी द्वीपान्तर (दूसरे देश) में चले जाते हैं। (अत तुम्हारी सम्मति हो तो भोजराज के पास चलें।)

यह बात उनकी स्त्री को पसन्द आगई। निदान दोनों धारानगरी को पहुँचे। उनकी स्त्री राजसभा में 'माघकाव्य' लेकर उपस्थित हुई। भोज ने उसे खोलकर पढा तो एकाएक उनकी दृष्टि इस श्लोक पर पडी—

कुमुदवनमपश्रि श्रीमदंभोजषडम् ।
त्यजतिमुदमुलूक प्रीतिमांश्चक्रवाक: ॥

इसे पढ़ते ही राजा साहब का हाथ रुक गया। तब तक रानी की नींद खुल गई और वे सकपका कर उठ बैठीं। राजा साहब को मालूम हुआ कि वह व्यक्ति, जिसको उन्होंने रानी का कोई प्रेमी पुरुष समझा था, उनका लड़का है, तो वे बड़े प्रसन्न हुए।

दूसरे दिन भारवि बुलाये गये। राजा साहब तथा रानी दोनों ने उनका बड़ा सम्मान किया क्योंकि महाकवि के उस श्लोक ने ही दम्पत्ति को भारी विपत्ति से बचाया था। पीछे राजा साहब के अनुरोध करने पर भारवि ने उस श्लोक का दूसरा चरण भी बना दिया—

वृणुते हि विमृश्यकारिणम् गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः ॥

अर्थात्—सोच-समझ कर काम करनेवाले मनुष्य के पास श्री सम्पदा, उसके गुणों पर मुग्ध हो, स्वयं ही चली आती है।

* * *

अपना-पराया

महाकवि माघ जितने बड़े पंडित थे उतने ही दानी थे। दान कर ये निर्धन हो गये। विद्यार्थी इनकी दानशीलता तथा कीर्त्ति सुन इनके पास आते। परन्तु उन्हें खाली हाथ लौट जाना पड़ता था। ए बार एक भिक्षुक ने—जो कवि भी था—आकर याचना की। जब उ मालूम हुआ कि माघ स्वयं निर्धन हो गये हैं तब उनकी दानशील को लक्ष्य कर उसने कहा—

आश्वास्य पर्वतकुलं तपनोष्मतप्तम् ।
उद्दामदाव विधुराणि च काननानि ॥
नानानदीनद शतानि च पूरयित्वा ।
रिक्तोसि यज्जलद ! सैवतवोत्तमाश्री ॥

अर्थात्—सूर्य की गर्मी से तपे हुए पहाड़ों को आश्वासन दे सूर्य की प्रचण्ड किरणों से सूखे हुए जंगल और सैकड़ों नदी नालं

पंडितराज की नैपालयात्रा

पडितराज जगन्नाथ सस्कृत साहित्य के लब्धप्रतिष्ठ कवि हो गये हैं। आप दिल्लीपति शाहजहा के आश्रित थे। बादशाह ने आपको एक अँगूठी दी थी जिसकी क़ीमत एक लाख रुपये थी। उस अँगूठी मे यह गुण था कि वह एक बार जो इच्छा करो दे देती थी और फिर सदा के लिये नष्ट हो जाती थी। जगन्नाथ जी मे तम्बाकू खाने का ज़ोरों का व्यसन था। एक दिन पडितजी की इच्छा तम्बाकू खाने की हुई किन्तु चूने के अभाव से उनकी इच्छा पूरी न हो सकी। जब इन्हे तम्बाकू के तलब ने व्याकुल कर दिया तो इन्होने अँगूठी निकाल कर तम्बाकू के साथ मला और चूना बना कर ये खा गये।

दूसरे दिन जब बादशाह को यह समाचार मिला तो वे बहुत बिगडे। उन्होने पडितराज को यह कहकर अपने दरबार से निकलवा दिया—कि ऐसा व्यसनी पुरुष—जो तम्बाकू की तलब में लाखों रुपयों पर पानी फेर दे—हमारे यहाँ नही रह सकता।

वहाँ से निराश होकर पडितराज नैपाल के राजा के यहाँ पहुँचे। महाराज ने इनका अच्छा स्वागत किया। उन्होने इनके जेबखर्च के लिये कई सौ रुपये रोजाना बाँध दिया। परन्तु पडितराज तो लाखों के उडानेवाले थे। अत. उनके लिये यह रकम भी अपर्याप्त थी। इस पर कविजी को बड़ा क्षोभ हुआ और खिन्न हो उन्होने निम्नलिखित श्लोक बनाया—

दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा मनोरथान् पूरयितुं समर्थः।
नेपालभूपे [illegible] दीयमानं शाकाय वा स्यात् लवणाय वा स्यात्॥

अर्थात्—दिल्लीश्वर शाहजहाँ या स्वय जगदीश्वर ही मेरा मनोरथ

उदयमहिमरश्मिर्याति शीतांशुरस्तम् ।
हतविधि ललितानां ही विचित्रो विपाकः ॥

अर्थात्—सूर्योदय होने पर और चन्द्रमा के अस्त हो जाने पर कुमुदवन की शोभा बिगड़ गई। कमल-समूह में शोभा आगई। उल्लू का आनन्द जाता रहा और चकवा प्रसन्न हो गया। अभागों का कर्मफल विचित्र ही है।

इसे पढ़कर भोजराज को बड़ी प्रसन्नता हुई और उन्होंने माघ को खूब पुरस्कृत किया।

*　　　*　　　*

श्रीहर्ष का काव्य-कौशल

जिस श्रीहर्ष ने अपनी मनोहारिणी कविता के कारण काश्मीर देश में अपनी कीर्तिपताका फहराई उसी ने जयचन्द्र के दरबार में अपने पिता को परास्त करनेवाले मानी तार्किक उदयन का भी मद चूर्ण कर डाला। कहा जाता है, इस वचन को सुनकर ही उस तार्किक को हार मान श्रीहर्ष की श्रेष्ठता स्वीकार कर लेनी पड़ी—

हिंस्राः सन्ति सहस्रशोपि विपिने शौंडीर्यवीर्योद्यता ।
तस्यैकस्य पुनः स्तुमीमहि महः सिंहस्य विश्वोत्तरम् ॥
केलिः कोलकुलैर्मदोमदकलैः कोलाहलं नाहलैः
संहर्षो महिषैश्च यस्य मुमुचे साहंकृते हुंकृते ॥

अर्थात्—जंगल में बहुत से जंगली जानवर पाये जाते हैं परन्तु उनमें भी सिंह के पराक्रम की प्रशंसा की जाती है। उसके एक बार हुंकार कर देने पर शूकरों का खेल-तमाशा, मतवाले हाथियों का मद, तेंदुओं का कोलाहल, और भैंसों की छेड़खानियां भूल जाती हैं।

*　　　*　　　*

एक बाण चहुँआन त्रिपुरसुर शंकर बिद्धिय[1] ।
एक बाण चहुँ श्रान अमर[2] लक्खन्न[3] परिद्धिच[4] ॥
सो एक बाण स-भर[5] धनिय बियो-बान[6] तहँ मुक्किये[7] ।
घरियार एक इक मुग्गरिय[8] चहुँआन[9] नृप मत चुक्किये ॥

चार बान चौबीस गज अंगुल अष्ट प्रमान ।
एते पर सुलतान है मत चूकै चौहान ॥
धर पलट्यो पलटी धरी, पलट्यो हाथ कमान ।
चन्द कहै पृथिराज सों मत चूकै चौहान ॥
फेरि न जननी जनमिहै फेरि न खिंचै कमान ।
सात बार तुम चूकियो अब न चूक चौहान ॥*

चन्द कवि के ये छन्द सुनते ही पृथ्वीराज वीररस में भर गये और एक ही बाण में उन्होंने शहाबुद्दीन का मस्तक काट गिराया ।

* * *

हम्मीर-हठ

राजपुताने में—जयपुर के पास—रणथभौर का किला एक प्राचीन स्थान है । यह गढ़ दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन खिलजी के समय राजा हम्मीरदेव (चौहानवंशीय राजपूत) के अधीन था । अलाउद्दीन बादशाह का एक अपराधी सरदार—मीर मुहम्मद मगोल—किसी कारण

---

१ बिद्धिय = वेध दिया । २ अमर = पृथ्वीराज । ३ लक्खन्न = पृथ्वीराज का भाजा (इसे पृथ्वीराज ने मारा था) । ४ परिद्धिय = मारा । ५ सभर-धनिय = (१) साँभर झील के मालिक (२) युद्ध में जौहर दिखानेवाले । ६ बियो-बान = चुना हुआ तीर । ७ मुक्क्यिे = फेंकिये, छोड़िये । ८ मुँगरी से बजाया जायगा । ९ चहुँआन = चौहान (पृथ्वीराज का संबोधन) ।

* पृथ्वीराज सात बार शहाबुद्दीन से लड़ चुका था ।

पूर्ण करने में समर्थ हैं। नैपाल के राजा से जो कुछ मिला है यह साग भाजी और नमक भर के लिये ही हो सकता है।

कहा जाता है कि इसके बाद रुष्ट होकर वे नैपाल राज्य से चले आये।

* * *

अब न चूक चौहान

सुल्तान शहाबुद्दीन ने पृथ्वीराज को कैद कर लिया था। पृथ्वीराज तथा उनके राजकवि चन्दबरदाई इस बात का प्रयत्न करने लगे कि किस प्रकार शहाबुद्दीन को मारा जाय। अन्त में खूब सोच समझकर चन्द कवि ने शहाबुद्दीन से कहा—'यदि चमत्कार देखना हो तो आप महाराज का वह धनुष मँगा दीजिये जिसे आपने छिनवा लिया था।'

शहाबुद्दीन ने धनुष मँगवा दिया। पृथ्वीराज ने उसकी प्रत्यञ्चा चढ़ाई। चन्द कवि ने पृथ्वीराज से कहा—तैयार रहो। मैं तवे पर ककड़ी मारता हूँ। जिस स्थान में वह लगे उस स्थान में बाण मारियेगा। ऐसा कह चन्द ने एक ककड़ी फेंकी। तवे में ककडी लगने से जो झनकार हुई उसी को लक्ष्य करके पृथ्वीराज को बाण चलाना था। परन्तु बात कुछ और ही थी। चन्द और पृथ्वीराज ने स्थिर किया था कि बाण तवे की झनकार को लक्ष्य कर न चलाया जाय बल्कि शहाबुद्दीन को निशाना बनाकर उसका काम-तमाम कर दिया जाय। चन्द कवि ने शहाबुद्दीन से कहा कि पृथ्वीराज को उत्साहित करने के लिये मुझे कुछ कहने की आज्ञा दे दी जाय। ज्योंही शहाबुद्दीन ने आज्ञा दी चन्द बरदाई ने कहा—

एक बाण चहुँआन राम रावण उथप्पै[1]।
एक बाण चहुँआन करण अरजुन उथप्पै।

[1] उथप्पै=उखाड़ डाला।

सतबार जरासन्ध आगल ओरंग, विमुहा टीकम दीध बग ।
मेलि घात मारे मधुसूदन, असुर घात नोंखे अलग ॥
पारस हेकरसां हथणापुर, हटियो त्रिया पडंतां हाथ ।
देख जका दुरजोधण कीवी, पछै तक कीधी सज पाथ ॥
इकरां रामतणी तिय रावण, मंद हरेगो दहक मल ।
टीकम सोहिज पथर तारिया, जगनायक ऊपरां जल ॥
एक राड भवसाह अवत्थी, अमरस आणै केम उर ।
मालतणा केवा कण मांगा, सागा तू साले असुर ॥

भावार्थ—महाराणा ! आप उदास क्यों हो ? श्रीकृष्ण सौ बार जरासन्ध से हारे, परन्तु अन्त मे उन्होंने उसे हरा ही दिया। जब दुर्योधन ने द्रौपदी पर हाथ छोडा तो अर्जुन हट गया, परन्तु सब जानते हैं कि अन्त में अर्जुन ने दुर्योधन का क्या हाल किया। एक समय बुद्धिहीन रावण सीता को हर ले गया, परन्तु राम ने समुद्र पार कर उसका क्या हाल किया। इसलिये हे राणा ! तुम एक बार की हार पर ऐसा दुःख क्यों करते हो ? तुम तो अब भी दुश्मन की छाती में काँटे की तरह खटक रहे हो।

यह सुनते ही संग्रामसिंह को जोश आ गया और सेना एकत्र कर बाबर से युद्ध करने के लिये उन्होंने कूच कर दिया। राणा के सरदार लोग लड़ाई नहीं करना चाहते थे। इसलिये उन्होंने उनको जहर दे दिया जिससे उनकी मृत्यु हो गई।

* * *

(२)

एक बार किसी अवसर पर अकबर बादशाह की सवारी निकलनेवाली थी। बादशाह के हाथी पर खवासगी में बैठकर बादशाह पर चॅवर करने के लिये किसी राजपूत सरदार की आवश्यकता पड़ी। दरबारियों ने इस कार्य के लिये राजा कर्मसेन को चुना। कर्मसेन अजमेर के

भाग कर हम्मीरदेव की शरण में आया। जब बादशाह को यह मालूम हुआ तो उन्होंने हम्मीरदेव के नाम फरमान निकाला कि मगोल को पनाह देने का तुम्हे कोई अधिकार नहीं है। उसे तुरन्त छोड दो नहीं तो तुम्हारे लिये अच्छा न होगा। राजा हम्मीरदेव ने बादशाह के फरमान के उत्तर में निम्नलिखित दोहे लिख भेजे—

धड नच्चे लोहू बहै, परि बोले सिर बोल।
कटि कटि तन रन में परै, तऊ न देहुँ मँगोल॥
सिंह-गमन, सुपुरुष-वचन, कदलि फरै इक वार।
तिरिया-तेल, हमीर-हठ, चढ़ै न दूजी वार॥

अर्थात्—लडाई में चाहे मेरे शरीर की धज्जी धज्जी उड जायँ तो भी मगोल को वापस न दूँगा।

सिंह का गमन (महगाम) एक ही वार होता है, सज्जन एक ही वार अडोल वचन बोलता है, केला वृक्ष एक ही वार फलता है, स्त्री को तेल (विवाह के समय) एक ही वार चढ़ता है और हम्मीर राजा को हठ भी एक ही वार आता है—अर्थात् मेरा हठ बदल नहीं सकता।

चारणों का वीर सन्देश

(१)

सन १५२७ ई० में महाराणा संग्रामसिंह और बाबर बादशाह के बीच लडाई हुई। इस लडाई में राणा जी हार गये। परन्तु राणा साँगा ने प्रण किया कि जब तक मैं बाबर को जीत न लूगा चित्तौड की ओर कदम न रक्खूगा। राणा जी की सेना के सरदार लोग विजय पाने की आशा पहले ही छोड चुके थे। अपना प्रण तथा सेना की दशा का ख्याल कर साँगा के उदासी छा गई। इतने में टोडरमल नामक चारण(भाट) आया। उसने महाराणा की चिन्ता देख यह छन्द पढ़ा—

रियासतों के शासक मराठों को रुपये देकर अपने देश की रक्षा करते थे। एक बार इसी प्रकार दो रियासतों की ओर से होलकर की फौज के अफसर से सन्धि की बातचीत की जा रही थी। एक चारण घोड़े पर बैठा हुआ उधर से जा रहा था। तबू-डेरे देखकर वह घोड़े से उतर पड़ा और पूछा—'यहां क्या हो रहा है?' उत्तर मिला कि "राजाओं के आदमी मल्हारराव की फौज को रुपये देकर अपने देश को लूट-मार से बचाने की बातचीत कर रहे हैं। शोक है कि वे लड़कर उसे हटाने के लिए तैयार नहीं हैं।" जिस तबू में सन्धि की बातचीत हो रही थी उसके बाहर खड़े होकर चारण ने जोर जोर से यह दोहा कहा—

सिंहा सिर नीचा कियाँ गाडर करे गिलार।
अधिपतियाँ सिर ओढणी माथे पाग मल्हार॥

भावार्थ—सिंहों ने सिर नीचा कर लिया और स्यार खुशी से हँस रहे हैं। राजाओं के सिर पर ओढनी है, अर्थात् वे स्त्रियां जैसे बन गए हैं, और मल्हारराव के सिर पर पगडी है, जिसका आशय यह कि वे मर्द हैं।

यह सुनते ही राजपूतों में जोश भर आया और सुलह की बातचीत बन्द करके वे लड़ने को तैयार हो गए। कहना न होगा कि उन सबों ने होलकर की फौज को लड़ाकर भगा दिया।

* * *

(४)

महाराज विजयसिंह के मरने पर (१७९३ ई० में) उनका पोता भीमसिंह गद्दी का हकदार होता था। भीमसिंह ने जो जो गद्दी के हकदार थे उन सब को मरवा डाला। सिर्फ एक व्यक्ति मानसिंह रह गया। मानसिंह जालौर के किले में था। भीमसिंह ने वहाँ फौज भेजी। कई दिनों तक लड़ाई होती रही। परन्तु अन्त में रसद खतम हो जाने के कारण उसे खाली करने का निश्चय

रहनेवाले एक राठौर सरदार थे और बादशाह के यहाँ नौकर थे। यद्यपि बादशाह की खवासगी एक बड़ी इज्जत की जगह है और राजा का सब से बडा सरदार या दीवान भी इस कार्य से अपने को कृतकृत्य समझता है, परन्तु राजपुताने के किसी राजा और सरदार ने भी यह स्वीकार नहीं किया कि सब के सामने वह उन पर चवँर डुलाये। कहते सुनने पर कर्मसेन तैयार हो गया और खवासगी स्वीकार करने पर बादशाह ने उसको एक बडा राज्य देने को कहा। सवारी भी तैयार हो गई। राजपूत सर्दारों ने कर्मसेन को मना किया, कि यह अपने लिये बेइज्जती की बात है और राजपूतों की शान के विरुद्ध है कि बादशाह पर वे चवँर करें। परन्तु कर्मसेन को राज्य का लालच था। आखिर वह चवँर लेकर हाथी पर जा बैठा। एक चारण ने राजपूतों के असन्तोष और दुःख को देखकर कहा—'मैं कर्मसेन को इस अपमान से बचाता हूँ।' कर्मसेन हाथ मे चॅवर लिये हाथी पर बैठा था। इतने ही में चारण पहुँचा और कर्मसेन को पुकार कर उसने निम्नलिखित दोहा सुनाया—

कम्मा उगरसेन रा तो जननी बलिहार।
चवँर न झल्ले शाह पर तू झल्ले तलवार॥

भावार्थ—ऐ कर्मसेन! मैं तेरी माता पर बलिहार जाता हूँ। तू शाह पर चवँर न झले, तलवार झले।

यह सुनना था कि कर्मसेन तुरन्त हाथी पर से कूद पडा और उसने खवासगी मे बैठने से इनकार कर दिया। इस प्रकार राजपूतों का मान रह गया।

* * *

(२)

मल्हारराव होलकर के समय की बात है। राजपूताने में मराठों ने बड़ी लूटमार मचा रक्खी थी। इस समय जयपुर, जोधपुर और

गोसाईं जी और रहीम

गोस्वामी तुलसीदास जी से अब्दुर्रहीम खानखाना का बड़ा स्नेह था। ऐसा कहा जाता है कि एक बार एक ब्राह्मण अपनी कन्या के विवाह के लिये धन न होने से घबराया हुआ गोस्वामी जी के पास आया। गोसाईं जी को उस पर दया आगई और उन्होंने उसे रहीम के पास भेज दिया। साथ ही, दोहे की निम्नलिखित पंक्ति लिख कर दे दी और ब्राह्मण से कह दिया कि यह खानखाना साहब को दे देना।

सुरतिय नरतिय नागतिय यह चाहत सब कोय।

रहीम ने ब्राह्मण को यथेष्ट धन दे कर बिदा किया और उस दोहे का उत्तरार्द्ध यों लिख कर गोस्वामी जी के पास भेजवा दिया—

गोद लिये हुलसी फिरै तुलसी सो सुत होय॥

* * *

रहीम और प्रेमपत्र

एक बार रहीम का एक नौकर छुट्टी ले कर घर गया। घर में उसकी स्त्री का पहले पहल आगमन हुआ था। छुट्टी की अवधि पूरी हो जाने के बाद वह अपनी नौकरी पर लौटा। पति के चले जाने पर नवागता पत्नी का जी ऊबने लगा। जब वह किसी तरह अपने को न रोक सकी तो उसने एक बरवा लिख कर अपने पति के पास भेजा। पत्र में उसने यह भी लिख दिया कि इस छन्द को राजा साहब को दिखा देना। अस्तु। पति महाशय उसे ले कर दरबार में पहुँचे और रहीम को वह पत्र दिया। उसमें लिखा था—

किया। लोगों ने अपना बोरिया-बसना सँभाला और मानसिंह ने आज्ञा दी कि किला खाली कर दो। परन्तु मानसिंह का एक चारण—'बीजा जी' किला छोडने पर राजी न हुआ। शिकायत होने पर मानसिंह ने उसे बुलाया। उसने यह दोहा कहा—

आभ फटै धर ऊससैं कटैं बगतरां कोर।
सिर टूटै धड तड़फड़ै जद छूटै जालौर॥

भाव यह हुआ—मैं जालौर तब छोड़ूगा जब आसमान फट जायगा, जमीन उभर कर ऊँची हो जायगी, बख्तरों के किनारे तलवारों से कटेंगे, सिर कट जायँगे और धड जमीन पर पडे तडफडायेंगे।

यह सुनकर सबको फिर जोश आया और वे लडते ही रहे। थोड़े ही दिनों में महाराजा भीमसिंह के मरने की खबर आई और मानसिंह जी ई० सन् १८०३ में जोधपुर के महाराजा हो गये।

* * *

राणा प्रताप और रहीम कवि

रहीम, महाराणा प्रतापसिंह की देशभक्ति और उनके स्वाभिमान की बडी प्रशंसा किया करते थे। एक बार इनके घर की बेगमें राजपूतों के हाथ पड गई। राणा जी ने आदरपूर्वक उनको रहीम के पास भेज दिया। तब से राणा जी पर रहीम की बडी श्रद्धा रहने लगी। इसका बदला चुकाने के लिये इन्होंने एक बार अकबर को मेवाड पर एक बडी चढाई करने से रोका भी था। राणा जी के विषय में इन्होंने राजपूतानी बोली में बहुत से दोहे भी बनाये हैं। उन में से एक यह है—

ध्रुव रहसी रहसी धरा, खिस जासे खुरसाण।
अमर विसम्भर ऊपरै, रखियौ निहचौ राण॥

भावार्थ यह कि हे विश्वभर, आप राणा (प्रतापसिंह) को अमर रक्खें।

* * *

रहीम ने उत्तर दिया—

जेहि रज मुनि-पतनी तरी, सो ढूंढ़त गजराज ॥

* * *

नरहरि और बादशाह अकबर

एक बार कोई कसाई एक गाय लिये जाता था। कसाई के हाथ से छूटकर काँपती हुई वह गाय किसी प्रकार कविवर नरहरि के पास जा छिपी। इनको गाय पर दया आ गई और इन्होंने वह गाय फिर कसाई के हाथ न लगने दी। कवि जी ने एक छप्पय लिख, गाय के गले में लटका कर, उसे अकबर के सामने उपस्थित किया। ऐसा कहा जाता है कि इसके प्रभाव से बादशाह ने न केवल वह गाय छुड़ा दी बल्कि अपने राज्य भर में यह घोषणा कर दी कि सप्ताह में एक दिन (शनिवार को) गो-वध न किया जाय। वह छप्पय जिससे प्रभावित हो कर हफ्ते में एक दिन गो-कुशी बन्द की गई थी, यों था—

अरिहु दन्त तृन धरै, ताहि मारत न सबल कोइ।
हम सन्तत तृन चरहिं, बैन उच्चरहिं दीन होइ ॥
अमृत पय नित स्रवहिं, बच्छ महि थंभन जावहिं।
हिन्दुहिं मधुर न देहिं, कटुक तुरकहि न पियावहिं ॥
कह कवि नरहरि अकबर सुनो, बिनवत गउ जोरे करन।
अपराध कौन मोहिं मारियत, मुयहु चाम सेवत चरन ॥

* * *

रायप्रवीन वेश्या और अकबर

रायप्रवीन महाराज इन्द्रजीत की प्रेमिका थी। गणिका होने पर भी वह पतिव्रता थी। एक बार उसके रूप-लावण्य पर मुग्ध हो कर अकबर ने उसे अपने यहाँ बुला भेजा। उस समय रायप्रवीन ने—जो अच्छी कविता भी करती थी—इन्द्रजीत की सभा मे जाकर यह कवित्त पढ़ा—

प्रेम प्रीति कौ बिरवा दिह्यौ लगाय।
सीचन की सुधि लीज्यौ मुरझि न जाय॥

रहीम को इसका मतलब समझने में देर न लगी। उन्होंने उस नौकर को घर पर रहने के लिये छः महीने की लम्बी छुट्टी दे दी और उसके हाथ उसकी स्त्री के लिये बहुत से कपडे और गहने भी भेज दिये।

कहते हैं कि रहीम को यह छन्द इतना पसद आया कि उन्होंने अपने प्रसिद्ध ग्रथ—'बरवै नायिकाभेद' के लिये यही छन्द चुना।

* * *

रहीम और रीवाँ के महाराज

रहीम दान करते करते एक बार बडे गरीब हो गये। इन्होंने किसी भुजवे के यहा नौकरी कर ली। एक दिन ये भाड झोंक रहे थे। उसी समय महाराजा साहब रीवा उधर से आ पडे। उन्होंने इनको पहचाना और पूछा—

जाके सिर अस भार, सो कस झोंकत भार अस।

रहीम ने सुनते ही जवाब दिया—

रहिमन उतरे पार भार झोंकि सब भार में॥

* * *

रहीम और अकबर

बादशाह अकबर अपने दरबार मे बैठे थे। तब तक उधर से धूल उछालता हुआ एक हाथी निकला। अकबर ने हाथी की ओर उँगली दिखा कर अब्दुर्रहीम खानखाना से प्रश्न किया—

धूर धरत निज सीस पै, कहु रहीम केहि काज।

है गयो रंक ते राउ तहीं जब बीरबली बलबीर निहारयो।
भूलि गयो जग की रचना चतुरानन बाय रह्यो मुख चारयो॥

तब बीरबल ने परम प्रसन्न हो कर इनसे फिर कहा कि 'मागु'। इसे केशवदास ने यो व्यक्त किया है—

यों ही कह्यो जु बीरबल, माँगु जु माँगन होय।
माँग्यो तुव दरबार में, मोहि न रोकै कोय॥

* * *

रायप्रवीण का यौवन-गर्व

एक बार अकबर बादशाह ने प्रवीणराय वेश्या को अपने दरबार में बुला भेजा। दरबार मे पहुँचने पर अकबर ने प्रवीणराय से पूछा—

ऊँचे ह्वै सुर वश किये, समुहे नर वश कीन।

रायप्रवीण की अवस्था कुछ ढल चुकी थी अतएव बादशाह के कटाक्ष को समझ कर उन्होंने कहा—

अब पताल वश करन को ढरकि पयानो कीन॥

बादशाह ने फिर कहा—

युवन चलत तिय देह तें, चटकि चलत किहि हेत?

भाव था कि—अब तो तुम्हारी देह से जवानी जा रही है। इस तरह चटक मटक कर क्यो चलती हो। इसे सुन कर तुरन्त प्रवीणराय ने उत्तर दिया कि—

मन्मथ बारि मसाल को सैंति सिहारो लेत॥

अर्थात्—कामदेव मसाल को जला कर यौवन का हिसाब (लेखा) लेता है (उसी रोशनी की चटक मटक है) इन सार्थक उत्तरों को सुनकर बादशाह बहुत प्रसन्न हुए।

* * *

आई हौं बूझन मंत्र तुम्हैं निज सासन सों सिगरी मति गोई।
देह तजौं कि तजौं कुलकानि हिये न लजौं लजिहै सब कोई॥
स्वारथ औ परमारथ को गथ चित्त विचारि कहौ अब सोई।
जासें रहै प्रभु की प्रभुता अरु मोर पतिव्रत भंग न होई॥

इस बात पर इन्द्रजीत ने उसे अकबर के यहां न भेजा। तब अकबर ने क्रोध करके उनके ऊपर एक करोड़ रुपये का जुरमाना किया। उस समय केशवदास ने बीरबल द्वारा आगरे जा कर यह जुरमाना माफ कराया। रायप्रवीन वेश्या ने अकबर के यहां इस मौके पर निम्न लिखित दोहा पढ कर अपना पातिव्रतधर्म बचाया—

बिनती रायप्रवीन की सुनिये साहि सुजान।
जूठी पातरि भखत हैं बारी, बायस, स्वान॥

* * *

महाकवि केशवदास और बीरबल

बीरबल ने केशवदास के जिस छन्द से प्रसन्न हो कर रायप्रवीन का जुरमाना माफ कराया था, वह यह है—

पावक पच्छी पसू नर नाग, नदी नद लोक रचे दसचारी।
केसव देव अदेव रचे, नरदेव रचे रचना न निवारी॥
कै बरबीर बली बलबीर, भयो कृतकृत्य महाव्रतधारी।
दै करतापन आपन ताहि, दई करतार दुवौ कर तारी॥

इस छन्द को सुन कर महाराज बीरबल इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने एक करोड़ का जुर्माना अकबर से माफ करा दिया और छ लाख रुपये की हुँडिया जो उनकी जेब में थी वे निकाल कर केशवदास को तुरन्त दे दी। तब केशव ने परम प्रसन्न हो कर यह छन्द पढा—

केसवदास के भाल लिख्यो विधि रंक को अंक बनाय सँवारयो।
छोडे छुट्यो नहिं धोये धुरो बहु तीरथ के जल जाय पखारयो॥

चकित भँवर रहि गयौ, गमन नहिं करत कमल बन।
अहि फनि मनि नहिं लेत, तेज नहिं बहत पवन घन॥
हंस मानसर तज्यो चक्क चक्की न मिलै अति।
बहु सुन्दरि पद्मिनी पुरुष न चहैं न करै रति॥
खलभलित सेस, कवि गग भनि, अमित तेज रवि-रथ खस्यो।
खानानखान बैरम सुअन जि दिन क्रोध करि तँग कस्यो॥

* * *

आदर्श दैन्य

अकबर के मरने पर जहांगीर ने रहीम को राजद्रोह का अभियोग लगा कर कैद कर लिया। किसी प्रकार जेल से मुक्त होने पर कुछ दिनों तक इन्हें आर्थिक कष्ट था। ये चित्रकूट चले आये। परन्तु याचकगण इनका पीछा क्यों छोड़ने लगे। यहां भी हाथ पसारने वाले पहुँचे। उनसे तंग आ कर रहीम ने यह दोहा कहा था—

ये रहीम दर दर फिरैं माँगि मधुकरी खाहिं।
यारो यारी छोड़ दो वे रहीम अब नाहिं॥

इस पर भी जब माँगने वालों से पिंड न छूटा तो इन्होंने अपने मित्र रीवानरेश के पास यह दोहा लिख भेजा—

चित्रकूट में रमि रहे रहिमन अवध-नरेश।
जा पर बिपदा परत है, सो आवत यहि देश॥

दोहे पर प्रसन्न हो कर महाराज रीवाँ ने बहुत सा धन रहीम के पास भेज दिया। परन्तु इन्होंने प्रायः सब याचकों में बांट दिया।

* * *

मानसिंह और हरिहर कवि

कहते हैं, महाकवि हरिहरनाथ शाहजहां के समय के कवि थे। एक बार आमेर के राजा मानसिंह की प्रशंसा में उन्होंने कई पद्य पढ़े।

पृथ्वीराज और उनकी विदुषी रानी

महाराणा प्रतापसिंह और अकबर से कभी नहीं बनी। एक बार दोनो मे बड़ा विवाद हो गया। इस लड़ाई का हाल सुनकर पृथ्वीराज की रानी ने अपने पति को पत्र लिखा—

पति जिद की पतसाह सूँ यहै सुणी मैं आज।
कहँ पातल अकबर कहाँ करियो बड़ो अकाज॥

अर्थात्—हे प्राणपति, मैंने सुना कि आपने राणा की ओर से अकबर से वादा किया है। यह ठीक नहीं किया। सोचिये तो कहा अकबर और कहा प्रताप। इसके उत्तर मे पृथ्वीराज ने यह कवित्त लिख कर अपनी स्त्री के पास भेज दिया—

जब ते सुने है बैन तब ते न मोको चैन
पाती पढ़ि नेक सो विलम्ब न लगावेगो।
लैकै जमदूत से समस्त राजपूत आज
आगरे में आठो याम ऊधम मचावेगो॥
कहै पृथ्वीराज प्रिया नेक उर धीर भरो
चिरजीवी रानाश्री मलेच्छन भगावेगो।
मन को मरद मानी प्रबल प्रतापसिंह
बब्बर ज्यो तड़प अकब्बर पै आवेगो॥

* * *

गङ्ग और रहीम

गंग धुरन्धर कवि थे। इधर अब्दुर्रहीम खानखाना भी कविता के बड़े प्रेमी थे। कहा जाता है कि एक बार आप को खानखाना ने एक छप्पय पर छत्तीस लाख रुपये पुरस्कार दिये थे। वह छन्द यो है—

वह कागज यथास्थान दीवाल पर लगा दिया गया। कमरे में कुछ नई चीज लिखी हुई पा कर राजा साहब ने उसे पढा। उसमें लिखा था—

> नहि पराग नहिं मधुर मधु, नहि विकास इहिं काल।
> अली कली ही सों बिंध्यौ आगे कौन हवाल॥

राजा साहब के ऊपर इनका वही प्रभाव पड़ा जिसके लिये उस दोहे का निर्माण हुआ था। तब से उनके राज-कार्य की किसी ने शिकायत नहीं की।

*   *   *

(२)

जयपुर के महाराज जयसिंह के पास एक चित्रकार चित्र बना कर ले गया। उस चित्र मे उसने दिखाया था कि जगल मे एक पेड है जिसके नीचे सॉप, मोर, हरिन और बाघ बैठे हैं। महाराज ने चित्र देख कर चित्रकार से कहा कि तुम्हारा चित्र ठीक नहीं है, क्योंकि तुमने भक्ष्य और भक्षक को एक साथ पेड़ के नीचे बैठा दिखाया है। इनमें तो स्वाभाविक बैर है।

पुरस्कार पाने की आशा छोड कर उदास हो वह चित्रकार अपने घर को लौट रहा था। रास्ते मे उसे बिहारीलाल मिल गये। चित्रकार ने वह चित्र उन्हें दिखाया और कहा कि महाराज इस दृश्य को अस्वाभाविक बताते हैं। बिहारीलाल ने कहा—अच्छा, चित्र मुझे दे दो। मैं उन्हे समझा दूंगा।

दरबार में आकर बिहारी ने महाराज को वह चित्र दिखाया और कहा कि इसमें क्या असभव बात है? महाराज ने उत्तर दिया, "भक्ष्य और भक्षक का एक साथ बैठना।" यह सुनते ही बिहारीलाल ने निम्नलिखित दोहा कहा—

उन्हीं पर प्रसन्न हो कर सवाई जी ने इन्हें एक लाख रुपयों से पुरस्कृत किया। वे छन्द थे—

बलि बोई कीरति-लता, कर्ण करी द्वै पात।
सींची मान महीप ने जब देखी कुम्हिलात॥
जाति जाति ते गुन अधिक, सुन्यो न कबहूँ कान।
सेतु बाँधि रघुबर तरे, हेला दे नृप मान॥

* * *

हरिहर कवि का सर्वस्व-समर्पण

जब हरिहरनाथ घर लौट रहे थे तब उन्हें एक ब्राह्मण मिला। उसने एक ऐसा दोहा सुनाया जिस पर मुग्ध हो कर इन्होंने अपना धन उसे दे डाला। ब्राह्मण ने यह दोहा कहा था—

दान पाय दोऊ बढ़े की हरि की हरिनाथ।
उन बढ़ि ऊँचे पग किये इन बढ़ि ऊँचे हाथ॥

* * *

जयसिंह और बिहारीलाल

(१)

इनसे पढवाया और पुरस्कार-स्वरूप कवि जी को बावन गाँव दिये। इतना ही नहीं, महाकवि की उक्ति का शभा जी पर ऐसा प्रभाव पडा कि वीरता के आवेश मे आकर उन्हाने दिल्लीगढ फतेह करने की प्रतिज्ञा की जिसे उन्हों ने जीत भी लिया। वह कवित्त जिसे भूषण को बावन बार शभा जी को सुनाना पडा था, यो था—

इन्द्र जिमि जम्भ[1] पर, बाडव[2] सुअंभ[3] पर
रावण सदंभ पर रघुकुलराज है।
पौन बारिबाह[4] पर, शभु रतिनाह[5] पर
ज्यो सहस्त्रबाहु पर राम[6] द्विजराज है॥
दावा द्रुमदंड[7] पर, चीता मृगझुड पर,
'भूषन' वितुड[8] पर जैसे मृगराज[9] है।
तेज तम-अस[10] पर, कान्ह जिमि कंस पर,
त्यो मलेच्छ-बंस पर शेर शिवराज[11] है॥

* * *

भूषण और छत्रसाल

कविवर भूषण शिवा जी के पौत्र साहु जी के यहाँ भली भाँति सम्मानित होने के अनन्तर पन्ना-नरेश छत्रसाल के यहाँ आए। वहाँ भी कवि का यथेष्ट सत्कार किया गया। कवि जी की विदाई करते समय महाराज ने पालकी का डडा स्वय अपने कन्धे पर रक्खा। भूषण यह देख गद्गद हो गए और पालकी से कूदकर उन्होने निम्नलिखित कवित्त कहा—

---

१ जंभ=एक दैत्य। २ वाडव=वडवानल, समुद्र की आग। ३ सुअंभ=पानी। ४ बारिबाह=बादल। ५ रतिनाह=कामदेव। ६ रामद्विजराज=परशुराम। ७ द्रुमदंड=पेडों के लट्ठे। ८ वितुंड=हाथी। ९ मृगराज=सिंह। १० तमअस=अंधकार। ११ शिवराज=शिवा जी॥

कहलाने एकत वसत अहि मयूर मृग बाघ।
जगत तपोवन सो कियो दीरघ दाघ निदाघ॥

अर्थात्—भयंकर गर्मी ने जगत् को तपोवन सा बना दिया है। त्रस्त होकर साप, मोर, हिरन और बाघ पेड़ की छाया में बैठे हैं। इस कष्ट में पड़ कर अब उनका स्वाभाविक वैर जाता रहा।

बिहारीलाल की बात राजा साहब के मन बैठ गई और उन्होंने चित्रकार को बहुत सा धन पुरस्कार-स्वरूप दे कर विदा किया।

*　　*　　*

भूषण कवि और शंभा जी

महाकवि भूषण वीर रस की कविता के आचार्य समझे जाते हैं। कहते हैं, इनकी कविता में वह जोश था जिससे मुर्दा भी एक बार छाती फुला देता था। एक बार ये मुगल बादशाह—औरंगज़ेब के दरबार में बुलाये गये। इनसे वीर-रस की कोई कविता सुनाने के लिये कहा गया। परन्तु इन्होंने कहा—हुजूर! गुस्ताखी माफ हो तो एक बात कहूँ। बादशाह ने कहा—हाँ हाँ कहो! भूषण ने कहा—मेरी कविता सुनने के पहले आप लोग जरा अपने हाथ धो डालें। बादशाह ने पूछा—यह क्यों, इनके मुँह से निकला—हुजूर! शृङ्गाररस की कविता सुनते-सुनते आप लोगों का हाथ नापाक जगह पर पड़ता रहा होगा, मेरी कविता में वह मूछों पर पहुँच जायगा। बादशाह यह सुनकर बहुत बिगड़े और कहा—लेकिन अगर ऐसा न हुआ तो तुम्हें प्राणदण्ड मिलेगा। ये भला ऐसी धौंस क्यों सुनते! फ़ौरन दरबार से निकल पड़े और शिवाजी के पुत्र शंभा जी के यहाँ पहुँचे।

शंभा जी के दरबार में जाने पर भूषण ने उनके पिता की वीरता की प्रशंसा में एक ऐसा कवित्त पढ़ा जिसे उन्होंने बहुत पसन्द किया। कहा जाता है कि एक-एक करके बावन बार वह छन्द शंभा जी ने

उन्हें वह बहुत पसन्द आया और निम्नलिखित दोहा तो उन्हें बहुत ही सुन्दर जँचा—

> कँवल जो बिगसा मानसर, बिनु जल गयेउ सुखाइ।
> सूखि बेलि फिरि पलुहइ, जउ पिउ सीचइ आइ॥

राजा ने इसके रचयिता मलिक मुहम्मद जायसी को बुलाकर अपने दरबार में उनका बड़ा आदरभाव किया। तभी से ये 'जायसी'—यानी जायस (जिला रायबरेली) के निवासी कहलाये।

* * *

रणजीतसिंह का अटक पार करना

महाराज रणजीतसिंह ने सिक्ख सेना लेकर सिंधु नदी को पार किया। नदी खूब चढ़ी हुई थी और उनका सेनापति किनारे पर रुका हुआ था। सेनापति ने महाराज से पूछा—यह अटक कैसे पार होगा? महाराज भगवद्भक्त तो थे ही, उन्होंने ईश्वर का स्मरण किया और यह कहते हुए पानी में चल पड़े—

> सबै भूमि गोपाल की यामें अटक कहा?
> जा के मन में अटक है सोई अटक रहा।

कहना न होगा कि बिना किसी कठिनता के वे कुशल-पूर्वक नदी पार हो गए।

* * *

काशिराज और भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

काशीनरेश, महाराजा ईश्वरीप्रसाद नारायणसिंह, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की नाट्यकला पर रीझ गए थे। यहाँ तक कि नियमानुसार सोमवार को वे किसी से न मिलते थे। परन्तु भारतेन्दु जी के लिये कोई रोक न थी। एक बार हरिश्चन्द्रजी ने महाराज को लिखा कि सोमवार

राजत अखंड तेज छाजत सुजस बडो
गाजत गयन्द दिग्गजन हिय-साल को।
जेहि के प्रताप सो मलीन आफताब[1] होत
ताप तजि दुज्जन करत बहु ख्याल को॥
साज सजि गज तुरी पैदर कतार दीनें,
'भूखन' भनत ऐसो दीनप्रतिपाल को।
और रावराजा नेकु मन में न लाऊँ अब
साहू को सराहौं कै सराहौं छत्रसाल को॥

* * *

महाराज छत्रसाल और बाजीराव पेशवा

महाराज छत्रसाल ने बाजीराव को दोहों में पत्र लिखा था। उनमें निम्नलिखित दोहा बड़ा प्रसिद्ध है—

जो गति भई गजेन्द्र की, सो गति पहुँची आज।
बाजी जात बुन्देल की, राखो बाजी लाज॥

बाजीराव का हृदय इस पत्र के पढ़ने से द्रवित हो गया और उन्होंने राजा छत्रसाल को अपनी बडी सेना लेकर लडाई में उचित सहायता पहुँचाई।

* * *

जायसी का बारहमासा

योगी समझ कर बहुत से लोग मालिक मुहम्मद जायसी के शिष्य हो गये थे। शिष्यगण जायसी के बनाये बारहमासों को गाया करते थे। इनका एक चेला अमेठी (राज्य, जिला सुलतानपुर, अवध) आया। वह इनका बनाया हुआ नागमती का बारहमासा गा गा कर घर घर में माँगा करता था। एक दिन वहाँ के राजा साहब ने भी इस सुन्दर

१ आफताब=सूर्य।

रहे थे। लड़की ने ऐसा हल्ला मचाया कि उनकी नीद उचट गई। तब तक "सौदा" आ गए। इन्हे देखते ही नवाब साहब ने कहा—मिर्जा! इस लडकी ने मुझे बडा हैरान कर रक्खा है। इसकी निन्दा मे कोई कविता लिखो। सौदा के लिये यह कौनसी बडी बात थी। उन्होंने उस लडकी पर तुरन्त यह निन्दात्मक शेर बना डाला—

लडकी वह कि जो लडकियों मे खेले।
न कि लौंडो मे जाके डंड पेले॥

* * *

शेर के शिकार पर सौदा

एक बार नवाब असफुद्दौला शिकार को गए। जगल से खबर मिली कि नवाब ने भीलो के वन मे एक सिंह मारा है। सौदा ने भी इसे सुना। उन्होंने इस विषय पर निम्नलिखित शेर पढ़ा—

यारो यह इब्ने मुलज़िम पैदा हुआ दोबारा।
शेरे ख़ुदा को जिसने भीलो के वन में मारा॥

नवाब ने भी सुना। मित्र की तरह वे कहने लगे—मिर्जा तुमने मुझे खुदा के शेर का घातक बनाया। सौदा ने हँसकर कहा—हुजूर! सिंह तो खुदा ही का था, न मेरा न आप का।

नोट—इब्ने-मुलजिम उस व्यक्ति का नाम था जिसने शेरे-खुदा—हजरतअली को कत्ल किया था। यहाँ पर 'इब्ने-मुलजिम' और 'शेरे-खुदा' शब्द द्वयर्थक हैं जो नवाब आसफुद्दौला और हजरत अली—दोनो पर लागू हो सकते हैं। यथा—इब्नेमुलजिम=(१) कातिल (२) हजरत अली को क़त्ल करनेवाले का नाम। शेरे-खुदा=(१) खुदा का शेर (२) हजरत अली का नाम।

* * *

होने के कारण आज दर्शन का सुयोग न मिल सका। इसके उत्तर में काशिराज ने यह दोहा लिख भेजा—

हरिश्चन्द्र को चन्द्रदिन, तहाँ कहाँ अटकाव।
आवन को नहिं मन रह्यौ, इहै बहाना भाव॥

* * *

जहाँनारा और उसकी दासी

एक बार जहाँनारा (दाराशिकोह की बहन और शाहजहाँ बादशाह की पुत्री) ने दासी से दर्पण लाने के लिये कहा। दासी अदब से दर्पण ला रही थी। अचानक वह उसके हाथ से गिरकर टूट गया। दर्पण बहुमूल्य था। दासी डरती हुई सामने आई, और दीन भाव से अपने अपराध की सूचना यह कह कर दी—

अज़ क़ज़ा आईनए-चीनी शिकस्त।

अर्थात्—इत्तिफ़ाक़ से यह चीनी आईना टूट गया। सुनकर जहाँनारा ने भयभीत दासी को आश्वासन देते हुए मुसकिरा कर फ़ौरन कहा—

ख़ूब शुद असबाबे ख़ुदबीनी शिकस्त।

अर्थात्—अच्छा ही हुआ कि ख़ुदबीनी का असबाब—अहंकार का एक साधन—टूट गया।

'ख़ुदबीनी' में बड़ा सुन्दर चमत्कारपूर्ण श्लेष है। ख़ुदबीनी का अर्थ है अपने आप को देखना, अर्थात् गरूर अहंकार। दर्पण उपर्युक्त ख़ुदबीनी के—अहंकार के बढ़ाने का एक साधन ही तो है।

* * *

नवाब आसफ़ुद्दौला और चञ्चल लड़की

नवाब आसफ़ुद्दौला के एक धाय थी। उसके एक छोटी सी कन्या थी। कन्या प्यार के मारे बड़ी ढीठ हो रही थी। एक दिन नवाब

ऐ अन्दलीबे नालाँ दम दर गुलू गिरह बद।
नाजुक मिजाज शाहाँ तावे फुगाँ नदारद॥

अर्थात्—ऐ चहकने वाली बुलबुलो! खामोश रहो। मेरा बाप शाह औरंगजेब नाजुक-मिजाज है। उसमें रोने-चिल्लाने (शोरगुल) को बर्दाश्त करने की ताकत नहीं है।

इत्तिफाक से सम्राट ने उसका यह शेर सुन लिया और बेटी की काव्य-कुशलता से प्रसन्न हो उसने बेटी को शायरी करने की आज्ञा दे दी।

* * *

औरंगज़ेब को शाहजहाँ का पत्र

औरंगजेब ने अपने पिता शाहजहा को कैद कर लिया था। शाहजहा को यमुना का पानी पीने की बडी इच्छा थी क्योंकि पिछले दस वर्ष से वह यमुना का ही पानी पीता आ रहा था। बादशाह की और चीजे बद होने के साथ-साथ यमुना का पानी भी बद कर दिया गया। इस पर दुखी हो उसने निम्नलिखित शेर लिखकर अपने पुत्र औरंगजेब के पास भिजवाया—

आफरी बाद हिन्दुआँ बरबाब,
मुर्दारा मी दिहन्द दायम आब।
ऐ पिसर! तू अजब मुसलमानी,
ज़िन्दईरा ब आब तरसानी॥

इसका आशय यह है—हिन्दू प्रशसा के योग्य हैं क्योंकि वे मरने पर भी अपने पितरों को पानी पिलाते हैं। तुम विचित्र मुसलमान हो जो अपने वृद्ध पिता को इस प्रकार पानी के लिये तरसाते हो।

* * *

नवाब साहब की जूती

नवाब आसफुद्दौला बड़े दानी थे। वे किसी को विमुख न लौटाते थे। एक बार एक भिखमँगा आया और 'दाता की जै' मनाई। नवाब साहब ने उस मगन को अपनी एक जूती देकर अफसोस प्रकट करते हुए कहा, "इस वक्त तो मेरे पास और कुछ नहीं बचा, यह जूती रह गई है।" मगन ने जूती ले ली। कहते हैं, वह जूती बाजार में एक लाख रुपये की बिकी। तभी से नवाब साहब की दानशीलता के लिये यह शेर मशहूर हो गई है—

जिसको न दे मौला।
उसको दे आसफुद्दौला॥

* * *

नीरस पिता की रसिक सन्तान

सम्राट औरंगज़ेब कट्टर मुसलमान था। इस्लाम-मत के अनुसार गाना बजाना और कविता करना धर्म-विरुद्ध है। इस लिये औरंगजेब ने अपने राज्य में इन बातों की सख्त मनाही कर दी थी। दुर्भाग्य से सम्राट की लड़की जेबुन्निसा कविता से प्रेम रखती और स्वयं भी कविता करती थी। औरंगजेब ने उससे भी कहा कि "बेटी! शायरी न किया करो।" परन्तु जेबुन्निसा को शायरी का चस्का लग गया था, वह क्यों मानती?

एक दिन ज़ेबुन्निसा अपने बाग में सैर कर रही थी। तब तक उसने बुलबुलों का चहकना सुना। मीठी ध्वनि सुन कर उसका दिल खिल उठा और उसने बुलबुलों को सकेत करके कहा—

ये पर तबीअतदारी मे नौजवानो के कान।काटते थे। दोनो मे खूब पटी। नवाब साहब के मन के अनुसार ही जौक उनकी गजले बना दिया करते थे। पहली स्वरचित गजल—जिसे सुना कर जौक़ ने उनका मन मोह लिया था—का मतला यह था—

निगाह का वार था दिल पर फडकने जान लगी।
चली थी बर्छी किस पर किसी के आन लगी॥

नवाब साहब फडक। उठे। उसी समय जौक के काव्य-गुरु शौक भी वहा आ पहुँचे। जौक ने बडे अदब से उठ कर उनको सलाम किया। वे जौक से इस लिये रुष्ट थे कि जौक उनके शागिर्द हो कर भी दूसरो को गजले क्यो दिखाते हैं और मशायरो में उनके साथ क्यों नहीं चलते। परन्तु जौक एक नेक शागिर्द की तरह उनका सम्मान करते थे। आते ही शौक साहब ने नवाब को अपनी गजले सुनानी शुरू की। जौक, जो नवाब के बगल मे ही बैठे थे, उठ कर जाने लगे तो नवाब ने धीरे से कान मे कहा—"कान बदमजा हो गये। अपना कोई शेर सुनाते जाओ।" जौक ने यह सुन कर एक गजल—जो उन्हीं दिनों लिखी गई थी—नवाब को सुनाई, जिसके मतले ये हैं—

जीना नज़र अपना हमे असला नहीं आता।
गर आज भी वह रश्क मसीहा नहीं आता॥
मज़कूर तेरी बज्म मे किसका नहीं आता।
पर ज़िक्र हमारा नही आता नही आता॥

* * *

चूरनवाले की 'तरह'

एक दिन एक बुड्ढा चूरन की पुड़ियाँ बेचता फिरता था और आवाज देता था—

ले तेरे मनचले का सौदा है खट्टा और मीठा

शेख़ जी की काशी-प्रशंसा

ईरान का बादशाह दरबार मे बैठा था। पास ही नादिरशाह बाद शाह की रक्षा के लिये तलवार लिये बैठा था। वजीर ने कहा—बादशाह सलामत! इसके तो बादशाही बू आ रही है। सुनते ही नादिर शाह बादशाह को मार कर स्वय गद्दी पर बैठ गया। इधर वज़ीर शेख़ अली हजीन ने सोचा कि कहीं यह हमें भी न क़त्ल कर डाले, अत: हम भाग चले। भाग कर वह बनारस आया। कुछ दिनों बाद जब शाह ने उसे बनारस मे बुलाया तो वजीर साहब ने शाह को यह लिखा—

> अज़ बनारस न रवम् कि मावदे आम स्नीज़ा,
> हर पिसर बरहमन लछमणो राम स्नीज़ा।
> न पीर न शरियत न इमाम स्नीज़ा,
> जुज़ बुत संग न दीदम् चे मुकाम स्नीज़ा॥

अर्थात्—मैं बनारस से न जाऊंगा क्योंकि यह हर जात की परस्ती की जगह है। यहा का हर एक ब्राह्मण लक्ष्मण और राम की तरह है। यहा न पीर हैं, न शरियत हैं और न कोई इमाम ही दिखाई देते हैं बल्कि घर घर शिव जी की मूर्त्ति है। यह एक अजीब सी जगह है।

* * *

ज़ौक़ और उनके गुरु शौक़

दिल्ली मे नवाब इलाहीबख्श मारूफ नामक एक प्रसिद्ध रईस रहते थे। उनको कविता मे प्रेम था। ज़ौक़ की प्रशसा सुन कर उन्होंने इनको बड़े प्रेम से बुलाया और अपनी गजल सुधारने को दी। उस समय ज़ौक़ की चढ़ती जवानी थी। उधर नवाब साहब भी यद्यपि बुड्ढे हो चले

गर यों न दिया तूने तो देवेगा दया बन्दे।
कुछ राहे खुदा दे जा जा तेरा भला होगा॥

*

इंशा और नक़ी बहादुर की हवेली

एक दिन नवाब सआदत अली खाँ इंशा के साथ बजरे में नदी की सैर करते हुए चले जा रहे थे। नदी के किनारे एक हवेली थी जिस पर उर्दू में लिखा था—'हवेली अली नक़ी बहादुर की'। नवाब ने इसे दिखा कर इंशा से कहा—"देखो यह पद्य न हो सका।" इसे तुम पद्य कर दो। इंशा ने उसी समय यह नज्म बना कर पढ़ी—

न अरबी न फारसी न तुरकी
न सम की न ताल की न सुर की।
यह तारीख़ कही है किसी लुर की
हवेली अली नक़ी खाँ बहादुर की।

नवाब साहब इंशा के काव्यकौशल पर दंग रह गये।

*

नवाब साहब का रोज़ा

एक दिन नवाब सआदतअलीखाँ ने रोजा रक्खा और हुक्म दिया कि कोई न आने पावे। इंशा को नवाब साहब से कोई जरूरी काम था। ये पहुँचे। पहरेदार ने कहा, आज हुक्म नहीं है, आगे आप मालिक हैं। इंशा कुछ देर खड़े रहे। नवाब से आंतरिक प्रेम होते हुए भी ये सावधान रहा करते थे। इन्होंने कमर खोली, अँगरखा उतारा और स्त्रियों की तरह दुपट्टा ओढकर बड़े हावभाव से नवाब के सामने जा खड़े हुए। नवाब की दृष्टि पडते ही आप नाक पर उँगली रख कर बोले—

अकबरशाह के कान मे उसकी बात पड गई। उन्होंने मुख
लिख कर जौक़ के पास भेज दिये। जौक ने उसी तरह पर दस द
लगा दिये। सरकारी कंचनियॉ ने उसे लय से गाया। दूसरे दिन
शहर मे वह बच्चे बच्चे की जबान पर सुना गया। उनमे से
बद ये हैं—

ले तेरे मनचले का सौदा है खट्टा और मीठा
कुंजड़े की सी हाट है दुनिया, जिस है सारी इकट्ठी।
मीठी चाहे मीठी ले ले, खट्टी चाहे खट्टी।
ले तेरे मनचले का सौदा है खट्टा और मीठा
रूप रंग पर भूल न दिल मे देख अक़्ल के बैरी।
ऊपर मीठी नीचे खट्टी अम्बुआ की सी कैरी।
ले तेरे मनचले का सौदा है खट्टा और मीठा

* * *

फ़क़ीर की 'सदा' पर ज़ौक़ की कविता

एक फकीर यह सदा लगाता हुआ सड़क पर चला जा रहा था—

कुछ राहे ख़ुदा दे जा जा तेरा भला होगा।

बादशाह अकबरशाह ने इसे सुना। उन्हे सदा पसद आ गई
जौक़ को तत्काल आज्ञा मिली कि इस सदा पर बारह दोहरे लगा दो
जौक ने लगा दिये। कहा जाता है कि वे दोहरे इतने अच्छे बन प
ये कि बहुत दिनो तक (दिल्ली के) गली-कूचों मे गाये जाते रहे।
जो दोहरे जौक ने लगा दिये थे उनमे से दो ये हैं—

दुनिया है सरॉ इसमें तू बैठा मुसाफ़िर है।
औ जानता है यॉ से जाना तुझे आख़िर है॥
कुछ राहे ख़ुदा दे जा जा तेरा भला होगा।
जो रब ने दिया तुझको तो नाम पे रब के दे॥

अर्थात्—अफलातून (यूनान देश का प्रसिद्ध दार्शनिक) मेरे आगे मदर्से का एक साधारण विद्यार्थी है। अरस्तू (यूनान का बहुत बड़ा दार्शनिक) का क्या मुँह है जो मेरे आगे चूँ करे। ईरान के बादशाह—फरीदूँ का महल मेरे आगे क्या माल है (तुच्छ है)। आसमान की बुर्जें मेरे आगे थर्राती हैं ॥१॥ बाल व पर रखनेवाली बड़ी बड़ी बुलन्द चिड़ियाँ नम्रता से मेरे सामने गूँ गूँ करने लगती हैं। बुड्ढे आस्मान का नक्कारची—बादल—भी मेरे आगे नक्कारा बजा कर (गर्ज कर) गूँ गूँ करता है (शर्मा जाता है) ॥२॥ मैं ऐसा शानदार हूँ कि हकीमों (दार्शनिकों) के सभी गरोह चिड़िया की तरह मेरे आगे चूँ चूँ करने लगते हैं।

नोट—उपरोक्त कविता 'तान्नली शायरी कही जाती है। उर्दू साहित्य में इस प्रकार की आत्म-प्रशंसात्मक कविता करने का बड़ा महत्व है।

* * *

कविता और भँड़ैती

नवाब शुजाउद्दौला के यहाँ करेला नामक एक भाँड था। वह दिल्ली से ही उनके साथ आया था। एक दिन महफिल में उसने एक नक़ल की। एक हाथ में लकड़ी ले कर और दूसरे हाथ से टटोलता हुआ वह फिरने लगा और कहने लगा—हुजूर! शायर भी अंधा और शेर भी अंधा—

सनम सुनते हैं तेरे भी कमर है।
कहाँ है किस तरफ को है किधर है॥

जुरअत भी उस समय वहाँ उपस्थित थे। अपने ऊपर उसका यह आक्रमण समझ कर ये बहुत झुँझलाये। घर आकर इन्होंने भाँड की निन्दा लिखी और खूब धूल उड़ाई। उसे सुनकर करेला और

मैं तेरे सिदक़े न रख मेरी प्यारी रोज़ा।
बन्दी रख लेगी तेरे बदले हजारों रोज़ा॥

नवाब खिलखिला कर हँस पड़े। इन्हे जो कुछ कहना सुनना
कह कर हँसते-खेलते चले आए।

* * *

इंशा की ताअ़ल्ली शायरी (आत्मप्रशंसात्मक कविता)

मशायरे मे बादशाह सआदतअलीखाँ भी अपनी गज़ले
थे। इन्शा ने निवेदन किया कि अमुक अमुक व्यक्ति बादशाह
गजल की हँसी उडाते हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि बादशाह
गजले भेजना ही बन्द कर दिया।

जब इशा के विरोधियों को यह समाचर मिला तो वे
झुँझलाये। अगले मशायरे में वे लोग अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित हो
आए। इशा ने मशायरे मे ऐसी जोरदार गजल पढी कि सब के
छूट गये। गजल यो थी—

यक तिफ्ल दबिस्ताँ है फलातूँ मेरे आगे।
क्या मूँ है अरस्तू जो करे चूँ मेरे आगे॥
क्या माल भला क़सरे फ़रीदूँ मेरे आगे।
काँपे है पडा गुम्बदे गरदूँ मेरे आगे॥ १॥

मुरगाने उलो अजनिहे मानिन्दे कबूतर।
करते हैं सदा इज्ज़ मे गूँ गूँ मेरे आगे॥
मुँह देख तो नक्कारचीए पीरे फलक़ भी।
नक़्क़ारे बजा कर कहे दूँ दूँ मेरे आगे॥ २॥

हूँ वह ज़बरन्नी कि गरोहे हुनमा सब।
चिड़ियों की तरह करते हैं चूँ चूँ मेरे आगे॥

ठा। हजारों आदमी काट डाले गये। दिल्ली के गली-कूचे हजारों आदमियों से भर गए। नादिरशाह की रौद्र मूर्त्ति देखकर किसी की हिम्मत पडती थी कि उससे कत्ल बन्द करने की प्रार्थना करे। परन्तु मुहम्मदशाह (दिल्ली के बादशाह) का एक बूढा वजीर डरता, कॉपता, जान पर खेलकर नादिरशाह के सामने पहुँचा और अमीर .खुसरो का निम्नलिखित शेर पढ़ सिर झुकाकर व हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया—

कसे न मांद कि दीगर व तेगे-नाज कुशी।
मगर कि जिंदा कुनी ख़ल्कए व बाज कुशी॥

अर्थात्—कोई आदमी नही बचा। सब तुम्हारी कहर की निगाह के शिकार हो गये—निगाहे-नाज की तलवार से सब को मार डाला, अब लोगों को जिन्दा करो और फिर मारो।

कहा जाता है कि यह शेर सुनकर नादिरशाह बेहद खुश हुआ और उसने क़त्ल का हुक्म वापस ले लिया।

* * *

शायरी और निर्धनता

अपने देश मे तो सरस्वती और लक्ष्मी देवियो का वैमनस्य प्रसिद्ध है, इसकी पुष्टि मुसलमान कवियो ने भी की है। एक उदाहरण—जब जफर बादशाह हुए और बहादुरशाह के नाम से प्रसिद्ध हुए, तब जौक़ का मासिक वेतन सात रुपये से बढ़ाकर बीस रुपये कर दिया गया। परन्तु इन्होंने अपने वेतन के सम्बन्ध मे कभी किसी से एक शब्द भी नहीं कहा। इनको जब कभी अपनी आर्थिक स्थिति पर दुःख होता था तो ये यह शेर पढ़ा करते थे—

यो फिरे अहले कमाल आशुफ्तः हाल अफसोस है।
ऐ कमाल अफ़सोस है तुझ पर कमाल अफसोस है॥

कड़वाया। दूसरे जलसे में उसने अन्धे की नकल की और वह लाठी लेकर फिरने लगा। जुरअत का एक शेर है—

इमशब[१] तेरी जुल्फों की हिकायात[२] है वल्लाह।
क्या रात है क्या रात है क्या रात है वल्लाह॥

"क्या रात है, क्या रात है" कहकर वह लाठी टेकता हुआ चलता था। सारी गजल उसने इसी मजाक के साथ पढी। जुरअत बहुत बिगडे। घर आकर इन्होंने उसकी निन्दा लिखी—

अगला फूले बगला फूले सावन मास करेला फूले।

करेले को भी समाचार मिला। उसने अगली बार एक गर्भिणी का स्वाँग भरा और कहने लगा कि इसके पेट में भुतना घुस गया है। वह स्वयं सयाना हो कर बैठा। जैसे भूतों और सयानो मे झगडा होता है उसी तरह लड़ते झगड़ते उसने कहा—"अरे नीच क्यों गरीब माँ का प्राण लेना चाहता है। जुरअत हो तो बाहर निकल आ, नहीं तो गर्भ जलाकर भस्म कर दूँगा।" इस पर जुरअत और भी बिगडे। अब की वार इन्होंने उस करेले की ऐसी खबर ली कि वह क्षमा-प्रार्थना के लिये इनकी सेवा मे उपस्थित हुआ। उसने कहा—मैं चाहे आकाश के तारे तोड लाऊँ तो भी उसकी चर्चा महफिल की सीमा के भीतर ही रहेगी। पर आपका एक एक शब्द जो मेरे विरुद्ध कहा जायगा प्रलय तक लोगों की जबान पर रहेगा और सारे संसार मे प्रसिद्ध हो जायगा।

* * *

नादिरशाह और बूढ़ा वज़ीर

कहते हैं, नादिरशाह ने क्रुद्ध होकर दिल्ली मे कत्ले-आम का हुक्म दे दिया था। वह स्वयं तमाशा देखने के लिए सुनहरी मस्जिद में …

१ इमशब = आज रात को
२ हिकायात = कहानी

दो महाकवि

[भारत के सर्वश्रेष्ठ कवि कालिदास और कालिदास के सम्बन्ध की आख्यायिकाएँ]

कालिदास

निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु ।
प्रीतिर्मधुरसान्द्रासु मञ्जरीष्विव जायते ॥
—बाणभट्ट

भासो हासः कविकुलगुरुः कालिदासो विलासः ।
केषां नैषां कथय कविताकामिनी कौतुकाय ॥
—जयदेव

सुना जाता है, कालिदास ने सिंहलद्वीप (लंका) के राजा कुमारदास के 'जानकीहरण' महाकाव्य की खूब प्रशंसा की। इसे सुन कुमारदास ने कवि जी को सिंहलद्वीप में बुलवाया। कालिदास वहाँ बहुत दिनों तक रहे। कहते हैं, वे वहाँ की एक दासी के यहाँ आया जाया करते थे। उस दासी ने अपने दरवाजे पर यह श्लोकार्द्ध लिख रक्खा था—

कमले कमलोत्पत्तिः श्रूयते न तु दृश्यते ।

अर्थात्—कमल से कमल की उत्पत्ति सुनी जाती है, देखी नहीं गई। इसे पढ़ कर महाकवि ने इसकी पूर्त्ति यों कर दी—

बाले तव मुखाम्भोजे कथमिन्दीवरद्वयम् ?

अर्थात्—हे सुन्दरी! तुम्हारे मुखरूपी कमल से ये दो (नेत्र) कमल कैसे उग आए हैं?

* * *

एक बार महाकवि कालिदास कहीं जा रहे थे। रास्ते में उन्हें कोई स्त्री मिली जो अपनी कमर पर पानी का घड़ा लिये हुए थी। इन्हें वह बार बार देखने लगी। ये भला कब के चूकनेवाले थे। इन्होंने कहा—

अर्थात्—हे खञ्जन की सी आँखोंवाली प्रिये ! तुम्हारे कारण यदि मेरा सिर जाता है तो जाने दो।

वह इतना ही कह पाया था, तब तक हत्यारों ने उसका सिर तलवार से उड़ा दिया। परन्तु मरते मरते उसने खून से दीवाल पर उक्त पंक्तियाँ लिख दीं। जब उसका सिर राजा के सामने पेश किया गया तो उन्हें वह कोई महान् पुरुष जान पड़ा। निदान राजा भोज घटनास्थल पर पहुँचे और वहाँ अर्द्धलिखित श्लोक पाया। राजा ने कालिदास से कहा कि इसे पूरा कीजिये। कालिदास ने उसके आगे के दो चरण बना कर इस प्रकार पढ़े—

नीतानि नाशं जनकात्मजार्थे।
दशाननेनापि दशाननानि ॥

अर्थात्—रावण ने जानकी जी के लिये तो अपने दस सिर कटवा डाले। भोजराज को इस पूर्ति में विशेष सन्तुष्ट न जान कालिदास ने अपनी कनिष्ठिका उँगली काटकर मृतकवि के ऊपर छिड़क दिया। खून की छींट पड़ते ही वह उठ बैठा और ठीक उस श्लोकार्द्ध के नीचे वही पंक्तियाँ लिख दीं जो कालिदास ने पढ़ी थीं।

फिर क्या था, राजा साहब ने उसे अपना दामाद बनाया और उसका शेष जीवन सुखपूर्वक बीता।

* * *

महाकवि कालिदास के किसी प्रतिपक्षी पंडित ने भोज के यहाँ शास्त्रार्थ करने को कहला भेजा। शास्त्रार्थवाले दिन किसी ने पूछा कि बताओ प्रातःकाल कौवे काँव काँव का शब्द क्यों करते हैं। और लोग तो अभी सोच ही रहे थे, तब तक कालिदास ने इसका यह उत्तर दिया—

तिमिरारिः तमो हन्ति शंकातंकितमानसा ।
वयं काका वयं काका इति जल्पन्ति वायसाः ॥

किं मां निरीक्षयसि घटेन कटिस्थितेन—
वीक्ष्येण चारुपरिभीलितलोचनेन ?
अन्यं निरीक्ष्य पुरुष तवकर्मयोग्यम् ।
नाहं घटांकितकटी प्रमदा स्पृशामि ॥

अर्थात्—तुम मुझे बार बार क्यों देख रही हो। अपने योग्य कि दूसरे पुरुष को देखो। मैं कमर पर रक्खे हुए घडेवाली स्त्री को छूत ही नहीं। कालिदास की बात सुन कर वह बडी लजाई, परन्तु व भी विदुषी थी, अत. उसने महाकवि को छकाने के लिये उत्तर दिया—

सत्यं ब्रवीषि मकरध्वजबाणपीड—
नाहं तदर्थमनसा परिचिंतयामि ॥
दासोद्य मे विघटितस्तवतुल्यरूपी।
सो ये भवेन्नभवेदिति मे वितर्कः ॥

यह सुनकर कालिदास बडे लज्जित हुए। इसका मतलब यह कि 'हे भद्र ! मैं सच कहती हूँ। इस बात को मैं अपने मन मे न नहीं लाई। बल्कि आपको इसलिये गौर से देखती हूँ कि मेरा भी ए नौकर आप ही की सी शक्ल का था। आपको देखकर मुझे सन्देह ग गया कि आप कहीं वही तो नहीं हैं।

* * *

कहते हैं राजा भोज की लडकी से एक ब्राह्मण के लडके का प्र हो गया। राजा ने जब यह सुना तो उस युवक का सिर काट लाने व आज्ञा दी। जब राजा के सिपाही महल मे पहुँचे, तब राजपुत्री ने अप प्रेमी से भाग जाने के लिये कहा। परन्तु उसने बड़ी निर्भीकता उत्तर दिया—

युष्मत्कृते खंजनमंजुलाक्षि !
शिरो मदीय यदि याति यातु ।

अर्थात्—आज धारा-नगरी श्रेष्ठ आधारवाली हो गई। सरस्वती श्रेष्ठ आलम्बवाली हो गई, और सम्पूर्ण पण्डित मण्डित हो गये। ये सब बातें भोजराज के पृथ्वी पर आने से हो गईं।

* * *

एक समय राजा भोज रात में चन्द्रमा को देखकर उसके बीच में स्थित कलंक (कालापन) के विषय में कह रहे हैं—

अंकं केपि शशङ्किरे जलनिधे पंकं परे मेनिरे।
सारंगं कतिचिच्च संजगदिरे भूच्छायमैच्छन्परे॥

अर्थात्—चन्द्रमा में कोई कलंक की शंका करते हैं, कोई समुद्र की कीच मानते हैं, कोई हिरन कहते हैं और कितने पृथ्वी की छाया कहते हैं।

इतना लिख चुकने पर भोज ने कालिदास के हाथ में वह श्लोक दे दिया और उनसे उसकी पूर्त्ति करने को कहा। महाकवि ने उसी क्षण उसका उत्तरार्द्ध लिखा—

इन्दौ यद्दलितेन्द्रनीलशकलश्यामं दरी दृश्यते।
तत्सान्द्रं निशिपीतमंधतमसं कुक्षिस्थमाचक्ष्महे॥

अर्थात्—चन्द्रमा में जो दलित इन्द्रनीलमणि के टुकडे का सा कालापन दिखाई पडता है, मेरी समझ से रात्रि में चन्द्रमा ने जो घोर अंधकार पी लिया है वही काला काला उसके पेट में दिखाई देता है।

* * *

किसी नदी के किनारे एक जामुन का पेड़ था। जब हवा चलती थी तो पकी हुई जामुन टूट टूट कर पानी में गिरती थीं और उनके गिरने से जल में एक प्रकार का शब्द होता था। यह देख किसी कवि ने निम्नलिखित श्लोक रचा—

जम्बूफलानि पक्वानि पतन्ति विमले जले।
तानि मत्स्याः न खादन्ति जलमध्ये डुगुक् डुगुक्॥

अर्थात्—प्रातःकाल सूर्यदेव अपनी किरणों से काले काले अँधेरे को दूर करते हैं। कौवे भी रंग में काले होते हैं, अतः यह सोचकर कि धोखे मे कहीं हमे भी वे काले से सफेद न कर दे, वे 'का, का' अर्थात् "मैं कौवा हूँ—कौवा हूँ," यह रटा करते हैं।

इनके प्रतिपक्षी पंडित जी ने भी इसे सुना। वे बहुत ही लज्जित हुए कि ऐसे विद्वान् और प्रतिभाशाली मनुष्य के आगे निस्सन्देह मेरा विवाद नहीं टिक सकता।

* * *

कविवर कालिदास एक बार राजा भोज से रुष्ट होकर चले गए। राजा साहब को अब इनके बिना चैन न पडती थी, अतः उन्होंने इन्हें खोजकर ले आने का इरादा किया। भोज अपना भेष एक साधु का सा बनाकर निकल पड़े। चलते चलते इन्हे कालिदास मिल गए। कालिदास ने इनसे पूछा—आप कहाँ से आते हैं? इन्होंने जवाब दिया, धारा नगरी से। तब महाकवि ने पूछा, वहाँ के राजा भोज का क्या हाल है? जब इन्होंने कहा वह तो मर गया, तब कालिदास उदास हो गये और उसी शोकावस्था मे उन्होंने यह श्लोक पढा—

अद्य धारा निराधारा निरालंबा सरस्वती।
पंडिता खंडिता सर्वे भोजराजे दिवंगते॥

अर्थात्—आज भोजराज के स्वर्ग जाने से धारानगरी निराधार हो गई और विद्या भी निराश्रय हो गई। यही नहीं बल्कि सम्पूर्ण पंडितों का मान टूट गया।

इनके सुनते ही योगी का भेष धारण किये हुए राजा भोज मूर्च्छित हो गये। इन्हे विकल देख वे समझ गये कि भोज यही है। अतः उन्होंने उसी श्लोक को यों पढा—

अद्य धारा सदाधारा सदालंबा सरस्वती।
पंडिता मंडितास्सर्वे भोजराजे भुवंगते॥

एक बार राजा भोज स्नान करने के लिये उठे। उनको नहलाने के लिये कहारिन घड़ा भर कर सीढ़ियों पर चढ़ रही थी तब तक सयोग से वह हाथ से छूटकर सीढ़ियों पर गिर गया। उसके गिरने से 'ट ट ट ट' शब्द हुआ। राजा साहब ने दूसरे दिन घड़े के गिरने का शब्द स्मरण कर कालिदास से कहा—सुकवे! 'टट टटट टटट टटटम्' इस समस्या को पूरा करो। महाकवि के लिए ऐसी समस्याये बाये हाथ का खेल हुआ करती हैं। उन्होंने झट से निम्नलिखित श्लोक बनाकर पढ़ दिया—

राज्याभिषेके मदविह्वलाया।
हस्ताच्च्युतो हेमघटो युवत्याः॥
सोपानमार्गेषु करोति शब्दम्।
टटं टटटं टटट टटंटम्॥

अर्थात्—राज्याभिषेक मे मदमाती जवान स्त्री के हाथ से सोने का घड़ा गिर पड़ा। वह कलश सीढ़ियों पर गिरकर 'टट टटट टटट टटटम्' शब्द करने लगा।

*

महाकवि कालिदास किसी वेश्या के यहाँ आया जाया करते थे। इधर डल्लन नामक एक दूसरे व्यक्ति का भी उसी वेश्या से सम्बन्ध था। एक दिन कालिदास ने प्रेमालाप करते करते इस वेश्या का लहँगा पकड़ लिया। इस पर इसने महाकवि को ऐसा करने से मना किया। कालिदास ने कहा—

नो रुद्धः कुचपरिमर्दनेषु वामे।
वैषम्यं नहि मुखचुम्बने कदापि॥
त्वं नीवीगतमवले रुपात्सि पाणिं।
विक्रीते करिणि किमंकुशे विवादः॥

अर्थात्—हे प्रिये! मैंने तुम्हारे कुच स्पर्श किये तब तुमने जरा भी बाधा न दी। मुख चूमते समय तुमने कभी भी विषमता न दिखाई,

अर्थात्—पके हुए जामुन निर्मल जल में गिरते हैं। उन्हे मछलियॉ नहीं खातीं। (उनके गिरने से) पानी में 'ढुमुक् ढुमुक्' शब्द होता है।

वह कवि इस श्लोक को राजा भोज को सुनाने ले आया। ड्योढी पर ही महाकवि कालिदास मिल गये। उस कवि ने कहा भाई! यह श्लोक लिख लाया हूँ। यदि इस पर कुछ पुरस्कार दिलवा देते तो मेरा काम बन जाता। कालिदास ने उसे पढा और अन्तिम पक्ति में निम्नलिखित परिवर्त्तन कर श्लोक को सार्थक बना दिया—

तानि मत्स्याः न खादन्ति जालघोटकशंकया।

अर्थात्—उन फलो को जाल की गुट्टियाँ समझ कर मछलियाँ उन्हे नहीं खातीं*

* * *

* लोग यह भी कहते है कि यह श्लोक दूसरे कवि का बनाया हुआ नहीं है। स्वयं भोजराज शिकार के लिए नदी पर गये थे और किसी जामुन के पेड के नीचे बैठ गये। तब तक वन्दरो ने उस पेड की टहनी हिलाई और बहुत से फल पानी मे गिर गए। घर लौटने पर राजा साहब ने नदी के तीरवाली घटना का स्मरण कर कालिदास को समस्या दी—

'गुलु गुग्गुलु गुग्गुलु।' महाकवि ने उसकी पूर्ति इस प्रकार की थी—

जबूफलानि पक्वानि पतन्ति विमले जले।
तानि मत्स्याः न खादन्ति गुलु गुग्गुलु गुग्गुलु॥

अर्थात्—बन्दरो द्वारा हिलाई गई जामुन की टहनिया से पके हुए जामुन के फल सुन्दर पानी मे गिर पडे। उनके जल मे गिरने से 'गुलु गुग्गुलु गुग्गुलु' शब्द हुआ।

राजा भोज को बडा आश्चर्य हुआ कि अतरिक्ष की बात कालिदास कैसे जान गए।

उन्होंने कहा—वह राक्षस सुकवि मालूम पड़ता है। उसको प्रसन्न कर अपना काम निकालना चाहिये। ऐसा कह कालिदास रात को उस घर मे जाकर सो गए। रोज की तरह पहले पहर मे वह राक्षस आया और इनको देख उसने एक समस्या पढी—'सर्वस्य द्वे।' कालिदास ने कहा—

सुमति कुमती संपदापत्ति हेतू।

थोडी देर मे आकर राक्षस ने दूसरी समस्या पढी—'वृद्धो यूना।' कालिदास ने तुरन्त इसकी पूर्त्ति कर दी—

सहपरिचयात्यज्यते कामिनीभि॰ ॥

तीसरी बार आने पर उसने महाकवि को यह समस्या दी—'एको-गोत्रे कालिदास ने उत्तर दिया—

प्रभवति पुमान्य॰ कुटुम्बं विभर्ति।

एक पहर बीत जाने पर जब वह फिर आया तो उसने कहा—कालिदास! इसकी पूर्त्ति कीजिये 'स्त्रीपुंवच्च।' यहाँ कालिदास को क्या देर थी। उन्होंने झट से उत्तर दिया—

प्रभवति यदा तद्धि गेहं विनष्टम्।*

इस प्रकार पूरा श्लोक यो हुआ—

सर्वस्यद्वे सुमति कुमती संपदापत्ति हेतू।
वृद्धो यूना सहपरिचयात्यज्यते कामिनीभि॰ ॥
एको गोत्रे प्रभवति पुमान्य॰ कुटुम्बं विभर्त्ति।
स्त्रीपुंवच्च प्रभवति यदा तद्धि गेहं विनष्टम् ॥

अर्थात्—प्रत्येक वस्तु के दो पक्ष हैं, सुमति और कुमति ये दो सम्पत्ति और विपत्ति के कारण हैं। जवान के साथ परिचय होने पर स्त्रियाँ वृद्ध को त्याग देती हैं। गोत्र मे मुख्य वह पुरुष है जो कुटुम्ब

* राक्षस की दी हुई ये चारो समस्यायें प्रचलित सूत्र भी हैं।

परन्तु अब तुम लहँगा पकडने से रोकती हो। हाथी बिक जाने पर अंकुश के लिये क्या झगडा !

इत्तिफाक से आड में छिपे हुए डल्लन यह सब सुन रहे थे। कालिदास को लज्जित करने के लिये उन्होंने यह किस्सा अवंती नगरी में जा सुनाया। डल्लन ने वहाँ के राजा से यह भी कहा कि आप कालिदास से श्लोक के चतुर्थ चरण (विक्रीते करिणि किमकुशे विवाद) को पूरा करने के लिये कहियेगा।

डल्लन के कथनानुसार राजा साहब ने कालिदास के सामने श्लोक की अन्तिम पक्ति पढ दी और कहा कि इसे पूरा कीजिये। कालिदास के लिये यह कौन सी भारी बात थी। उन्होंने चट से प्रसग बदल कर दी हुई समस्या से ठीक चिपकता हुआ यह श्लोक बनाकर सुना दिया—

सौमित्रिर्वदति विभीषणाय लंकाम् ।
देहित्वं भुवनपते ! विनैव कोपम् ॥
इत्युक्ते रघुपतिराहवाक्यमेतत् ।
विक्रीते करिणि किमकुशे विवाद• ॥

अर्थात्—लक्ष्मण जी रामचन्द्र से कहते हैं कि हे भुवनपते विभीषण को लका का राज्य बिना खजाने के देना चाहिये। इसे सुन राम जी ने कहा कि यह तो सब ठीक है, परन्तु हाथी बेच डालने पर अकुश के लिये क्या झगडें—अर्थात् जब लका का राज्य विभीषण को सौंप देंगे तो खजाना ही क्यों बाकी रह जाय !

* * *

एक बार अवन्ती नगरी में एक नया महल बनवाया गया। गृह प्रवेश होने के पहले ही उस घर मे कहीं से एक ब्रह्मराक्षस आ घुसा। रात को जिस किसी को वह उस घर में पाता, मार कर खा जाता। भोजराज ने कई तान्त्रिकों को बुला कर उसे निकलवाने का प्रयत्न किया परन्तु सफलता न मिली। कालिदास से इसका उपाय पूछा गया

अर्थात्—पुत्र को आग मे पड़ा हुआ देखकर पतिव्रता स्त्री ने पति को नही जगाया। उस समय उसकी पतिभक्ति के गौरव से आग चन्दन की कीच की तरह ठढी हो गई।

कवि द्वारा पठित श्लोक मे ठीक ठीक वही भाव पाकर उसकी काव्यकुशलता पर राजा भोज मुग्ध हो गये।

* * *

एक बार राजा भोज अपना वेष बदल कर धारानगरी मे घूमते हुए किसी वृद्ध ब्राह्मण के घर जा पहुँचे। वह ब्राह्मण कौओ को खिलाने के लिये रोटी लेकर घर से बाहर निकला और कौओ को बुलाने लगा। हाथ के इशारे व 'हा हा' शब्द करने से बहुत से कौवे आए। उनमे से कोई बहुत जोरो से कावॅ कावॅ करने लगा। ब्राह्मण की स्त्री ने चीख मारकर डर जाने की सी मुद्रा बनाकर कहा—'अरी माँ।' ब्राह्मण ने पूछा, क्यो डरती हो? उसने उत्तर दिया—नाथ! मेरी जैसी पतिव्रता स्त्री से यह कावॅ कावॅ का शब्द नहीं सुना जाता।

राजा ने यह सुनते ही समझ लिया कि यह स्त्री अवश्य दुश्शीला है जो स्वय अपनी बडाई करती है। इसकी परीक्षा करनी चाहिये। यह सोच वे वहीं छिप कर बैठे रहे। रात को पति के सो जाने पर वह स्त्री घर से निकल पडी और नर्मदा नदी को पार कर दूसरे किनारे पर इन्तिज़ार करते हुए अपने प्रेमी से जा मिली।

उसका यह चरित्र देख राजा भोज महल को लौटे। दूसरे दिन कालिदास से उन्होने कहा, सुनिये—

दिवा काकरुताद्भीता।

कालिदास ने उत्तर दिया—

रात्रौ तरति नर्मदाम्।

प्रसन्न होकर राजा ने फिर पढा—

तत्र सन्ति जले ग्राहाः।

का पालन पोषण करे। जब स्त्री, पुरुष की तरह, मालकिन हो जाती है तब घर नष्ट हो जाता है।

अब तो राक्षस बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने कालिदास से कहा—मैं तुम्हारी विद्वत्ता तथा काव्यशक्ति पर बडा प्रसन्न हूँ। तुम क्या चाहते हो? कालिदास ने कहा—तुम यहाँ से चल दो। उसने कहा अच्छा। फिर कभी भी वह उस घर में नहीं दीख पडा।

* * *

एक बार राजा भोज अपनी राजधानी में घूमते हुए किसी ब्राह्मण के घर जा पहुँचे। उन्होंने वहाँ देखा कि एक स्त्री अपने पति का सिर गोद मे रक्खे हुए थी। दैववश उसका लडका आग मे गिर पड़ा। लडके को आग मे गिरते देखकर भी स्त्री अपने पति को छोड उसे बचाने नही गई। उस पतिव्रता स्त्री ने अग्निदेव से प्रार्थना की कि महाराज! आप मेरे असमजस को समझ रहे हैं। इस बच्चे का बाल बॉका होने पाए। जब वह लडका सकुशल आग मे बाहर निकल आया तो राजा भी धारानगरी को वापस लौट आए।

दूसरे दिन सभा लगने पर भोजराज ने कविवर कालिदास से कहा—'कल रात को मैंने एक अत्यन्त आश्चर्यजनक बात देखी है' यह कह कर उन्होंने पढ़ा—

हुताशनश्चन्दनपङ्कशीतल. ।

आग चन्दन के कीचड की तरह ठढी बन गई।

कालिदास ने उसके ऊपर के तीन चरण इस प्रकार बनाये—

सुतं पतंत प्रसमीक्ष्य पावके।
न बोधयामास पतिं पतिव्रता ॥
तदा भवत्तत्पतिभक्तिगौरवात्।
हुताशनश्चन्दनपंकशीतल ॥

का विनाशक सूर्य अस्त हो गया तब चाहे राजा हो या भौंरा हो, अपनी आँखें मूँद कर या निद्रा न पा कर घबरा जाता है।*

इस पद्य का रहस्य समझ कर वेश्या ने अनुमान किया कि इनाम तो मैं जरूर लाऊँगी किन्तु कालिदास जीवित रहा तो असम्भव है। यह सोचकर उसने महाकवि का वध कर घर ही में जमीन में गाड़ दिया। प्रातःकाल वह पद्यार्द्धपूर्ति ले राजा के पास गई। राजा कुमारदास को सन्देह हो गया कि यह कृति कालिदास की है। उन्होंने कालिदास का पता चलाना शुरू किया। वेश्या के भी घर की तलाशी की गई। वहाँ से कालिदास का शरीर मिल गया। तब उस शव को बड़े सम्मान के साथ अग्नि-समर्पित किया और कालिदास के अभिन्न-मित्र होने के कारण विरहाकुल राजा उसी चिता में कवि के साथ जल मरे।

* * *

तुलसीदास

"कविता करके तुलसी न लसे कविता लसी पा तुलसी की कला।"

—हरिऔध

गोस्वामी तुलसीदास अपनी प्रारम्भिक युवावस्था में बड़े विषयी [प]ण्डित और ...नकी स्त्री को यह बात भली भाँति मालूम थी। पति का लोलु[प] ...न्यत्र न मचल जाय इसी बात को सोच कर इनकी स्त्री ने इन[को] ...म्नलिखित दोहा लिख कर भेजा था— तुलसी का

* कुछ लोगों का कहना है कि वेश्या को राजा ने जो स[मस्या दी थी] वह यह है—कमले कमलोत्पत्तिः श्रूयते न तु दृश्यते। इसी [की पूर्ति क]ालिदास ने यों की—बाले तव मुखाम्भोजे कथमिन्दीवरद्वयम्। ...ा, समस्या का प्रादुर्भाव कमल देखकर ही हुआ है।

कवि ने उसकी पूर्त्ति यों की—

मर्मज्ञा सैव सुन्दरी ॥

इस तरह पूरे श्लोक का अर्थ यह है—

दिन को कौवे के रोने से डर गई और रात को नर्मदा नदी पार की। वहाँ जल में मगर हैं। वह सुन्दरी यह सब मर्म जानती है।

* * *

कहते हैं, लंका का राजा कुमारदास वेश्यागामी था। एक दिन प्रातःकाल जब वह महल की तरफ वापस जा रहा था उस समय पुष्करिणी में कमल के फूलों को लगा देखा। इतने में रात भर जो भ्रमर बन्द कलियों में फँसे थे वे एक एक कर उड़ने लगे। उसने अपनी स्थिति से इन भ्रमरों की स्थिति की समता देख सिंहल भाषा में एक पद्यार्द्ध बनाया और उसी वेश्या को—जो विदुषी भी थी, दे दिया कि इसकी पूर्त्ति कर देने पर बहुत सा पुरस्कार दिया जायगा। वह समस्या थी—

वन वम्बरा, वन वम्बरता सयट बनीसलदेदरा पणगलवा गिय सेवंनी

(वनभ्रमर: वने भ्रमित्वा रेणवर्थे आयात: पुष्पे विदीर्णे प्राणं गृहीत्वा गत इव आसीत्।)

कालिदास भी इसी वेश्या पर अनुरक्त थे। दूसरे दिन जब वेश्या के यहाँ गए तो उन्होंने समस्या देखी। उसकी पूर्त्ति कालिदास ने इस प्रकार कर दी—

सियतंवरा सियतवरा, सियसे वेनीसिय, स पुरा निदिनोलवा उनूमेवंन।

(शतपत्रप्रबोधक: शतमोनाशक: यस्तं यात स्वीयापि ... निद्रां न लब्ध्वा उद्वेसेवते ॥)

भाव यह कि कमल को विकसित करनेवाला और घोर अन्ध

तुलसी जिनके मुखन सों धोखेहु निकसत राम।
तिनके पग की पानहीं मेरे तन को चाम॥

तुलसीदास जी का नाम सुनते ही नाभा जी खिल उठे। वे इनसे बड़े प्रेम से मिले और एक छप्पय पढ़ा जिसकी अन्तिम दो पंक्तियाँ ये हैं—

संसार अपार के पार को, सुगम रूप नौका लयो।
कलि कुटिल जीव निस्तार हित, बालमीकि तुलसी भयो॥

* * *

कहते हैं दुष्ट लोगों के व्यवहार से तंग आकर गोस्वामी तुलसीदास जी ने लिखा है—

माँगि मधुकरी खात जे, सोवत पाँव पसारि।
पाय प्रतिष्ठा बढ़ि परी, तुलसी बाढ़ी रारि॥

* * *

दुष्टों ने इनके साथ इतना बैर बढ़ाया कि निरुपाय होकर तुलसीदास जी को काशी छोड़ देनी पड़ी। कहा जाता है कि आप चित्रकूट चले गये। काशी से चलते समय गोसाईं जी ने विश्वनाथ के मन्दिर के बाहर यह कवित्त लिख दिया था—

देवसरि सेवौं बामदेव गाँव रावरे ही,
नाम राम ही के मांगि उदर भरत हौं।
दीबे जोग तुलसी न लेत काहू से कछुक,
लिखी न भलाई भाल पोच न करत हौं॥
एते पर हू कोऊ जो रावरे ह्वै जोर करै,
ताको जोर देव दीन द्वारे गुदरत हौं।
पाइ कै उराहनो उराहनो न दीजे मोहिं,
कलि कढ़ा काशीनाथ काहे निवरत हौं॥

* * *

प्रसिद्धि है कि एक संस्कृताभिमानी पंडित ने गोसाईं जी से पूछा कि 'आप संस्कृत में न लिख कर अपनी रचना गवाँरी भाषा में क्यों रचते हैं ? इसे सुनकर तुलसीदास जी ने हँसकर कहा—

मनि-भाजन विष पारई, पूरन अमी निहार।
का छाँड़िय का संग्रहिय, कहहु विवेक विचार॥

यानी संस्कृत भाषा मणि-जटित पात्र है परन्तु उसमें उद्धत लेखकों ने अश्लील वर्णनरूप विष रख दिया है।

* * *

एक बार एक साधु अलख जगाने आये। गोसाईं जी को देख इनके माथे पर भभूत लगाने के लिये वे इनकी ओर बढ़े। परन्तु गोसाईं जी ने उन्हें बीच ही में रोक कर निम्नलिखित दोहा कहा—

हम लखि लखहि हमार लखि हम हमार के बीच।
तुलसी अलखहि का लखै राम-नाम जपु नीच॥

आशय यह कि—ऐ नीच ! मैं (जीवात्मा से आशय) क्या हूँ, जिसे मैं अपना कहता हूँ वह क्या है, मैं और मेरे के बीच में क्या है,—इन्हें समझे बिना ही तू अलख जगाता है। इससे कोई लाभ नहीं। राम-नाम का भजन कर।

* * *

तुलसीदास की प्रशंसा सुनकर एक बार नाभा जी उनसे मिलने काशी आये, किन्तु भेंट न हो सकी। नाभा जी लौट गये। जब यह खबर गोसाईं जी ने पाई तो उनसे मिलने वे वृन्दावन गए। उस समय साधू लोग भोजन कर रहे थे। ये भी वहीं बैठ गए। खीर लेने के लिये इनके पास कोई बरतन न था अतः इन्होंने चट से पास पड़ी हुई एक जूती उठा कर परोसने वाले के सामने रख दी। इस पर किसी ने टोका तो इन्हों ने यह दोहा कहा—

लहै न फूटी कौड़िहू, को चाहै किहि काज।
सो तुलसी महँगो कियो, राम गरीब-निवाज ॥
घर घर मांगे टूक पुनि भूपति पूजे पाँय।
जो तुलसी तब राम बिनु, सो अब राम सहाय ॥

* * *

कहते हैं, वृद्धावस्था मे भ्रमण करते हुए गोस्वामी जी की (ससु-
न, मे) अपनी चिरवियुक्ता पत्नी से भेंट हो गई। मुलाक़ात होने पर
ने उनसे कहा—मुझे यहाँ अकेली मत छोडो। अपने साथ लेते
ो। यथा—

खरिया खरी कपूर लौं उचित न पिय तिय-त्याग।
कै खरिया मोहिं मेलि कै अचल करहु अनुराग ॥

परन्तु मन मे जब राम की मूर्ति बसी हुई है तो फिर पत्नी का प्रेम वहाँ कैसे रह सकता है। निदान गोसाईं जी ने स्त्री को अपने साथ ले चलने से इनकार कर दिया।

* * *

एक बार तुलसीदास जी कहीं जा रहे थे। तब तक उनकी दृष्टि किसी बगुले पर पड़ी। बगुला तालाब के किनारे एक पैर से खड़ा हुआ अपने शिकार की आहट मे था। गोसाईं जी ने सोचा—यह बगुला बडा तपस्वी जान पडता है। तपस्या करने की शिक्षा बगुले से लेना चाहिये। यह सोचते उनके मुँह से निम्नलिखि दोहार्द्ध निकल पड़ा—

गोरे गोरे दिसतु हौ धरे एक पग ध्यान।
हम जाना तुम साधु हौ × × ×

तब तक बगुले को मछली दीख पडी और चट से पानी में कूदकर

गोसाईं जी रामचन्द्र जी के दर्शन के लिये छटपटा रहे थे। जब हनुमानजी ने उन्हे चित्रकूट मे जाकर दर्शन पाने की प्रतीक्षा करने को कहा तो प्रसन्न होकर वे वहाँ गये। थोडी ही देर मे उन्होंने देखा कि अश्वारूढ दो युवक धनुषवाण ताने शिकार खेलते हुए चले जा रहे हैं। उन्हे मृगयासक्त वधिक जान तुलसीदास जी ने उधर से अपनी दृष्टि हटा ली।

थोडी देर मे हनुमान जी ने प्रकट होकर पूछा, कहो! दर्शन हुए? हनुमान जी की यह बात सुन गोसाईं जी पश्चात्ताप करके कहने लगे कि मैंने तो उन्हे साधारण शिकारी समझ अपनी आँखे मूद ली थीं। इतना कहकर वे गद्गद हो गये और पछताते हुए अपने नेत्रों को उलाहना देने लगे—

लोचन रहे बैरी होय।
जान बूझ अकाज कीन्हों, गये भू मे गोय।
अवगति जो तेरी गति न जान्यो रह्यो जागत सोय॥
सबै छबि की अवधि मैं है निकसि गे ढिग होय।
कर्महीन मैं पाय हीरा दयो पल मे खोय।
दास तुलसी राम बिछुरे कहो कैसी होय॥

* * *

चित्रकूट मे किसी पर्व के दिन स्नान करके गोस्वामी जी चन्दन घिस रहे थे। उसी समय कौशल्या-नन्दन—श्रीरामचन्द्र जी ने आकर कहा—स्वामी जी, मेरे ललाट मे तिलक कर दीजिये। गोसाईं जी समझ गये कि चन्दन लगवाने वाले ये और कोई नहीं, उनके आराध्यदेव राम हैं। फिर क्या था! वे चन्दन घिस घिस कर प्रेमपूर्वक उनके माथ मे तिलक करने लगे। उसी समय तुलसीदास जी ने यह दोहा पढा—

कविर्मनीषी

[अन्य उत्तमोत्तम कवियों के काव्य-प्रेम के उदाहरण]

उसने मछली पकड़ ली। इस दृश्य को देखकर गोसाईं जी ने दोहे के चौथे चरण मे भाव बदल दिया। उन्होंने कहा—

निपट कपट की खान ॥

*　　*　　*

गोस्वामी जी को अन्त मे कुछ दिन वातरोग से पीडित रहना पड़ा था। उन्ही क्लेश के दिनो मे गोसाईं जी ने हनुमान जी की प्रार्थना मे 'हनुमानबाहुक' स्तोत्र की रचना की। उक्त बाहुक में ४४ छन्द हैं जिन्हें देखने से मालूम होता है कि गोसाईं जी को यह पीडा कई महीने तक होती रही होगी। ऐसा कहा जाता है कि इस स्तोत्र की रचना के बाद ही उनकी पीडा जाती रही। हनुमानबाहुक का एक छन्द—जिसमे उन्होंने पीडा का वर्णन किया है, यों है—

आप ने ही पाप ते त्रिताप ते कि शाप ते,
बढ़ी है बाहु-बेदन न नेकु सहि जाति है।
औषधि अनेक यन्त्र मन्त्र टोटकादि किये,
बादि भये देवता मनाये अधिकाति है।
करतार भरतार हरतार कर्मकाल,
को है जग-जाल जो न मानत इताति है।
चेरो तेरो तुलसी तू मेरो कह्यो राम दूत,
ढील तेरी बीर मोहि पीर ते पिराति है।

कुमारिल भट्टाचार्य का वेदोद्धार

कुमारिल भट्टाचार्य वेदो के बडे अच्छे ज्ञाता थे। आप का उपदेश बड़ा मार्मिक होता था। उन्ही दिनो चम्पा नगरी मे सुधन्वा नामक राजा रहता था। वह बौद्ध-मतावलम्बी था परन्तु उसकी रानी वेद के सिद्धान्तों को मानती थी।

रानी साहबा ने पण्डित जी की कीर्ति सुन कर उनका दर्शन करना चाहा। प्रयत्न करने पर भी कुमारिल से उनकी मुलाकात न हो सकी। एक दिन पण्डित जी कहीं जा रहे थे। ज्यों ही वे राज-भवन के नीचे पहुँचे उनके कानो में कुछ आवाज आई। ध्यान देकर सुनने से मालूम हुआ कि ये शब्द रानी चम्पा के थे। वे कह रही थी—

किं करोमि क्व गच्छामि को वेदानुद्धरिष्यति।

अर्थात्—क्या करू, कहा जाऊ, वेदों का उद्धार कौन करेगा?

पण्डित जी इसे सुन कर बोल उठे—

मा विषाद वरारोहे भट्टाचार्योऽपि भूतले।

अर्थात्—हे रानी, खेद न कीजिये, मैं भट्टाचार्य अभी पृथ्वी पर वर्त्तमान हूँ।

* * *

भट्टाचार्य का व्यंग्य

एक बार कुमारिल भट्टाचार्य ने राजा साहब सुधन्वा से मुलाक़ात की। सुधन्वा बौद्धमतानुयायी थे ही अतः इनकी बात वे कब मानने लगे। निदान दोनों मे यह ठहरी कि शास्त्रार्थ हो जाय और उसमें जो पक्ष हार जाय वह दूसरे धर्मवाले के सिद्धान्तों को मान ले।

स्वतः प्रमाण हैं या परतः प्रमाण हैं—वही पण्डित मण्डन मिश्र का घर समझना।

* * *

शंकर स्वामी और कामशास्त्र

श्री स्वामी शकराचार्य से मडन मिश्र का शास्त्रार्थ हुआ। इस वादविवाद मे मध्यस्थ का पद मिश्र जी की ही धर्मपत्नी शारदादेवी ने ग्रहण किया। शास्त्रार्थ मे मडन मिश्र का पक्ष निर्बल होते देख शारदा ने स्पष्टत. स्वीकार कर लिया कि उनके पति हार गये। परन्तु स्वामी जी से यह कहा गया कि अभी तो आप पूरे विजयी नहीं हुए क्योंकि पुरुष और स्त्री दोनों मिल कर एक सम्पूर्ण व्यक्ति हैं। तदनुसार स्वामी जी ने शारदा से विवाद शुरू किया। शारदादेवी बडी पडिता थी। उन्होने सोचा कि ऐसा विषय शकर से पूछू जो ये स्वय न जानते हो। यह निश्चय कर उन्होंने स्वामी जी से कामशास्त्र के ये प्रश्न पूछे—

कला. कियत्यो वद पुष्पधन्वन. ।
किमात्मिकाः किं च पदं समाश्रिताः ॥
पूर्वे च पक्षे कथमन्यथा स्थिति. ।
कथं युवत्यां कथमेव पूरुषे ॥

भावार्थ यह हुआ कि—कामदेव की कलाये कितनी हैं? उनकी आत्मा (उनका साराश) क्या है? और वे किस पद पर स्थित हैं (उनको क्या कहते हैं)? पूर्वपक्ष मे (जवानी मे) स्त्रियों की उनमे कैसी स्थिति रहती है? पुरुषो की कैसी रहती है और औरो की कैसी स्थिति रहती है?

बालब्रह्मचारी शकराचार्य से इसका कोई उत्तर न देते बना और वे एक मास का अवकाश लेकर कामशास्त्र-सम्बन्धी ज्ञान सीखने के लिये वापस गये।

* * *

शास्त्रार्थ के लिये बड़ी बड़ी दूर से बौद्ध-धर्माचार्य बुलाये गये और निर्दिष्ट समय पर सब लोग एकत्र हुए। जिस जगह पर शास्त्रार्थ होने वाला था वहीं एक आम का पेड़ था। उस पेड़ पर एक कोयल बैठी हुई कूक रही थी। उसकी कूक से सभा-भवन की शान्ति भङ्ग हो गई। यह दृश्य देख भट्टाचार्य ने कहा—

मलिनैश्चेन्न संगस्ते नीचैः काककुलैः पिक।
श्रुतिदूषक निर्ह्रादैः श्लाघनीयस्तदा भवेः॥

अर्थात्—हे कोयल! मलीन, नीच और श्रुतिदूषक (कटु शब्द से कान को अपवित्र करने वाले) काक-कुल से तेरा सम्बन्ध न हो तो तू प्रशंसा का पात्र है।

भट्टाचार्य के इस श्लोक का व्यंगार्थ राजा और आगत बौद्धों पर घटित होता था। इस ढङ्ग से इसका अर्थ यों था—हे राजन्! मलीन, नीच और श्रुतिदूषक (वेद-निन्दक) लोगों से तेरा सम्बन्ध न हो, तो तू प्रशसा का पात्र है।

* * *

मण्डन मिश्र का पता

श्रीस्वामी शङ्कराचार्य दिग्विजय करते हुए काश्मीर पहुँचे। पण्डित मण्डन मिश्र वहा के प्रसिद्ध मीमासक थे। स्वामी जी का इरादा इन्हीं मिश्र जी से शास्त्रार्थ करने का था। जब उन्हों ने किसी से मिश्र जी के मकान का पता पूछा। उसने कहा—

स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणम्।
कीरांगना यत्र गिरः वदन्ति॥
द्वारस्थनीडान्तरसंनिरुद्धा।
अवेहि तन्मण्डनमिश्रधाम॥

अर्थात—जिस दरवाजे पर पिजड़ों में बन्द सुग्गों की स्त्रियां (सुग्गी या मैना आदि पक्षियो) को यह कहते हुए सुनना कि—वेद

दिखाई पडा। स्वामी जी के मन मे आया कि इस बुड्ढे को तो देखा, मरने के दिन आ गये हैं और अभी भी व्याकरण की धातु कठस्थ कर रहा है। इसे सुधारना चाहिये। यह सोचकर स्वामी जी ने उस बूढे से कहा—

भज गोविंदं भज गोविंदं गोविंदं भज मूढमते।
प्राप्ते सन्निहिते मरणे नहि नहि रक्षति 'डुकृञ् करणे'॥

अर्थात्—ऐ मूर्ख, गोविन्द को भज क्योंकि मृत्यु का समय आ जाने पर 'डुकृञ्करणे' तेरी रक्षा न करेगा।

कहा जाता है कि स्वामी जी की बात सुन कर बुड्ढे को ऐसी ग्लानि हुई कि व्याकरण का रटना-रटाना छोड़ वह सन्यासी हो गया।

* * *

श्रीधर स्वामी का स्तोत्रपाठ

एक बार श्रीधर स्वामी कहीं जा रहे थे। रास्ते मे रात हो गई। रास्ता जगल होकर था और जब स्वामी जी बीचों बीच जगल में पहुँचे तो चोरों ने इन्हे आ घेरा। यद्यपि स्वामी जी के पास कुछ भी नहीं था तथापि प्राण चले जाने के भय से ये डर गये। जब इन्हे और कोई उपाय न सूझा तो इन्होंने अपने इष्टदेव श्रीरामचन्द्र जी की स्तुति मे निम्नलिखित श्लोक पढा—

नमः परमहंसास्वादितचरणकमलचिन्मकरन्दाय।
भक्तजनमानसनिवासाय श्रीरामाय॥

अर्थात्—जिन भगवान् रामचन्द्र के चरण-कमल के चैतन्य (चित्) रूपी पराग का ब्रह्मज्ञानीरूपी भौंरे स्वाद लेते हैं और जो श्रीराम-भक्तो के मनरूपी सरोवर मे बसते हैं उनको नमस्कार है।

कहा जाता है कि इस श्लोक का पाठ करते ही उन चोरों को अपने चारों ओर धनुषवाण लिये हुए दो अलौकिक पुरुष देख पडे। यह दृश्य

महात्मा शंकर का अपराध-क्षमापन

शकर स्वामी शैव थे। शिव के उपासक को शक्ति (भगवती) का श्रवण-कीर्त्तन, पूजा-पाठ भला क्यों अच्छा लगता—निदान देवी इन पर क्रुद्ध हो गईं। दड देने के लिये देवी जी ने इनके शरीर की सारी शक्ति खींच ली। उस समय स्वामी जी की उम्र पचासी बरस पार गई थी। जब इन्हे मालूम हुआ कि देवी जी क्रुद्ध हैं तो इन्होंने भगवती से क्षमा माँगी। स्वामी जी ने अपराध-क्षमापन के लिये एक स्तोत्र बना कर पढा। इस स्तोत्र के पढते पढते उनमें फिर पहले जैसी शक्ति भर गई। यह स्तोत्र 'देव्यपराध-क्षमापन' के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें बारह श्लोक हैं और नमूने के लिये यहाँ पर उस स्तोत्र का पाँचवाँ श्लोक दिया जा रहा है—

परित्यक्ता देवान् विविधविधसेवाकुलतया।
मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि॥
इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता।
निरालम्बो लंबोदर-जननि कं यामि शरणम्॥

अर्थात्—अनेक प्रकार की पूजा-पाठ से ऊब कर मैंने अन्य देवताओं को छोड़ दिया है। इस समय मेरी उम्र पचासी वर्ष से ऊपर है। अब यदि आप की कृपा न होगी तो हे लम्बोदर-जननि—पार्वती जी! निराश्रय होकर मैं किसकी शरण में जाऊँ?

* * *

वृद्ध वैयाकरण का संन्यास

स्वामी शकराचार्य एक बार कहीं जा रहे थे। रास्ते में एक बुड्ढा आदमी व्याकरण का 'डुकृञ् करणे' धातु याद करता हुआ उनको

बाण कवि की स्त्री ने—जो पति के चले जाने से रुष्ट हो गई थीं—शाप दे दिया कि मयूर के सर्वांग में कोढ़ हो जाय। फलतः मयूर कवि कोढ़ी हो गये परन्तु सूर्य की स्तुति करने पर उनका कुष्ट जाता रहा।

* * *

मयूर कवि की सूर्यस्तुति

देह भर में कोढ़ हो जाने पर मयूर कवि यमुना के किनारे गये। वहाँ जल में उन्होंने सौ लट्ठे गाड़े। तत्पश्चात् वे प्रतिदिन एक लट्ठे पर खड़े हो कर सूर्य की स्तुति में एक श्लोक पढ़ते और श्लोक पूरा हो जाने पर वह लट्ठा पानी में डुबो देते थे। इस तरह उन्होंने सौ दिन में एक सौ श्लोक बनाये। वे प्रतिज्ञा कर चुके थे कि सौवाँ लट्ठा गिराते समय तक यदि मेरा कोढ़ न अच्छा हुआ तो लट्ठे के साथ मैं भी जल में डूब कर प्राण त्याग दूँगा। परन्तु सूर्य-शतक पूरा होते ही उनका रोग अच्छा हो गया।* ये एक सौ श्लोक आज भी 'मयूर-शतक' के नाम से प्रसिद्ध हैं। नमूने के लिये यहाँ पर उस शतक के दो श्लोक उद्धृत किये जा रहे हैं—

भक्तिप्रह्वायदातुं कमलवनकुटीकोटरक्रोडलीनाम्।
लक्ष्मीमाक्रष्टुंकामा इव कमलवनोद्घाटनं कुर्वते ये॥
कालाकारान्धकाराननपतित जगत् साध्वसध्वंसकल्याः।
कल्याणं वो क्रियासु' किसलयरुचयस्तेकरा भास्करस्य॥

---

* कुछ लोगों का यह भी मत है कि कवि जी ने एक बड़ा सा झूला डलवाया जिसमें सौ रस्सियां बांधी गईं। झूले के नीचे आग प्रज्वलित कर दी गई। सूर्योदय होते ही मयूर इस झूले पर बैठ कर प्रतिदिन एक श्लोक पढ़ते और झूले की एक रस्सी काट देते थे। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि यदि सौवें दिन तक कार्य सिद्ध न हुआ तो नीचे जलती हुई आग में कूद पड़ूंगा। परन्तु शतक पूरा हो जाने पर उनका कुष्ट जाता रहा।

देख वे चोर बहुत डरे और स्वामी जी के पैरो पर गिर कर क्षमा मागी। स्वामी जी को दया आ गई और इन्होने उनसे कभी भी चोरी न करने की प्रतिज्ञा कराकर उन्हे छोड़ दिया।

* * *

मयूर कवि का कुष्ठ

संस्कृत के प्रसिद्ध कवि बाणभट्ट मयूर कवि के बहनोई थे। एक समय मयूर कवि ने रात्रि के शेष भाग मे कुछ कविता बनाई और प्रसन्न हो अपने बहनोई को सुनाने के लिये उसी समय घर से चल दिये। इधर बाण कवि ने अपनी मानिनी प्रियतमा को मनाने के लिये एक छन्द के तीन चरण तो बना लिये थे परन्तु चौथा न बनता था। इसके लिये वे बार बार उस श्लोक के इन तीनो पदो को पढ रहे थे—

गतप्राया रात्रि' कृशतनु शशी शीर्यत इव।
प्रदीपोऽयं निद्रावशमुपगतो घूर्णित इव॥
प्रणामान्तो मानस्त्यजसि न तथापि क्रुधमहो।

अर्थात्—रात बीत चली है। चन्द्रमा क्षीण हो रहा है। यह दिया (दीपक) ऊँघ ऊँघ कर गिरना चाहता है (झिलमिलाकर बुझना चाहता है)। प्रणाम करने पर मान छूट जाता है परन्तु बडा आश्चर्य है कि मनाने पर भी तुम अपना मान नहीं छोडती हो।

इतना सुनते ही कविता-रस से मुग्ध हुए मयूर कवि से न रहा गया और भावावेश मे उन्होंने चौथा चरण बनाकर इस प्रकार पढा—

कुचप्रत्यासत्या हृदयमपि ते चंडि कठिनम्

हे क्रोध करने वाली देवी! मालूम होता है कुचो की समीपता के कारण तुम्हारा हृदय भी कठोर बन गया है!

बाण ने मयूर कवि की वाणी को पहचाना। वे कोठे पर से नीचे उतर आए और अपने प्रेमी के साथ बात-चीत करने लगे। इस पर

गये थे कि यदि तुम सुपुत्र हो तो उस पंडित को शास्त्रार्थ मे पराजित करके इसका बदला लेना। श्रीहर्ष ने इस कार्य की सिद्धि के लिये भगवती की आराधना की। वे प्रसन्न हुई और कहा—जा! तेरी मनोकामना पूरी हो।

तदनन्तर कविवर श्रीहर्ष राजा विजयचन्द्र की सभा मे गये और वहाँ जाते ही राजा की स्तुति मे निम्नलिखित श्लोक पढा—

गोविन्दनन्दनतया च वपु· श्रिया च—
मास्मिन्नृपे कुरुत कामधियं तरुण्य· ॥
अस्त्रीकरोति जगतां विजये स्मर· स्त्री—
रस्त्रीजन· पुनरनेन विधीयते स्त्री ॥

अर्थात्—राजा विजयचन्द्र की सुन्दरता के कारण कामभाव से प्रेरित होकर स्त्रियाँ उनमें काम-बुद्धि न करे। क्योंकि एक ओर अस्त्री—बिना स्त्री का—कामदेव ससार को स्त्रीमय देखता है और दूसरी ओर अस्त्र-शस्त्र लेकर आया हुआ (दुश्मन) राजा साहब के द्वारा स्त्रीवत्—बलहीन कर दिया जाता है।

पद्य को सुनकर राजा साहब तथा उपस्थित विद्वज्जन बडे प्रसन्न हुए। इतना ही नहीं बल्कि हीरविजय को पराजित करनेवाले उन नैयायिक जी ने भी अपनी हार स्वीकार कर ली।

* * *

पंडितराज की युक्ति

पडितराज जगन्नाथ के ऊपर क़र्ज हो गया था। उसे चुका देने की बात सोच कर वे किसी राजा के यहाँ पहुँचे। वहाँ का नियम था कि जो कोई दरबार में जाता उसे राजा साहब को कुछ न कुछ अवश्य सुनाना पडता था। पडितराज ने कुछ न सुनाया तो राजा ने उनको दरबार मे निकाल देने के लिये कहा। इन्होंने अपनी इज्जत जाती देखी तो बोले—

भाव यह हुआ कि—सूर्यनारायण अपने विनीत भक्तों को पुरस्कार स्वरूप लक्ष्मी (धन) देना चाहते हैं। कमल समूह में लक्ष्मी का निवास माना गया है। अतः वहाँ से उनको लेने के लिये वे मानो अपना हाथ* फैलाते हैं। इस प्रकार स्पर्शमात्र से कमल-वन को खिलाने वाली सूर्य की किरणें आप लोगों का कल्याण करें। कालरूप अजगर के मुँह में पड़े हुए समस्त संसार के भय को दूर करने में वे किरणें समर्थ हैं।

एकं ज्योतिर्दृशौ द्वे त्रिजगति गदितान्यब्जजास्यैश्चतुर्भिः।
भूतानां पंचमं यान्यलमृतुषु तथा षट्सु नानाविधानि॥
युष्माकं तानि सप्तत्रिदशमुनिनुतान्यष्टदिग्भाञ्जिभानोः।
यान्ति प्राह्णे नवत्वं दशदधतु शिवं दीधितीनां शतानि॥

भावार्थ—सूर्य की एक हजार किरणें आप लोगों का कल्याण करें। ब्रह्मा जी ने चारों मुँह से इनको एक ज्योति और तीनों लोकों की दो आँखें बतलाया है। ये पञ्चभूतों में एक हैं और छः ऋतुओं में शोभा सहित नाना प्रकार के रूपरंग धारण करती हैं†। सूर्य की ये किरणें आठों दिशाओं में व्याप्त हैं। सवेरे के पहर नवीनता धारण करने वाली इन किरणों को सप्तर्षि भी नमस्कार करते हैं।

* * *

श्रीहर्ष की विजय

सुनते हैं, श्रीहर्ष के पिता हीर-विजय सूरि मिथिला के किसी नैयायिक से शास्त्रार्थ में हार गये। वे मरते समय श्रीहर्ष से क...

---

* 'करें' का एक अर्थ किरण और दूसरा अर्थ यहाँ हाथ भी लिया गया है।

† वनस्पति-विज्ञान (Botany) के अनुसार सूर्य की किरणों से पत्तियों और फूलों में विविध रंग आते हैं।

सीढ़ी के ऊपर तक चढ गया। तब यह उसके ऊपरवाली सीढ़ी पर चढ आए, और दूसरा श्लोक पढ़ा। इसके पढ़ने के बाद ही उस सीढ़ी पर भी पानी चढ आया। इस तरह वहाँ की छप्पन सीढ़ियों तक पानी चढ़ता गया और ये प्रत्येक सीढ़ी पर एक एक श्लोक पढ़ने गये।

कहते हैं जब पानी ऊपर चढ गया तो वहाँ अकस्मात् गगा जी प्रकट हो गई। गगा जी ने उस लड़की का हाथ पकड़ कर पडितराज के हाथ मे दे दिया और कहा—पडित जी! यह आपकी अर्द्धांगिनी हुई। लोग इस चमत्कार को देखकर दग रह गये।

पडितराज जी ने जो छप्पन श्लोक पढ़े थे, वे [illegible] के नाम से आज भी विख्यात हैं। नमूने के लिये उनमे से दो [illegible] जाते हैं—

सदैव त्वय्यार्पितकुशलचिन्ताभरमिम।
यदि त्वं मामंव त्यजसि समयेऽस्मिन् [illegible]॥
तदा विश्वासोऽयं त्रिभुवनतलादस्[illegible]से।
निराधाराचेयं भवति खलु निर्व्याज [illegible]॥

हे माता! मैंने अपनी कुशल की चिन्ता का बोझ [illegible] आप पर रक्खा है (हमारी कुशल और अकुशल आपकी कृपा पर निर्भर थी)। अब यदि इस विपत्ति के समय आप मुझे छोड देगी तो यह विश्वास (कि देवी-देवता की आराधना करने से सकट कट जाते हैं) ससार से नष्ट हो जायगा और साधारण—सहज दयावाला भाव [illegible] टूट जायगा।

पयः पीत्वा मातस्तव सपदियातः सहचरै—
र्विमूढै संरन्तुं क्वचिदपि च विश्रातिमगमम्॥
इदानीमुत्संगे मृदुपवनसंचार शिशिरे।
चिरादुन्निद्रं मां सदयहृदये शायय चिरम्॥

हे माता! अपने अज्ञानी साथियों के साथ खेल-कूद के लिये जाता हुआ मैं आप का जल पी कर कुछ शान्ति को प्राप्त हुआ। परतु इस

उत्तमर्णधनदानशंकया पावकस्य शिखया हृदस्थया—
देवदग्धवसना सरस्वती नास्ति वहिरुपैति लज्जया ॥

अर्थात्—मैं ऋणी हूँ। इस ऋण के चुकाने की शकारूपी अग्नि से हृदयस्थ सरस्वती दग्धाम्बरा हो गई हैं। अतः लज्जा से वे पति के आगे नहीं निकलती।

राजा साहब पंडितराज की युक्तिपूर्ण रचना सुन कर बड़े प्रसन्न हुए और न केवल उनका ऋण चुका दिया प्रत्युत भाँति भाँति की वस्तुयें सम्मान में दीं।

* * *

कवि का अद्भुत चमत्कार

पंडितराज जगन्नाथ अकबर के यहाँ के राजपंडित थे। इधर अब्दुर्रहीम खानखाना भी इन्हीं के यहाँ के दरबारी थे। खानखाना के एक बड़ी खूबसूरत लड़की थी। उस पर जगन्नाथ कवि मुग्ध हो गए। इधर वह भी कविराज को चाहती थी।

इन दोनों के प्रेम की बात जब खानखाना ने जानी, तब उन्होंने अपने मन में सोचा, यदि पंडितजी हिन्दू होते हुए मुसलमानकन्या को स्वीकार करें, तो मैं ऐसा विद्वान् दामाद पाकर अपने को धन्य मानूँगा।

होते-होते यह बात बादशाह के पास पहुँची। इन्होंने भी यही कहा—"पंडितजी! आप हिन्दू होते हुए इसे कैसे स्वीकार करेंगे?" इन्होंने कहा—"हुजूर! कन्या में कोई दोष नहीं होता।" बादशाह ने इसे सुनकर कहा—"क्या तुम इसका कोई प्रमाण दे सकते हो?" इन्होंने कहा—"हाँ हुजूर! क्यों नहीं आइए, और प्रत्यक्ष प्रमाण लीजिए।"

यह कहकर वह गंगा के तट की सीढ़ी पर खानखाना की लड़की को लेकर खड़े हो गए, और एक श्लोक पढ़ा। इसके पढ़ते ही जल उछ

में आते थे और कोई उन्हे कुछ न कहता। उनके आने पर अकबर उन्हे आदरपूर्वक बैठाते थे और सारा दरबार उनका आदर करने के लिये खडा हो जाता था। एक दिन अकबर ने अपने सभासदो से कहा— आज पडितराज के आने पर आप लोग उठ कर खड़े न हो। देखे क्या होता है।

ऐसा ही किया गया। दरबार मे जाने पर वहा का दूसरा ही रग देख कर पडित जी सब रहस्य समझ गए और सोचा कि अब क्या करना चाहिये। तत्काल ही उन्हे एक उपाय सूझ गया और वे दरवाजे पर— जहां खडे थे—बैठ गये। उन्हे जूतों के पास बैठते देख बादशाह बोले—पडित जी! आज आप वहा क्यो बैठ गए? इधर आइए। पडित जी बोले—

पुरो वा पश्चाद्वा क्वचिदपि विपामः क्षितिपते।
तदा का नो हानिर्वचनरचनाक्रीतजगतां॥
अगारे कान्तारे कुचकलशहारे निपतिते।
मणेस्तुल्यं मूल्यं प्रकृतिसुभगाच्छादितवत॥

अर्थात्—हे बादशाह! जिन लोगा ने अपनी कविता से ससार को मोल ले लिया है वे यहा या वहा—नीचे या ऊँचे—कहीं भी बैठे, उनकी क्या हानि है। प्रकृति से ही सुन्दर मणि चाहे घर मे हो, चाहे जगल मे, चाहे स्त्री के हार में गुथा हो—उसका मूल्य सर्वत्र एक सा है। भाव यह कि जिस प्रकार अच्छा मणि कहीं भी रहे उसके मूल्य में कमी नहीं होती उसी तरह चाहे जिस स्थान पर बैठें—हमारा सम्मान कम होने को नहीं।

* * *

दो बंगाली कवि

(१)

बगालप्रान्त के श्री भवनाथ मिश्र बडे भारी पडित थे। आप के पुत्र पडित शकर मिश्र जी बडी उत्तम कविता करते थे। एक बार शकर मिश्र

समय आप मुझ उनींदे को शीतलमद वायु से छुई गई व दीनों दया करनेवाली अपनी गोद में सदा के लिये सुला लेवे।

* * *

पंडितराज और अप्पय दीक्षित

पंडितराज जगन्नाथ वृद्ध हो कर काशी-वास करते थे। एक दिन प्रभात के समय ठंढी ठंढी हवा में पंडितराज अपनी यवनयुवती को बगल में लिये हुए गंगा-तट पर मुँह ढाँके सोये हुए थे और इनकी चोटी खटिया से नीचे लटक रही थी। इतने में अप्पय दीक्षित भी स्नानार्थ आ पहुँचे। दीक्षित जी को एक वृद्ध मनुष्य की यह दशा देख कर दुःख हुआ और वे कहने लगे—

किं निरशंकं शेपे, शेपे वयसि त्वमागते मृत्यौ ?

अर्थात्—महाशय ! मौत आ चुकी है, अब तुम शेपवय में क्यों निडर सो रहे हो ? अब तो कुछ ईश्वर का भजन करो और अपने जीवन को सुधारो।

परन्तु इस पद्य के सुनते ही पंडितराज ने ज्यों ही मुँह खोल कर उनकी तरफ देखा त्यों ही पंडितराज को पहचान कर अप्पय दीक्षित ने इस पद्य का उत्तरार्द्ध यों पढ़ दिया—

अथवा सुखं शयीथा निकटे जागर्त्ति जाह्नवी भवत. ॥

अर्थात्—अथवा आप सुख से सोते रहिये क्योंकि आपके पास में भगवती जाह्नवी जग रही हैं। बस, आप की फिक्र उन्हें है। आप निडर रहिये।

* * *

कवि जी की दूरन्देशी

कहा जाता है अकबर बादशाह के यहां पंडितराज जगन्नाथ का बड़ा सम्मान था। यहां तक कि अकबर के आ जाने के बाद वे मना

खुसरो का ढकोसला

एक कुये पर चार पनहारिने पानी भर रही थी। खुसरो को राह चलते प्यास लगी तो जाकर एक से पानी मागा। उनमे से एक इन्हे पहचानती थी। उसने सब से कहा कि यह वही खुसरो है जो पहेली, मुकरी कहता है। तब उनमे से एक ने खुसरो से कहा कि हमें खीर की बात कहो, दूसरी ने चर्खे का, तीसरी ने ढोल का और चौथी ने कुत्ते का नाम लिया। खुसरो ने जब समझा कि बिना उत्तर दिए उन्हे पानी न मिलेगा तो निम्नलिखित ढकोसला सुना कर पानी पिया—

खीर पकाई जतन से, औ चरखा दिया चलाय।
आया कुत्ता खा गया, तू बैठी ढोल बजाय॥
—ला पानी पिला।

*

केशव जी की रसिकता

केशव रसिक जीव थे। कहते हैं बुड्ढे होने पर एक [illegible] वे किसी कुएँ पर बैठे थे। [illegible] वहा स्त्रियो ने इन्हे बाबा कहकर [illegible] थे। इस पर आपने यह [illegible] हा कहा—

केशव के[illegible] जस करी, जस बैरिहु न कराहि।
चन्द्रवदनि मृगलोचनी, बाबा कहि कहि जाहि॥

*

[illegible]स्वार्थी व्यास जी

हरीराम व्यास बडे पडित थे। आप किसी में भी शास्त्रार्थ करने की क्षमता रखते थे। एक बार वृन्दावन मे जा कर व्यास जी ने

किसी राजा के दरबार मे गये। आप को कवि जान कर राजा ने वेद के मन्त्र—'सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्' की समस्या दी। आप ने उसी समय राजा साहब को लक्ष्य करके उसकी पूर्ति सुना दी—

सहस्रशीर्षा पुरुष. सहस्राक्षः सहस्रपात।
चलितः चकितः छन्न. प्रयाणे तव भूपते॥

अर्थात्—हे राजन्! जब आप किसी देश पर चढाई करने के लिये निकलते हैं तो शेषनाग विचलित हो जाते हैं, इन्द्र चकित हो जाते हैं और हिमालय पर्वत ढक जाता है।

श्रीशकर मिश्र की पूर्ति 'केवल पूर्ति के लिये' नहीं की गई, इसमें उनकी प्रतिभा पूर्ण रूपेण व्याप्त है।

(२)

पडित रघुनाथ शिरोमणि के शिष्य श्री मथुरानाथ तर्कवागीश प्रसिद्ध तार्किक हो गये हैं। मथुरानाथ जी शास्त्र के ऐसे प्रेमी थे कि वृद्धावस्था को प्राप्त होने पर भी पठन-पाठन जारी रक्खा। यह देख किसी सन्यासी ने इन से कहा—

तर्ककर्कशविचारचातुरी का तुरीयवयसा विभाव्यते।
आतुरी भवति यत्र मानसम्—

स्वामी जी इतना ही कह पाये थे कि तर्कवागीश जी ने उत्तर दिया—

धातुरीप्सितमपाकरोतु क ॥

स्वामी जी के कथन का अर्थ है—इस चौथेपन मे तर्क के कठिन विचारो की उलझन मे क्यो पडे हो जिसमे मन घबडा जाता है? मथुरानाथ जी उत्तर देते हैं—ब्रह्मा की इच्छा को कौन टाल सकता है।

* * *

फिरत फिरत फाया भये, बैठन कह्यो न कोइ।
गले कीच सो पग भगे, ऊपर बरसत तोइ॥
अन्धकार रजनी विषैं, हिमरितु अगहन मास।
नारि एक बैठन कह्यो, पुरष उठ्यो लै वाँस॥

प्रीतमदास का बाजरा

कहते हैं एक बार बड़ा भारी अकाल पड़ा। वर्षा के बिना कुहराम मच गया। भक्तवर प्रीतमदास जी ने अपने मन्दिर के खेत में बाजरा बोया था। एक वृद्ध साधु ने आकर प्रीतमदास को खबर दी कि पानी के बिना बाजरा सूखा जा रहा है। दूसरे दिन वे वहाँ गये और भगवान् की प्रार्थना करते हुए उन्होंने कहा—

वाला जी तुं मोकलने[1] बरसाद रे।
साधु सन्तो शानो[2] करशे परशाद रे॥

कहते हैं, उसी दिन ऐसे जोरों की वर्षा हुई कि दो तीन दिनों में प्रीतम्दास जी का तमाम बाजारा हरा हो गया।

प्रीतमदास की दिव्यदृष्टि

एक बार प्रीतमदास जी डाकोर जी में श्रीरणछोड जी के दर्शन करने गये। उसी समय किसी ने आप से कहा—बाबा जी! आप को दीखता तो है, नहीं झाँकी का क्या मजा आएगा? यह सुनकर इन्होंने एक पद कहा जिसमें जैसा भी ठाकुर जी का शृङ्गार किया गया था, उसका वैसा ही वर्णन था। यही नहीं पुजारी ने भूल से रणछोड जी की मूर्त्ति में एक उलटा कमल का फूल लगा दिया था। जब आपने

[1] मोकलने = मेह को भेज।
[2] शानो = किस तरह से।

गोस्वामी हितहरिवंश जी को शास्त्रार्थ करने के लिये ललकार
गोस्वामी जी ने नम्रभाव से यह पद कहा—

यह जो एक मन बहुत ठौर करि, कहि कौनै सचु पायो।
जहँ तहँ विपति जार जुवती ज्यों प्रगट पिंगला गायो॥

भावार्थ—जिसने अपने मन को जगह जगह दौड़ाया (शंकायें की) उसको सुख नहीं मिल सका। जार-युवती (परकीया) की भाँति विपत्ति ही मिली।

यह पद सुन व्यास जी चेत गये और हितहरिवंश जी के अनन्य भक्त हो गए।

* * *

व्यास जी वृन्दावन से न गए

जब हितहरिवंश जी से दीक्षा ले कर व्यास जी वृन्दावन में ही रह गये तो महाराज मधुकरसाह इन्हें ओड़छा ले जाने के लिये स्वयं आये परन्तु ये वृन्दावन छोड़ कर न गये और अधीर हो कर इन्होंने यह पद कहा—

वृन्दावन के रूख हमारे मात-पिता सुत-बन्ध।
गुरु गोविन्द साधु गति मति सुख फल फूलन की गंध॥
इनहि पीठि दै अनत डीठि करै सो अन्धन में अंध।
व्यास इनहि छोड़ै औ छुड़ावै ताको ... कंध॥

* * *

बनारसीदास जी की ...पत्ति

एक बार बनारसीदास अपने साथियों ... सहित कहीं ठहरे। ... में पानी बरसने लगा। बाजार में कहीं ... होने का स्थान नहीं ... सब के किवाड़ बन्द थे। उस समय कवि ने निम्नलिखित छन्द बना अपनी मनोव्यथा प्रकट की—

मोहिं का हँससि कि कोहरहिं।

अर्थात्—मुझे देख कर हँसते हो या मेरे बनाने वाले पर।

जायसी की इस बात का राजा पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह अपने किए पर पछतावा करने लगे।

* * *

भक्त और भगवान्

भक्तवर श्री गदाधर भट्ट के विषय मे प्रसिद्ध है कि ये जब तन्मय हो कर अपने पद गाने लगते थे तब इन्हे भगवान् की झलक प्रत्यक्ष मिल जाती थी। एक बार भट्टजी नीचे लिखी मलार गा रहे थे—

भीजत कब देखौ इन नैना।
स्यामा जू की सुरँग चूनरी मोहन को उपरैना॥

कहा जाता है, भट्ट जी को राधाकृष्ण चूनरी तथा उपरैना (उपरना) से युक्त भीगते हुए ही दीख पडे। तब इन्हो ने अपना पद इस प्रकार पूरा किया—

स्यामा स्याम कुंज तर ठाढ़े जतन कियो कछु मै ना।
श्रीभट उमडि घटा चहुँ दिसि तें घिरि आई जल-सेना॥

* * *

भट्टजी और जीव गोस्वामी

एक दिन दो साधुओ ने जीव गोस्वामी के सामने गदाधर भट्ट जी का यह पद सुनाया—

सखी हौं स्याम-रंग रँगी।
देखि बिकाय गई वह मूरति सूरति माँहि पगी॥
संग हुतो अपनो सपनो सो सोइ रही रस खोई।
जागेहु आगे दृष्टि परै सखि नैकु न न्यारो होई॥
एक जु मेरी अँखियन मे निसि द्यौस रह्यौ करि भौन।
गाय चरावन जात सुन्यो सखि सो धौं कन्हैया कौन॥

उसकी यह भूल बता दी तो लोग दंग रह गए। वह पद जो प्रीतम
जी ने गाया था उसके दो चरण यों हैं:—

रूप तमारू[1] रलियाँमणु रणछोडराय।
सुन्दर सरखुं सोहिया मणुं रणछोडराय॥

* * *

कुम्भनदास जी की भगवद्भक्ति

महात्मा कुम्भनदास बडे भगवद्भक्त थे। आप मजे की कविता
कर लेते थे। कहते हैं एक बार अकबर बादशाह के बुलाने पर आपको
फतेहपुर सीकरी जाना पडा। वहाँ आपका बडा सम्मान हुआ, पर
आपको वह जरा भी अच्छा न लगा। अच्छा भी कैसे लगता! भक्त
पुरुष का भजन के अलावा किसी में चित्त नहीं लगता। आपने उसी
समय यह पद बना कर पढा—

सन्तन को कहा सीकरी सों काम?
आवत जात पनहियाँ टूटीं बिसरि गयो हरिनाम।
जिनको मुख देखे दुख उपजत तिनको करिवे परी सलाम।
कुम्भनदास लाल गिरिधर बिनु और सबै बे-काम॥

* * *

हँस कर पश्चात्ताप किया

जायसी (मलिक मुहम्मद) अपने समय के सिद्ध फकीरों में गिने
जाते थे। अमेठी के राजघराने में इनका बड़ा मान था, क्योंकि इनकी
दुआ से अमेठी के राजा को पुत्र हुआ था। ये काने और देखने में
कुरूप थे। कहते हैं कोई राजा इनकी बदसूरती देख हँस पडे। यह देख
जायसी ने कहा—

[1] रलियाँमणु = शोभायमान।

कवि और सङ्गीतज्ञ की भेट

तानसेन मियाँ अकबरी दरबार के नौ रत्नों में एक थे। उनके हृदय मे गुणियों के लिये आदरणीय स्थान था। सूरदास की कविता पर रीझ कर उन्हों ने उनके लिए निम्नलिखित दोहा कहा था—

किधौं सूर को सर लग्यो किधौं सूर की पीर।
किधौं सूर को पद लग्यो तनमन धुनत सरीर॥

इसे सुनकर सूरदास ने भी तानसेन की प्रशंसा यों की थी—

विधना ने यह जानि कै शेषहिं दिये न कान।
धरा मेरु सब डोलतो तानसेन की तान॥

* * *

रसखान की कृष्णभक्ति

रसखान मुसलमान थे। कहा जाता है कि युवावस्था मे किसी लड़के को माशूक के रूप मे अङ्कित कर वे उससे प्रेम करने लगे। यह देख उनके एक हिन्दूमित्र ने कहा—भाई! जितना प्रेम तुम इस लड़के से करते हो उतना यदि हमारे प्रभु से करो तो तुम्हारा जीवन सफल हो जाय। रसखान ने पूछा—तुम्हारे प्रभु कौन हैं? उत्तर मिला—वृन्दावन में विचरण करने वाले श्री कृष्ण जी।

यह सुनकर रसखान के ज्ञान-पटल खुल गए। उन्हे सांसारिक विषयों से विराग हो गया और वे बंशीवाले की खोज में मथुरा वृन्दावन की ओर निकल पड़े। मथुरा जी मे किसी मन्दिर मे वे दर्शन करने गये। वहां कृष्ण के बाल रूप को देख मूर्ति की छवि पर मुग्ध हो कर उन्हों ने प्रेमावेश मे कहा—

या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूं पुर को तजि डारौं।
आठहु सिद्धि नवौ निधि को सुख नन्द की गाय चराय बिसारौं॥
'रसखान' कबौं इन आँखिन सो ब्रज के वन बाग तड़ाग निहारौं।
कोटिन वे कलधौत के धाम करील के कुंजन ऊपर वारौं।

* * *

कासों कहौं कौन पतियावै कौन करै बकवाद।
कैसे कै कहि जात गदाधर गूँगे ते गुर-स्वाद॥

इस पद को सुन जीव स्वामी ने भट्ट जी के पास यह श्लोक लिख भेजा—

अनाराध्य राधापदाम्भोजयुग्मम्।
अनाश्रित्य वृन्दाटवी तत्पदाङ्कम्॥
असंभाष्य तद्भावगंभीरचित्तान्।
कुतः श्यामसिन्धोः रहस्यावगाहः॥

अर्थात्—यदि राधा के चरण-कमलों की आराधना नहीं की, यदि उनके चरण-चिह्नों से अङ्कित वृन्दावन की सैर नहीं की, यदि भक्ति के कारण गम्भीर-चित्त भक्तों से बातचीत नहीं की तो कृष्णचन्द्र के रहस्यों का तुमने क्या पता लगाया!

यह श्लोक पढ़ कर भट्ट जी मूर्च्छित हो गए। फिर सुध आने पर सीधे वृन्दावन में जाकर चैतन्य महाप्रभु के शिष्य हुए।

* * *

महाकवि सूर और भगवान् कृष्ण

अन्धे होने के कारण एक बार सूरदास किसी कुयें में जा पड़े। कई दिनों तक कुयें में पड़े रहने के बाद सातवें दिन कृष्ण जी ने इन्हें बाहर निकाला। जब सूरदास को यह मालूम हुआ कि मेरी रक्षा के लिए भगवान् कृष्ण स्वयं आए हैं तो उन्हों ने कृष्ण जी की बाँह पकड़ ली। परन्तु वे हाथ छुड़ा कर भाग गए, तब सूरदास ने प्रेम में मग्न हो यह दोहा पढ़ा—

बाँह छोड़ाये जात हौ निबल जानि कै मोहिं।
हिरदै सों जब जाहुगे मर्द बदौंगो तोहिं॥

* * *

देस परदेस सूवा केतक इनाम दीन्हें,
कीन्हीं दिलजोई और प्यार परवानगी।
जब जसवन्त सुरपुर को सिधाये तब,
तेग बाँध आये यह कैसी मरदानगी ॥

कहते हैं इसका बादशाह औरङ्गजेब पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि उसने मन्दिर तुड़वाने का हुक्म वापस ले लिया।

* * *

आलम और शेख

(१)

एक कवि कहीं जा रहा था। अचानक उसके मन मे किसी दोहे का पहला चरण उठ आया। उसने तुरन्त उसे लिखकर डुपट्टे के एक कोने में बाँध लिया। घर पहुँचने पर वह उसे खोलना भूल गया और दोहा डुपट्टे में ही बँधा रह गया। कुछ दिनो बाद उसने डुपट्टा रँगने को दिया तो उसमे यह अर्द्धलिखित दोहा पाया गया। रँगरेज की एक लड़की भी कविता से प्रेम रखती थी। उसने वह कागज निकाला जिसमें लिखा था—

कनक-छरी सी कामिनी काहे को कटि छीन।

यह पढते ही उसने समझा कि कवि जी ने परीक्षा ली है इसलिये मैं अपने को कवयित्री सिद्ध कर दूँगी। यह सोचकर उसने उसी पंक्ति के नीचे लिख दिया—

कटि को कंचन काटि विधि कुचन मध्य धरि दीन॥

इस प्रकार उसने दोहा पूरा करके वह कागज फिर ज्यों का त्यों डुपट्टे मे बाँध दिया। जब कवि ने पूरा दोहा लिखा हुआ पाया तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। पीछे, जब उसे मालूम हुआ कि यह सब उस रँगरेज की लडकी की कृति है तो उसकी काव्य-शक्ति पर मुग्ध हो कर उसने उसके साथ विवाह कर लिया। यही दम्पति आगे चलकर

तेरह लाख, साधू खा गए

सूरदास 'मदनमोहन' अकबर के समय में सण्डीला (जिला हरदोई) के अमीन थे। ये बड़े उदार थे और जो कुछ इनके पास रहता सब साधुओं की सेवा मे लगा दिया करते थे। कहते हैं, एक बार सँडीले तहसील की मालगुजारी के कई लाख रुपए जो सरकारी खजाने में आए थे, इन्होंने सब साधुओं को खिला पिला दिये और शाही खजाने में कङ्कड़, पत्थर से भरे सन्दूक भेज दिए। इसके सिवाय आप ने सब बक्सो के अन्दर कागज की चिटों पर कुछ लिख कर रख दिया और आप अज्ञात स्थान को रवाना हो गए। जब रुपया निकालने के लिए बक्स खोले गए तो उनमें से प्रत्येक मे निम्नलिखित पद लिखा हुआ पाया गया—

तेरह लाख सँडीले आये सब साधुन मिलि गटके।
सूरदास मदनमोहन आधी रात सटके॥

* * *

सच्चा कहनेवाला कविराज

वृन्द कवि बादशाह जहाँगीर के दरबारी थे। ये सच्ची बात कह डालने मे दबते न थे। इसलिए बादशाह ने इनको "सच्चा कहने वाला कविराज" की उपाधि दी थी। सम्वत् १७३६ वि० मे जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह के स्वर्गवासी होने पर औरङ्गजेब ने पचास मन्दिर तुड़वाने का हुक्म दिया था। इस अवसर पर औरङ्गजेब की आड़े हाथों खबर लेते हुए वृन्द ने कुछ कवित्त बनाये थे। उनमें से एक यहाँ दिया जाता है—

ए हो शाह औरँग कहावत हौ पातशाह,
आपहीं विचारो यह कैसी सुघरानगी।
जब महाराज लाल देरनि लगाइ लूटें,
तब क्यों न लरिकै दिखाई तेग-बानगी॥

नहीं किणी से गाड किऊँ मारे हितियारा ।
कीकर वेवे हाथ गरीबाँ ऊपर थारा ॥
साहब लेसो पुद्गली दे माथा में फाड ।
बाकरियो वे वें करे, करे हिरणियो डाड ॥

फिर क्या था, इसे सुनते ही शिकारी क्षत्रिय ने अपने शस्त्र फेंक दिये । यही नहीं, उसने भविष्य में कभी भी जीवहिंसा न करने की शपथ ले ली ।

*　　　　*

कारेखाँ ने मुर्दा जिलाया

सागर जिले में कारेखाँ नामक एक फकीर रहते थे । किसी ब्राह्मण से इनकी बड़ी दोस्ती थी । एकाएक उस ब्राह्मण की मृत्यु हो गई और लोग उसकी लाश को उठा कर चिता पर रखने लगे । तब तक खाँ साहब पहुँच गये और लोगों को डाँट कर कहा—'खबरदार ! जिन्दा आदमी को चिता पर मत रखना ।'

कहा जाता है कि उसी समय कारेखाँ ने तल्लीन हो कर ईश्वर की प्रार्थना में १०८ कवित्त कहे जिनमें से प्रत्येक की अन्तिम पंक्ति थी—

क्यों मेरी बार बार की ।

अर्थात्—हे भगवान्, आप ने मेरी बार क्यों देरी की !

कहना न होगा कि ज्यों ही खाँसाहब १०८ वाँ कवित्त पूरा कर चुके त्यों ही उनका मित्र ब्राह्मण उठ बैठा ।

*　　　　*　　　　*

भद्रतनु ने दुर्वृत्ति छोड़ी

किसी गाँव में भद्रतनु नामक एक ब्राह्मण रहता था । दैवयोग से उसका सम्पर्क सुमध्या नाम्नी वेश्या से हो गया । सुमध्या यद्यपि वेश्या-वृत्ति में थी तो भी इसका मन अपनी दशा पर खिन्न था और यह अपने उद्धार का मार्ग सोचा करती थी ।

हिन्दी-साहित्य में आलम और शेख के नाम से प्रसिद्ध हुए। पति और पत्नी दोनों ने मिल कर बड़ी सुन्दर कविता की है और आज भी उनके बनाए हुए बहुत से छन्द पाए जाते हैं।

* * *

(२)

जनश्रुति है कि निम्नलिखित कवित्त के तीन चरण 'आलम' के बनाये हुए हैं और अन्तिम चरण शेख की पूर्ति है—

प्रेम रंग पगे जगमगे जगे जामिनि के,
जोबन की जोति जगि जोर उमगत है।
मदन के माते मतवारे ऐसे घूमत हैं,
झूमत हैं झुकि झुकि झँपि उघरत है॥
आलम सो नवल निकाई इन नैननि की,
पाँखुरी पदुम पै भवँर थिरकत हैं।
चाहत हैं उड़िबे को देखत मयंकमुख,
जानत हैं रैनि ताते ताहि में रहत है॥

इस पद्य में आँखों को भौंरा बताया गया है।

* * *

शिकारी का शस्त्रत्याग

अठारहवीं शताब्दी के सन्त कवि, नगरामदास जी नागौर (मारवाड़) के एक प्रसिद्ध भगवद्भक्त हो गये हैं। एक बार आप किसी जंगल में हो कर जा रहे थे। इतने में किसी क्षत्रिय ने हिरन पर निशाना लगाया और गोली दागनी चाही। [illegible] को दया आ गई और आप ने शिकारी के पास जा कर कहा —

धाकरियो धें धें करे, करे हिरणियो डाड़।
गादरियो में में करे, नहीं किसी में गाट॥

ाहि निवाजे निहाल ह्वै जाय सो जानत हौं सब तेरे सुभाइनि ।
रो भिखारी हौं भीख दे मोहि तू राखि दे बाल बडी ठकुराइनि ॥

* * *

(२)

एक बार डौंड़ियाखेरे के राव मर्दनसिंह बीमार हुए और उनके की आशा जाती रही। उस समय रायबरेली के प्रसिद्ध कवि पंडित देव मिश्र अमेठी में थे। मिश्र जी ने कई व्यक्तियों को जिला दिया और इस विषय में उनकी काफी ख्याति थी। अत. उन्हें अमेठी से ाने के लिये आदमी भेजे गये। मिश्र जी स्वयं तो नहीं आए परंतु लोग उनको बुलाने गये थे उनसे उन्होंने कह दिया कि यद्यपि ा साहब की हालत खराब है तो भी वे मरेंगे नहीं। यह कह कर उन्होंने संस्कृत के श्लोक और एक हिन्दी का सवैया लिख कर उन्हें दिया। या यह था—

अरि-मंडल फोरि फते करिके पर-फौजन फारि कै नाखिबे है।
बहु-संख्यक छन्द-प्रबन्ध बनाय हमैं जस रावरो भाखिबे है॥
अकुलाने कहा मरदाने अबै रस श्रौनन ते तुम्हें चाखिबे है।
रघुनायक राम की नाईं तुम्हें जग में रहिबे जग राखिबे है॥

कहा जाता है कि जब पत्र ले कर आदमी डौंडियाखेरे में आये, मर्दनसिंह म्रियमाण-दशा में गंगा के किनारे पहुँचाये जा चुके थे। वदेव जी का आदेश था कि यदि मर्दनसिंह सुन सकें तो उनको यह वेता सुना दी जाय अन्यथा दिखा दी जाय। देख-सुन दोनों न सकें यह कविता जल से धो कर किसी तरह उनको पिला दी जाय। विता का कागज गंगाजल में भिगो कर उनके मुँह में निचोड़ दिया था। उन्होंने आँखें खोल दीं और तब से वे क्रमशः चंगे होने लगे।

* * *

भद्रतनु के पिता का श्राद्ध-दिवस आया और उसने श्राद्धकर्म किया भी, परन्तु उसका मन वेश्या में लगा था, अतः किसी प्रकार जल्दी जल्दी श्राद्ध समाप्त करके वह अपनी प्रेमिका के पास दौड़ा गया। उसके उतावलेपन का हाल जानकर सुमध्या ने उसे यों फटकारा—

सुन, तू किस अज्ञान में पड़ा हुआ है। यह शरीर हाड मांस जैसे घृणित पदार्थ से बना है। तू व्यर्थ ही इसके पीछे दौड रहा है। जानता नहीं—

कुच आमिष की गाँठ कनक के कलस कहत कवि।
मुख नित कफ को धाम कहत ससि के समान छवि॥

इसे सुनते ही भद्रतनु अपने किये पर पश्चात्ताप करने लगा और तब से उसने अपनी वासनामयी दुर्वृत्ति छोड शुद्ध जीवन बिताना प्रारम्भ कर दिया।

* * *

मिश्र जी की कविता का जादू

(१)

पडित सुखदेव मिश्र रायबरेली ज़िले के एक प्रसिद्ध कवि हो गये हैं। कहा जाता है, जिस समय वे अमेठी में थे, एक ब्राह्मण का लडका मर गया। उस ब्राह्मण ने सुखदेव जी का महात्म्य सुना था इसलिये वह लडके की लाश उनके सामने रख कर अपने घर चला गया। सुखदेव जी बडे पशोपेश मे पड़े कि क्या करना चाहिये। कुछ सोचविचार कर उन्होंने देवी की प्रार्थना की। प्रार्थना के समाप्त होते ही उस मृतबालक के शरीर में प्राणसंचार होने लगा और थोड़ी ही देर में वह भकभका कर उठ बैठा। पडित जी ने देवी की जो स्तुति की थी उनका अन्तिम पद्य यों था—

ज्ञान तुही और लज्जा तुही तुही लक्ष्मी है मीनल्ले मेरी गोसाईंनि।
आपनो कै मोहि जानती हौ मैं सदैव परो रहौं तेरे ही पाईंनि॥

सेवक सिपाही हम उन रजपूतन के,
दान जुद्ध जुरिबे में नेकु जे न मुरके।
नीति देनवारे हैं मही के महिपालन को,
हिये के विसुद्ध है सनेही साँचे उर के ॥
ठाकुर कहत हम बैरी बेवकूफन के,
जालिम दमाद हैं अदानियाँ ससुर के।
चोजिन के चोजी महा मौजिन के महाराज,
हम कविराज हैं पै चाकर चतुर के ॥

हिम्मत-बहादुर यह सुनते ही चुप हो गये। फिर मुस्कुराते हुए —कवि जी! बस मैं तो यही देखना चाहता था कि आप कोरे ही हैं या पुरखों की हिम्मत भी आप मे है। इस पर ठाकुर ने चतुराई से उत्तर दिया—महाराज! हिम्मत तो हमारे ऊपर अनूप से बलिहार रही है, आज हिम्मत कैसे गिर जायगी। †

* * *

भारतेन्दु की पहली रचना

जब भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ५-६ वर्ष के थे उस समय इनके पिता ालचन्द्र जी "बलराम-कथामृत" की रचना कर रहे थे। इन्होंने पिता पास जा कर खेलते खेलते कहा 'हम भी कविता करेंगे।' उस समय ासुर का प्रसङ्ग लिखा जा रहा था। भारतेन्दु ने तुरन्त यह दोहा ा कर अपने पिता को दिखाया—

लै ब्योंढा ठाढे भये, श्री अनिरुद्ध सुजान।
बानासुर की सैन को, हनन लगे भगवान ॥

पिता ने प्रेम से गद्गद हो कर पुत्र को गले लगा लिया और ा—'बेटा! तू हमारे नाम को बढ़ावेगा।'

* * *

† गोसाईं हिम्मतगिरि का असली नाम अनूप-गिरि था। 'हिम्मत-ादुर' शाही खिताब था।

ठाकुर कवि की राष्ट्रीय भावना

प्रसिद्ध है कि हिम्मतबहादुर कभी अपनी सेना के साथ अंग्रेजों का कार्य-साधन करते और कभी लखनऊ के नवाब के पक्ष में लड़ते। एक बार हिम्मत-बहादुर ने राजा पारीछत के साथ कुछ धोखा करने के लिए उन्हें बाँदे बुलाया। राजा पारीछत वहाँ जा रहे थे कि मार्ग में ठाकुर कवि मिले और दो ऐसे संकेत भरे सवैये पढे कि राजा पारीछत लौट गए। उन सवैयों मे एक यह था—

कैसे सुचित्त भये निकसौ बिहँसौ बिलसौ हरि दै गलबाहीं।
ये छल छिद्रन की बतियाँ छलती छिन एक घरी पल माहीं॥
ठाकुर वै जुरि एक भई रचिहैं परपंच कछू ब्रज माहीं।
हाल चबाइन की दुहचाल को लाल तुम्हें है दिखात कि नाहीं॥

कहते हैं, यह हाल सुन कर हिम्मत-बहादुर ने ठाकुर को अपने दरबार में बुला भेजा। बुलाने का कारण समझ कर भी ठाकुर बराबर चले गए। जब हिम्मत-बहादुर इन पर झल्लाने लगे तो इन्होंने यह कवित्त पढ़ा—

वेई नर निर्नय निदान में सराहे जात,
सुखन अघात प्याला प्रेम को पिये रहैं।
हरि रस चन्दन चढ़ाय अंग अगन में,
नीति को तिलक बेंदी जस की दिये रहैं॥
ठाकुर कहत मंजु कंज ते मृदुल मन-
मोहनी सरूप धारे हिम्मत हिये रहैं।
भेट भये समये असमये अचाहे चाहे,
और लौं निबाहे आँखें एक सी किये रहैं॥

इस पर हिम्मत-बहादुर ने जब और कुछ कटुवचन कहे, तब कहा जाता है कि ठाकुर ने म्यान से तलवार खींच ली और कहा—

देव कवि शंकर बिहारी किस भाँति बनें,
दो हम दुपाये पर एक चारपाई है ॥

कहना न होगा कि मिश्रबंधुओं ने 'देव' की कविताओं के आगे 'बिहारी' की कविताएँ घटिया बताई हैं। शंकर जी ने इसकी कैसी मीठी चुटकी ली।

* * *

(२)

एक बार "शंकर" जी के किसी मित्र ने प्रयाग के कंबल मांगे। आप ने उत्तर दिया कि यहां कंबल ठीक नहीं मिलते। कुछ दिनों बाद आप ने कंबल मंगाने वाले अपने मित्र के पास निम्न लिखित दोहा लिख भेजा.—

शंकर गंगा से मिली, यमुना तर त्याग।
तो भी कंबल हीन है, [illegible] तीर्थ प्रयाग ॥

* * *

शंकर जी के पद्य का चमत्कार

शंकर जी की आँख खराब थी। उन्होंने इसकी डाक्टरी परीक्षा कराई। आँख की जाँच कर लेने पर डाक्टर साहब ने कहा—पंडित जी! आपकी एक आँख तो खराब ही हो गई है, यदि ठीक ठीक दवा न हुई तो दूसरी बहुत जल्द खराब हो सकती है। यह सुन कर आप बहुत हँसे और निम्नलिखित पद्य पढ़ा—

बूढ़े शंकर से कहती है, हाथ जोड़ कविता-बाला।
हो कर 'सूर' भजो 'केशव' को, ले कर 'तुलसी' की माला ॥

इस पद्य में शंकर जी ने सूर, तुलसी और केशव कवियों के नाम भी क्या चमत्कारपूर्ण रक्खे हैं।

* * *

बा० राधाकृष्णदास की प्रथम कविता

हिन्दी के स्वनामधन्य लेखक बा० राधाकृष्णदास थोड़ी उम्र में कविता करने लगे थे। कहते हैं, लल्लू नामक एक लड़का देवकुल लता-कूदता छत से नीचे आ गिरा। उसे रोते देख बालक राधाकृष्ण ने यह दोहा पढा—

लल्लू से मल्लू भये, मल्लू चढ़े अटारि।
अटा कूदि नीचे गिरे, रोवत हाथ पसारि॥

* * *

शंकर जी की मीठी चुटकी

(१)

कहते हैं एक बार "शंकर" कवि (पडित नाथूराम शंकर शर्मा) महाराज-छतरपूर के यहा गये। इनकी सादी वेषभूषा देख कर्मचारियों ने इन्हे एक साधारण अतिथि समझा और इनके अतिथि सत्कार में ढिलाई की। रात को पानी मिला हुआ दूध और बालूदार शक्कर मिली इतना ही नही बल्कि रोशनी का भी ठीक प्रबध न किया गया और इन के कमरे मे एक टिमटिमाता हुआ दिया रक्खा गया। आप कब चूकने वाले थे। मौका देखते रहे और समय पा कर, उस समय के दीवान प० श्यामविहारी जी मिश्र को आप ने लिखा—

छोटे कर्मचारियों की चूक बडी भूल नहीं,
चारो ओर रावरे प्रबन्ध की बड़ाई है।
मदिर बडे मे एक दीपक प्रकाश करे,
सारी रात श्यामता तिमिर ने दिखाई है॥
दूध जल-मिश्रित में बूरे की मिठास कहां,
तन्दुल नवीन खांड सादर की खाई है।

* उस समय इनकी आयु केवल १२ वर्ष की थी।

(३)

वृष्टि की आस अकास निहारत मास असाढ़ गयो सब बीती।
श्रावण हू के किते दिन गे बिन वारि चराचर को अति भीती॥
कृष्ण बिहारि जहि दै अनुशासन नीरमयी करि भूमि सप्रीती।
काशी कृपाल अकाल निवारहु गो-द्विज-पाल सदा यह रीती॥

(४)

भूमि तवा सी तपै दिन-रैनि दिशान दवा सी लगी चहुँ पासा।
वारि दवा सी चराचर चाहत गो सुरभी बिचरैं जलत्रासा॥
हे यदुनाथ, अनाथ के नाथ, सु-नाथ करौ महि विश्वनिवासा।
काशी रमेश कलेश निवारहु हे जगदीश तुम्हारिहि आसा॥

*　　*　　*

(२)

कविवर पंडित काशीदीन जी के सम्बन्ध में इसी प्रकार की एक और घटना प्रसिद्ध है। एक बार आपके पखौरे के ऊपर एक फोड़ा निकला। उस फोड़े से आपको बड़ा कष्ट मिला। जब आपको किसी प्रकार चैन न पड़ी तो आपने कुछ सवैये बना कर भक्तिपूर्वक पढ़े। उनके पाठ करने से आपको आराम पहुँचा और फोड़ा शनै. शनै. अच्छा हो गया। वे सवैये जिनके पाठ से आपका कष्ट निवारण हुआ यों हैं—

(१)

भाल विशाल मयंक प्रकाशित विम्ब प्रभा उदयाचल सी है।
एकल दन्त अनंत प्रभाव स्वभाव दयामय सिद्धि वशी है॥
विघ्नविदारण वारण-आनन बुद्धि प्रभाकर सी विकसी है।
काशी कलेश हरौ गणनाथ कृपा रस सिंधु सुकीर्त्ति लसी है॥

(२)

ग्राह के फन्द गयन्द फँसो हरि टेरत नाथ तुरन्त पधारो।
फारि फणानन नाग उबारि कियो निज दास गुनाह बिसारो॥

पंडित काशीदीन का भक्ति-भाव

(१)

पंडित काशीदीन सुकुल "काशी" (पुस्तक-रचयिता के प्रपितामह) एक भक्तकवि हैं। आपको कविता का अच्छा अभ्यास है। आप पर जब कभी कोई विपत्ति आई आपने अपने इष्टदेव के प्रति तत्सम्बन्धिनी कविता बना कर उसका निराकरण कर डाला। एक बार झूरा (अवर्षण) पडा। उस समय अपने तथा लोक के कल्याण के लिये आपने चार सवैये बनाये। कहा जाता है कि जहाँ आपने भक्ति पूर्वक अपनी कविता पढी, आकाश मे बादल का एक टुकडा दीख पडा। लोगों को आशा बँधी। कहना न होगा कि कुछ ही देर बाद आकाश मेघाच्छन्न हो गया और खूब जोरों का पानी बरसा।* वे चार सवैये जिनके पढ़ने से जलवृष्टि हुई थी, ये हैं—

(१)

नन्द के नन्दन कंस-निकन्दन भूतलभार विदारण-हारी।
श्रीवृषभानुसुतामनरञ्जन गंजन शोक अगाधु-बिहारी॥
गोकुल-पालक दानवघालक देवर्षि-बालक कुंजबिहारी।
काशी के नाथ सनाथ करौ जग-त्रास हरौ बरसावहु बारी॥

(२)

पंखविहीन मलीन यथा खग नीड परो जननी-मग हेरै।
ज्यों पशु बंधित पालक के कर मो तृण पाय अनंद घिरेरै॥
त्यों बिन बारि खभारि परी प्रभु राउर ओर सबै जग पेरै।
काशी गोविंद सदा प्रतिपाल करौ जलवृष्टि सुखी सब हेरै॥

---

* इस प्रकार का भक्ति-भाव प्राचीन आर्यों में भी देखा जाता है। वेद की ऋचाओं में इन्द्र आदि देवताओं की स्तुति इसका स्पष्ट प्रमाण है। आधुनिक समय में इसका तत्त्व लुप्त सा हो रहा है।

अर्थात्—ऐ पूरब के रहने वालो ! मुझको गरीब समझ कर मेरा क्या हाल पूछते हो ? सुनो, संसार में प्रसिद्ध, जो देहली था, जिसमें बड़े बड़े सेठ-साहूकार व रोजगारी रहते अल्लाताला ने लूट कर उजाड़ कर दिया है। हम उसी उज के रहने वाले हैं।

आप के काव्य की प्रशंसा तो सभी सुन चुके थे। नाम, तथा सादी वेषभूषा में आप की छिपी हुई प्रतिभ लोग दंग रह गए। जिन महाशय ने आप को बेवकूफ परिचय पूछा था वे बड़े लज्जित हुए और उन्होंने आ माफी माँगी।

६ ॐ

के लिये प्रसिद्ध ही हैं, उन्होंने एक बार इनकी भी खूब निन्दा की है। इसी पर चिढ़ कर 'बका' ने 'सौदा' पर भी दो चार शेर कहे थे। 'सौदा' और 'मीर' दोनों ही उस समय के प्रसिद्ध कवि थे। अतः 'सौदा' की खबर लेते समय बेचारे 'मीर' भी उसमें फँस गए। 'बका' साहब फ़रमाते हैं—

मीरो मिर्ज़ा की छेड़खानी ने,
बस कि आलम में धूम डाली है।
खोल दीवान दोनों साहब के,
ऐ बका हमने जो जयारत की॥
कुछ न पाया सिवाय इसके सखुन,
एक तू तू कहे है एक ही ही॥

* * *

'मीर' की वेषभूषा

सुना गया है कि जैसी चोखी और बढ़िया मीर साहब की शायरी होती थी उसके अनुकूल आप की वेषभूषा न थी।

एक बार लखनऊ के किसी मशायरे में आप सम्मिलित हुए। आप जैसे सीधे-सादे मनुष्य को वहां कौन पूछता! कुछ देर के बाद किसी शायर ने व्यंग के साथ आप से पूछा—'आप का दौलतखाना कहां है।' इसके उत्तर में आपने तुरन्त यह शेर बना कर पढ़ा—

क्या हाल मेरा पूछो हो पूरब के साकिनो,
मुझको गरीब जान के हँस हँस पुकार के।
दिल्ली जो इक शहर था आलम में इन्तख़ाब,
रहते थे मुन्तख़ब ही जहाँ रोज़गार के।
उसको फलक ने लूट कर वीरान कर दिया,
हम रहने वाले हैं उसी उजड़े दयार के।

मेरी तनख़्वाह कीजै माह ब माह।
ता न हो मुझको ज़िन्दगी दुश्वार ॥
ख़त्म करता हूँ अब दुआ पै कलाम।
शायरी से नहीं मुझे सरोकार ॥
तुम सलामत रहो हज़ार बरस।
हर बरस के हों दिन पचास हज़ार ॥

* * *

नसीम के दो अनूठे मिसरे

दिन 'आतिश' के यहाँ शागिर्दों का जमाव था। रिन्द, सबा, आदि बैठे हुए थे। नसीम भी थे। सवेरे का सुहावना सम ी बरस रहा था। तबीयतें उमड़ी आती थीं। शागिर्दों ने ते निवेदन किया कि उस्ताद इस समय एक गजल कह आतिश ने कहा—अच्छा मैं बोलता जाता हूँ, लिखते जाओ। एक गज़ल लिखाई जिसका मतला था—

दहन[1] पर हैं उनके गुमाँ[2] कैसे कैसे।
कलाम आते हैं दरमियाँ कैसे कैसे ॥

की तबीयत उमंग पर थी। इन्होंने उन शेरों को पचपदा भ कर दिया। जितनी देर मे आतिश एक शेर सोचते थे, दर म नसीम उनके पहले शेर पर तीन मिसरे लगा चुकते थ। मरे तो ऐसे अनूठे बन गये हैं कि कोई बरसों सोचता तो शायद कह पाता। नमूने के लिये दो पचपदे यहाँ दिये जाते हैं—

(१)

न ख़ूनी कफ़न हैं न घायल हुए हैं।
न ज़ख़्मी बदन हैं न बिसमिल हुए हैं ॥

---

१ दहन=मुँह। २ गुमाँ=शक़।

अर्थात्—मुझे अपना सच्चा हाल कह देना मंजूर है। सौ पुश्तो से मेरे बापदादो का पेशा सिपहगरी रहा है और शायरी मेरी इज्जत का जरिया नहीं है। मैं आजाद-राह चलने वाला हूँ और मेरा तरीका सब से मेलजोल रखने का है। मुझे कभी किसी से हर्गिज अदावत नहीं है।

ग़ालिब की पेंशन

गालिब की पेंशन राजद्रोह का अपराध लगा कर जब्त की गई थी। परन्तु अन्त मे वह फिर मिलने लगी थी। किन्तु मिल छठे महीने। इससे ये बहुत तग रहा करते थे। एक बार जब ग बहुत परेशान हुए तब इन्होने बादशाह (बहादुरशाह 'जफर' पास यह अर्जी लिख कर भेजी—

ऐ शहंशाह आस्माँ औरँग[1]।
ऐ जहांदार आफ़्ताब आसार[2]॥
था मैं एक बेनवाये-गोशानशीं[3]।
था मैं एक दर्दमन्द सीनाफ़िगार[4]॥
क्यों न दरकार हो मुझे पोशिश।
जिस्म रखता हूँ अगरचे तरार॥
कुछ खरीदा नहीं है अब की साल।
कुछ बनाया नहीं है अब की बार॥
आप का बन्दा और फिरूं नंगा।
आप का नौकर और खाऊं उधार॥

१ औरँग=तख्त।

२ आसार=निशान

३ बेनवाये गोशानशीं=एक कोने में पड़ा रहने वाला फ़कीर।

४ सीनाफिगार=जिसका सीना जख़्मी हो गया हो।

दाग़ का दरबार-प्रवेश

नवाब मिर्ज़ाखाँ 'दाग़' उर्दू साहित्य के बड़े प्रतिभाशाली तथा विख्यात कवि हो चुके हैं। इनकी सभाचातुरी देखकर तत्कालीन बादशाह अकबरशाह ने इन्हें अपना सभासद चुन लिया। बादशाह की सभा में दाग ने जो सबसे पहली गजल सुनाई थी वह यों है—

निकाल अब तीर सीने से कि जाने पुर अलम निकले।
जो यह निकले तो दिल निकले जो दिल निकले तो दम निकले॥

× × ×

समझ कर रहनदिल तुमको दिया था हमने दिल अपना।
मगर तुम तो बला निकले गज़ब निकले सितम निकले॥
गये हैं रंजो गम ऐ दाग बादे मर्ग[1] साथ अपने।
अगर निकले तो यह अपने रफ़ीक़ाने-अदम[2] निकले॥

'दाग़' को इस गजल की प्रत्येक शेर पर खूब दाद मिली। गजल [समा]प्त होने पर बादशाह ने मुग्ध हो कर कहा कि क्या अच्छी तबीयत [पा]ई है।

⁂ ⁂ ⁂

विश्व-कल्याण और रूपोपासना

उर्दू के प्रसिद्ध कवि जिगर साहब को किसी ने उपदेश दिया कि [इ]स सांसारिक प्रेम में क्या रक्खा है। विश्वकल्याण का प्रयत्न करो। [जि]गर साहब ने निम्नलिखित शेर उनके सामने पेश की :—

करना है आज हज़रते नासह से सामना।
मिल जाय दो घड़ी को तुम्हारी नजर मुझे॥

---

१ मर्ग=मौत। २ रफ़ीक़ाने-अदम=मरने के बाद साथी होनेवाले।

लहू मल के कुश्तो में दाख़िल हुए हैं।
तुम्हारे शहीदों में शामिल हुए हैं॥
गुलो लाल ओ अरगवाँ कैसे कैसे?

(२)

कोई जानता है किसी को ख़बर है।
कि परदे में कौन ऐ सनम जलवागर है॥
कहीं कुछ ख़याल ओ कहीं कुछ नज़र है।
दिलो दीदए अहले-आलम में घर है॥
तुम्हारे लिये हैं मकाँ कैसे कैसे? *

इनमें से पहले के चार चरण तो हैं नसीम के और पाँचवाँ आतिश का। आतिश की यह गजल पन्द्रह-सोलह शेरों की है और नसीम ने सब पर मिसरे लगा दिये हैं।

* * *

---

* (१) माशूक की ओर इशारा करके 'नसीम' और 'आतिश' फरमाते हैं कि गुलाब, पोस्ता और अरगवाँ के फूल लाल होने के कारण तुम्हारे शहीदों में शामिल होने का दम भरते हैं, परन्तु सच तो यह है कि न उनका कफन खूनी है, न वे घायल ही हुए हैं बल्कि लहू बदन में मल कर शहीदों में आ मिले हैं और उनका सा गौरव स्वयं भी प्राप्त करना चाहते हैं।

(२) ऐ माशूक! क्या कोई जानता है कि पर्दे में कौन अपनी रौनक दिखा रहा है। तुम्हारे बारे में कहीं लोग कुछ ख्याल कर रहे हैं, कहीं कुछ देख रहे हैं। दुनिया के लोगों के दिल में तुम्हारा घर है, आँखों से वे तुम्हें देखते हैं—इनमें भीतर और बाहर तुम्हीं बसे हो। देखो तुम्हारे लिये लोगों ने कैसे कैसे मकान तैयार किये हैं।

अकबर ने कई चिट्ठियां लिखीं कि बेटा! अब आ जाओ। परन्तु जब वे घर न लौटे तो अकबर ने उन्हें निम्नलिखित नज्म लिख भेजी.—

लंदन को छोड लडके अब हिन्द की खबर ले।
बनती रहेंगी बातें आबाद घर तो कर ले॥
राह अपनी अब बदल दे बस पास करके चल दे।
अपने वतन का रुख कर औ रुखसते सफर ले॥
इगलिश की करके कापी दुनिया की राह नापी।
दीनी तरीक़ में भी अपने कदम को धर ले॥
वापस नहीं जो आता क्या मुतजिर है इसका।
माँ खस्ता हाल हो ले बेचारा बाप मर ले।
मगरिब के मुरशिदों से तू पढ चुका बहुत कुछ।
पीराने।अशरिकी से अब फैज की नजर ले॥
मैं भी हूं एक सखुनवर आ सुन कलामे अकबर।
उन मोतियों से आकर दामन को अपने भर ले॥

खेद है कि इशरतहुसेन पर इसका कोई असर न हुआ। होता से! 'अकबर' के शब्दों में वे—"खाके लंदन की हवा अहदे वफा ल गये" थे। इस बार अकबर ने जो पत्र लिखा उसमें उन्होंने अपने डके को बहुत शरमिंदा किया। उसकी कुछ पंक्तियां थीं—

इशरती घर की मुहब्बत का मज़ा भूल गये।
खा के लंदन की हवा अहदे वफा भूल गये॥
पहुँचे होटल में तो फिर ईद की परवा न रही।
केक को चख के सेवइयों का मजा भूल गये॥
भूले माँ बाप को अग़यार के चरचों में वहाँ।
साथ में कुफ़्र पढा नूरे खुदा भूल गये॥
मोम की पुतलियों पर ऐसी तबीयत पिघली।
चमने हिंद की परियों की अदा भूल गये॥

अर्थात्—मुझे हजरत नासह से सामना करना है यदि दो घड़ी के लिये झुक झुक कर शराब की भाँति मादकता दिखलानेवाले ये नेत्र मुझे मिल जाएँ तो मैं उनकी सारी उपदेशकी मिट्टी मे मिला दूँ। उपदेशक न आँखो का असर देख कर मदहोश हो जाय और फिर मेरी ही तरह [illegible] का राग अलापते फिरे।

कहना न होगा कि जिगर साहब से यह उत्तर पा कर वह व्यक्ति अपना सा मुँह ले कर रह गया।

* * *

शोला और डिप्टी साहब

मुंशी बनवारीलाल 'शोला' (अलीगढ के प्रसिद्ध उर्दू शायर) आत्मसम्मान के बड़े पक्षपाती थे और खुशामद से तो उन्हे स्वाभाविक घृणा थी। एक बार किसी डिप्टी कलेक्टर के रिशवत लेने और खुशा[मद]पसन्द होने की बड़ी चर्चा थी। घण्टाघर के उद्घाटन के समय प्रान्तीय लाट साहब उपस्थित थे और उनके सामने ही उक्त डिप्टी साहब बैठे थे। शोला साहब ने अपनी पूर्वोक्त कविता में उपस्थित हस्त[ियों का] भी उल्लेख किया और उसी प्रसग मे यह मिसरा पढ़ा—

> खुशामद से नहीं रुकता, यह रिशवत से नहीं रुकता।

कहते हैं, कविता पढ़ते वक्त आपके हाथ और मुँह उन्हीं डिप्टी सा[हब] की ओर बड़े सङ्कल्प से थे।

* * *

महाकवि अकबर और उनके पुत्र

"अकबर" इलाहाबादी (सैयद अहमदहुसेन रिजवी) ने फारसी और उर्दू साहित्य में बड़ा नाम पैदा कर लिया। आप सेशन [जज] थे। आपने अपने साहबजादे—इशरतहुसेन को लंदन पढ़ने भेजा। सुना गया है कि वहाँ की पढ़ाई समाप्त हो जाने पर भी वे न लौटे। [illegible]

शाइरे अशआर मुहमिल[1] उर्फ़ नाथूराम।
शेख़सादी भी न समझे जिस सख़ुनवर का कलाम ॥

* * *

महाकवि पोप की छन्दप्रियता

पोप (एक प्रसिद्ध अंग्रेज कवि) को कविता करने का शौक़ हुआ। उनके पिता न जाने क्यों छन्द-रचना को अच्छा न समझते थे। उन्होंने बेटे को कई बार मना किया कि पद्य-रचना मत करो। पोप की कविता-लालसा तो बढ़ गई थी अतः उन्होंने पिता की एक न सुनी। अन्त में पोप के पिता उन पर बहुत बिगड़े। पिता जी को नाखुश जान आपने निम्नलिखित कविता बना कर कहा—

Papa ! Papa ! mercy take,
No more verses shall I make

अर्थात्—हे पिता जी ! मुझ पर दया कीजिये। अब भविष्य में मैं छन्दरचना न करूँगा।

कहना न होगा कि पोप को साधारण बातचीत भी कविता में ही करते देख कविता से उनकी प्रवृत्ति हटाना 'मर्जलाइलाज' समझ कर उनके पिता चुप हो गये।

---

[1] मुहमिल = जिसका कुछ मतलब न हो, बेमानी।

देख अब्दुलग़फूर ख़ाँ की तरफ़,
मर्द ख़ुशहाल इसको कहते हैं।
चार अब्रू का याँ सफाया है,
फारिग़ उल् बाल इसको कहते हैं॥

सारा मजा 'फारिग उल् बाल' शब्द मे है। इसके दो माने हैं— बेफिक्र और बाल-रहित।

* * *

शंकर जी का निरर्थक शेर

उन दिनों हरदुआगज (प० नाथूराम शकर शर्मा के गाँव) उर्दू कविता के मुशायरों की धूम थी। शकर जी ऐसे सम्मेलनों में अक्स पहुँचते थे। आप यद्यपि शायरी अच्छी करते थे, परतु छोटी उम्र के कारण आप पर लोग कम रुजू होते थे। एक दिन शकर जी के मे आई कि ये लोग अपने को बहुत लगाते हैं आज इनकी अक़्ल दुर कर देना है। यह सोच आप केवल शब्दाडम्बर की एक कविता गढ सुनाने लगे.—

"ज़मन गबीरो शक़ोफा कल्जुल,
इधर हमारे उधर तुम्हारे।
सुल्फे तक़ीज़ा ग्विज़रे वतनुल,
इधर हमारे उधर तुम्हारे॥"

इसे सुन कर सारे लोग चक्कर मे पड़ गये और कोई भी इस शेर मतलब न समझ सका। सब यही कहते थे कि यह कविता गलत जान पड़ती, परन्तु इसका मतलब क्यों नहीं साफ हो रहा है। तब एक मौलवी साहब ने (जो शकर जी के उस्ताद थे) इनसे इस शेर के रचयिता का नाम पूछा। आप ने तुरन्त ही हँसते हुए उत्तर दिया

अन्तिम आलोक

(कवियों के देहावसान-काल की उक्तियाँ)

(

देख अब्दुलगः
मर्द खुशहाल
चार अब्रू व
फारिग उल्

सारा मजा 'फारिग उल्'
बेफिक्र और बाल-रहित।

*

शंकर

उन दिनों हरदुआग
उर्दू कविता के मुशायरों क
पहुँचते थे। आप यद्यपि
के कारण आप पर लोग
मे आई कि ये लोग अपन
कर देना है। यह सोच
सुनाने लगे.—

"जमन गर्द

तुल्फे तर

इसे सुन कर सा
मतलब न समझ सु
जान पड़ती, परन्तु
एक मौलवी साहब
है स्वामिना स ना

(१)

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक भारतवर्ष के एक प्रधान नेता थे। आप की सनातनधर्म में बड़ी आस्था थी। कहा जाता है कि अन्त समय लोकमान्य ने भगवान् की चिरप्रतिज्ञा और आश्वासन को दोहराते हुए गीता के निम्नलिखित श्लोक पढ़े थे—

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥

अर्थात—हे पार्थ! घटता धर्म, बढ़ता पाप ही जग में यदा।
तब धर्म के रक्षार्थ मैं अवतार लेता हूँ सदा ॥
कर साधुओं की प्राणरक्षा, पापियों को मार कर।
उत्थान करता धर्म का युग युग सदा अवतार धर ॥

इसके बाद आपने भगवान् कृष्ण की तस्वीर को प्रणाम किया और आँखे मूँद ली।

* * *

(२)

भक्तवर कृष्णदास जी अपने समय के एक उदीयमान कवि हो गये हैं। आप की कविता से भगवत्प्रेम टपका पड़ता है। कहते हैं इसी अंतिम पद को गा कर आपने अपना शरीर छोड़ा था—

मो मन गिरिधर छबि पै अटक्यो।
ललित त्रिभंग चाल पै चलि कै,
चिबुक चारु गडि ठटक्यो।

(५)

पृथ्वीराज बड़े रसज्ञ कवि थे। उनकी पहली रानी लालादे भी कविता करती थीं। दुर्भाग्य से लालादे का भरी जवानी में स्वर्गवास हो गया। जब रानी साहबा की देह चिता पर रख कर जलाई गई तो पृथ्वीराज ने कहा था—

तो रांध्यो नहि खावस्याँ, रे वासदे निसड्ड।
मो देखत तू बालिया लाल रहदा हड्ड॥

अर्थात्—ऐ आग ! मैं तेरा राँधा हुआ कोई पदार्थ नहीं खाऊंगा। तूने मेरे देखते ही लालादे को जला कर उसका हाड शेष रक्खा।

कहते हैं, उस दिन से वे आग में पकी हुई कोई चीज नहीं खाते थे।

(६)

रूपवती बेगम मालवा के नवाब बाजबहादुर की रानी थीं। ये कविता भी करती थीं। इनकी सुन्दरता पर मुग्ध हो कर बादशाह अकबर ने मालवा पर चढ़ाई कर दी और उसे खूब लूटा पाटा। अपने उद्देश्य के अनुसार वह बेगम साहबा को अपने यहाँ ले आया। और उनसे शादी करने का प्रस्ताव किया। रूपवती जैसी पतिव्रता स्त्री यह कैसे मान सकती थीं। फलतः उन्होंने बादशाह को बहुत समझाया। जब कामी बादशाह से अपना पिंड छुड़ाना मुश्किल समझा तो रूपवती ने आत्महत्या कर ली।

मरने के बाद जब बेगम साहबा का कमरा खोला गया तब वहाँ एक कागज मिला जो रूपवती की अन्तिम कविता थी। बेगम साहबा ने उसमें लिखा था—

रूपवती दुखिया भई बिना बहादुर बाज।
सो अब जियरा तजत है यहाँ नहीं कछु काज॥

* * *

सजल श्यामघन-बरन लीन है,
फिरि चित अनत न भटक्यो।
कृष्णदास किये प्रान निछावर,
यह तन जग सिर पटक्यो।

* * *

(३)

काशी में टोडरमल नाम के एक ज़मीन्दार थे। गोस्वामी तुलसीदास जी से उनका बड़ा स्नेह था। उनके मरने पर गोस्वामी जी ने उनकी स्मृति में निम्नलिखित दोहे बनाये—

महतो चारो गाँव को मन को बड़ो महीप।
तुलसी या कलिकाल में अथये टोडरदीप॥
तुलसी उर थाला विमल टोडर गुन गन बाग।
ये दोउ नयनन सींचिहौं समुझि समुझि अनुराग॥
राम धाम टोडर गये, तुलसी भये असोच।
जियबो मीत पुनीत बिनु, यही जानि संकोच॥

* * *

(४)

गोस्वामी तुलसीदास जी काशी में बहुत दिनों तक रहे और वहीं उन्होंने अपना शरीर छोड़ा उन्होंने मरने के पहले यह दोहा बनाया—

राम नाम जस बरनि कै, भयो चहत अब मौन।
तुलसी के मुख दीजिये अबहीं तुलसी सोन॥

उनकी मृत्यु के बाद भक्तों ने निम्नलिखित दोहा रचा—

संवत सोरह सै असी असी गंग के तीर।
सावन सुक्ला सत्तमी तुलसी तज्यो सरीर॥

* * *

(६)

महाकवि सुन्दरदास ने सम्वत् १७४६ मे जयपुर के पास सॉगा-नेर स्थान पर अपना शरीर छोड़ा। शरीरान्त का समय निकट आया जान महाकवि ने निम्नलिखित दोहे पढ़े—

वैद्य हमारे राम जी, औषधि है हरिनाम।
'सुन्दर' यहै उपाय अब, सुमिरण आठौं याम॥
सात बरस सौ मे घटे इतने दिन की देह।
सुन्दर आतम अमर है देह खेह की खेह॥

* * *

(१०)

जयपुर मे जिस स्थान पर सुन्दरदास जी की दाहक्रिया की गई हॉ पर उनके स्मारक स्वरूप निम्नलिखित चौपाइयॉ लिख दी गई है—

सम्वत सत्रह सै छीयाला, कात्तिक सुदि अष्टमी उजाला।
तीजे पहर वृहस्पतिवार, सुन्दर मिलिगा सुन्दर सार॥

* * *

(११)

कहते हैं, कबीर साहब ने जब यह जाना कि काशी मे मरने से मनुष्य का मोक्ष हो जाता है और मगहर मे शरीर छोड़ने से वह नरक को जाता है तो वे काशी से उठकर मगहर चले गए। चलते समय आप ने यह दोहार्द्ध पढा—

जो कबिरा काशी मरै, रामहिं कौन निहोर।

अर्थात्—अगर मै पवित्र भूमि काशी मे मरूॅ तब तो मेरी मुक्ति यो ही हो जायगी। इस में रामचन्द्र जी का क्या निहोरा है। मैं मगहर मे जाकर मरता हूॅ। देखू रामचन्द्र मुझे कैसे सद्गति देते हैं।

* * *

(७)

घनानन्द सरस और शुद्ध व्रजभाषा लिखने में बड़े दक्ष थे। कहते हैं, सम्वत् १७९६ में नादिरशाही सेना लूटपाट करते मथुरा पहुँची। उद्दण्ड सैनिकों ने निरपराध घनानन्द का एक हाथ काट लिया। हाथ कट जाने पर अपना समय निकट समझ खून से कवि जी ने यह कवित्त लिखा—

बहुत दिनान की अवधि आस-पास परे,
खरे अरबरनि भरे हैं उठि जान को।
कहि कहि आवत छबीले मनभावन को,
गहि गहि राखति ही दै दै सनमान को॥
झूठी बतियानि की पत्यानि ते उदास ह्वै कै,
अब ना घिरत घन आनँद निदान को।
अधर लगे हैं आनि करिकै पयान प्रान,
चाहत चलन ये सँदेसो* लै सुजान को॥

* * *

(८)

अन्त समय भक्तवर सूरदास ने राधाकृष्ण का एक भजन गाता था। ज्यों ज्यों वे गाते जाते थे त्यों ही त्यों अपने उपास्य देव के प्रेम में गद्‌गद होते जाते थे। यहाँ तक कि उनकी आँखों में प्रेमाश्रु आ गये और वे सदा के लिये मुँद गईं। वह भजन जिसे गाकर उन्होंने अपना प्राण छोड़ा था यों है—

खंजन नैन रूपरस माते।
अतिसै चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते।
चलि चलि जात निकट स्रवनन के उलटि उलटि ताटंक फँदाते।
सूरदास अंजन गुन अटके नातरु अब उड़ि जाते॥

* * *

सब को सब कुछ दीन, दुःख न काहू को दियो।
सो मरि हमको दीन, भली निबाही बीरबल॥

* * *

(१४)

गग बादशाह अकबर के दरबारी कवि थे। ऐसा कहा जाता है कि किसी नवाब या राजा की आज्ञा से ये हाथी से चिरवा डाले गये और उसी समय—मरने से पहले उन्होंने यह दोहा पढा था—

कबहुँ न भँडुवा रन चढे, कबहुँ न बाजी बब।
सकल सभाहि प्रनाम करि, बिदा होत कवि गंग॥

* * *

(१५)

कहा जाता है कि भारतेन्दु बा० हरिश्चन्द्र ने मरने के समय निम्न-लिखित पद गाया था—

डंका कूच का बज रहा मुसाफिर जागो रे भाई।
देखो लाद चले सब पन्थी तुम क्यों रहे भुलाई॥
जब चलना ही निहचल है तो ले किन माल लदाई।
हरीचन्द हरिपद बिनु नहि तो रहि जैहो मुँह बाई॥

* * *

(१६)

कौन ऐसा है जिसने लोकमान्य बाल गगाधर तिलक की मृत्यु पर दो चार बूद आँसू न टपकाये हों। तत्कालीन सामयिक पत्र-पत्रिकाओं द्वारा कवि लोग तिलक जी की मृत्यु के बाद अर्से तक उनकी स्मृति मे कुछ न कुछ लिखते रहे। अलीगढ़ के प्रसिद्ध कवि पडित नाथूराम शकर शर्मा "शकर" ने भी अपने शोकोद्गार इन शब्दो मे प्रकट किये थे—

(१२)

पंडित हरीराम व्यास की रचना आदि से अन्त तक कृष्णभक्ति में ओतप्रोत होती थी। इनका गोस्वामी जी से बड़ा प्रेम था। इनके मरने पर गोस्वामी जी ने इस प्रकार अपना शोक प्रकट किया था—

हुतो रस रसिकन को आधार।
बिनु हरिबंसहि सरस रीति को, चलिहै कापै भार।
को राधा दुलरावै गावै, बचन सुनावै चार।
वृन्दावन की सहज माधुरी, कहिहै कौन उदार।
पदरचना अब कापै ह्वैहै, निरस भयो संसार।
बड़ो अभाग अनन्यसभा को उठिगो ठाट-सिंगार।
जिन बिन दिन छिन सम बीतत सहज रूप आगार।
व्यास एक कुल-कुमुद-चन्द बिनु उडुगन जूठी थार॥

* * *

(१३)

सम्राट अकबर ने घोषणा की थी कि जो कोई बीरबल के अनिष्ट की बात कहेगा उसे दण्ड मिलेगा। दैवगति से बीरबल यूसुफजाइयों के युद्ध में मारे गये। सारा दरबार चिन्तित था कि यह समाचार अकबर तक कैसे पहुँचाया जाय। सौभाग्य से केशवदास उस समय वहाँ थे। दरबारियों के प्रार्थना करने पर उन्होंने बादशाह तक बीरबल की मृत्यु की खबर पहुँचा देना स्वीकार कर लिया। तदनुसार दूसरे दिन सम्राट के सामने उन्होंने यह दोहा पढ़ा—

याचक सब भूपति भये, रह्यो न कोऊ लेन।
इन्द्रहु को इच्छा भई, गयो बीरबर देन॥

यह सुनकर अकबर बोल उठे—हाय! क्या बीरबल मारे गये? कवीन्द्र केशव ने कहा—'हाँ जहाँपनाह!' इसे सुन शोकाकुल होकर अकबर ने यह सोरठा पढ़ा—

छप्पन के सावन मे ले गई कलेजा काढ़,
लाली छै बरस की टरी न पीर बाँकी है ॥

* * *

(१६)

श्रीमती तोरनदेवी शुक्ल 'लली' का स्थान स्त्री कवियो में बडा ऊँचा है। पिछले वर्ष मई मास मे लली जी की पूजनीया माता का स्वर्गवास हो गया, जिससे लली जी को बडा ही दुःख हुआ। आपने अपनी माता जी की स्मृति मे 'मेरी अम्मो' शीर्षक एक सुंदर कविता लिखी है। उस कविता को वे प्राय. पढा करती हैं। उस कविता का कुछ अंश यहाँ दिया जाता है—

एक बार ही मेरी अम्माँ क्षण भर को तुम आ जाती।
अपनी इस अधीर मणियाँ को कुछ तो धैर्य बँधा जाती॥
मरने में क्या सुख था तुमको केवल यही बता जाती।
जीवन-मरण अमिट है जग मे इतना ही समझा जाती॥
पत्र तुम्हारा लिखना—बेटी! मैं अस्वस्थ हूँ आ जाओ।
मैं न गई, भूलूँ अब कैसे, अम्माँ तुम समझा जाओ॥
मुझे बुलाओगी अब कब तक, मेरी माँ बतला जाओ।
रोते रोते ही आकुल हूँ प्यार करो बहला जाओ॥

* * *

(२०)

श्रीमती रामेश्वरी देवी 'चकोरी' पंडित उमाचरण मिश्र की पुत्री। मिश्र जी कविता से विशेष प्रेम रखते थे। वही गुण उनकी कन्या विकसित हुआ। चकोरी जी की कविता ऐसी सुन्दर होती थी कि साहित्य ने सामयिक पत्रपत्रिकाओं मे स्थान देकर उसे आदर ।

इधर प्राय. एक वर्ष से चकोरी जी रुग्ण थी। आप को अपने अन्त अनुभव सा हो गया था कि—अब मैं न बच सकूँगी। पिछले

बल्कि बिगाड़ा पृथ्वीराज ने प्रभुत्व त्याग,
स्रोत फिर 'शंकर' सुधार का बहा नहीं।
पापी जयचंद की कुचाल का कुयोग पाय,
संकट सहे था पर इतना सहा नहीं।
पूरे परतन्त्र को स्वराज्यदान देगा कौन,
गोरों ने दया का अधिकारी भी कहा नहीं।
मुकुट-विहीन जिसे देखते हैं हाय उस—
भारत के भाल पै 'तिलक' भी रहा नहीं।

* * *

(१७)

कहते हैं, पंडित नाथूराम शंकर शर्मा ने अपनी पैंसठवीं वर्षगाँठ पर निम्नलिखित दोहा बनाया था—

खेल चुका है आज लौं शंकर चौंसठ फाग।
पैंसठवीं होली बने भभक चिता की आग॥

कहना न पड़ेगा कि उसी वर्ष के भीतर उनका शरीरपात हुआ और उनके ही शब्दों में होली उनके लिये चिता की आग हो गई।

* * *

(१८)

एक बच्चे की मृत्यु पर "शंकर" जी की उक्ति सुनिये—

तीन बड़े भाई छोटी भगिनी बिसारी एक,
मारी जिन माँ के उर-दाहन में टाँकी है।
रोवैं राधावल्लभ निहारैं वृद्धा नानी हाय,
शंकर पिता को दई प्राणहीन झाँकी है॥
छोटी सरिता के तीर गोद में पसार पाय,
ओढ़ जल-चादर दुलारी [illegible] टाँकी है।

(२१)

जहाँनारा सम्राट शाहजहाँ की पुत्री थी। वह कवि भी थी। मरते समय उसने वसीयत की थी कि मेरी कब्र को यों ही खुला छोड़ दिया जाय—उसे ऊपर से पाटा न जाय, अर्थात् उस पर कोई इमारत न बनाई जाय। यह भी कहा जाता है कि जहाँनारा ने मरने के पहले निम्नलिखित शेर बना कर आदेश कर दिया कि उसकी कब्र पर कोई इमारत न बनाई जाय—

बगैर सब्ज़ा न पोशद् कसे माज़रे-मरा।
कि क़ब्र पोशे गरीबां हमी गया हवसू अस्त॥

अर्थात्—मेरी समाधि पर हरी घास के सिवा और कोई चीज न रहे, क्योंकि मेरे समान गरीब की कब्र पर सिर्फ हरी घास ही काफी है[1]।

जहाँनारा की अभिलाषा के अनुसार उसकी कब्र (जो दिल्ली मे निजामुद्दीन औलिया के दरगाह मे है) ऊपर से खुली है और उस पर सदा घास उगी रहती है।

* * *

(२२)

'मजहर' ने मरने का समय निकट जान कर यह शेर पढ़ा था—

लोग कहते है मर गया 'मज़हर'।
फ़िल[2] हकीक़त में घर गया मज़हर॥

* * *

---

१ जहाँनारा की क़ब्र पर अंकित फारसी कविता का किसी अँगरेज कवि ने क्या ही सुन्दर अनुवाद किया है—

"Save the green herb, place naught above my head,
Such pall alone befits the lowly dead,
The fleeting poor Jehanarah lies here
Her sire was Shah Jahan and Chist her Pir.
My God the Ghazi monarch's proof make clear."

२ फ़िल हकीकत = सचमुच

बसन्तपंचमी को आपकी अन्तिम रचना, जो उस समय 'वर्त्तमान' में मुद्रित हुई थी, नीचे दी जाती है—

जहाँ क्षितिज के साथ बँधा है वसुन्धरा का अंचल,
जिसका छोर न छू पाती है अखिल विश्व की हलचल।
वहाँ नहीं तारक प्रदीप ले शशि चुपके से आता,
स्वप्न-सदन से प्रेयसि रजनी को हँस कर न जगाता॥
वहीं उषा का शिशु प्रकाश नित भरता है किलकारी,
वहीं अरुण की राशि-राशि से सजती सृष्टि कुमारी।
जहाँ नहीं स्वाती की तृष्णा चातक को कलपाती,
जहाँ नहीं प्रेमी चकोर को प्रिय की याद रुलाती॥

जहाँ न माता की गोदी का मिलता मृदुल बिछौना,
जहाँ स्नेहसरिक्त सुखद जीवन का कोना-कोना।
जहाँ न प्रीतम के हाथों से प्रणय-सुरा है ढलता,
जहाँ न तृष्णा की बिछलन पर उर की आस बिछलती है,
जहाँ न दुख आनन्द आदि की रहती क्षण भर माया,
झाँक रही है उसी लोक से मुझे मृत्यु की छाया।
अरे मृत्यु कितनी भीषण—कैसा यह लोक अँधेरा,
कौन जोड़ने चला उसी में जीवन-नाता मेरा॥

उसके रक्त-शून्य कर धीरे धीरे बढ़ते आते,
मिट जायेंगे कभी कभी जीवन के क्षण मदमाते।
पहन दे कोई अभी न लाये वह अपनी जयमाला,
अभी लगाया है अधरों में कवितामृत का प्याला॥
शीतल अंधकार में आँखें मुँदती जातीं मेरी,
सुन पड़ती है बहुत निकट ही मुझे मृत्यु की भेरी॥

* * *

कहते हैं आज ज़ौक जहां से गुज़र गया।
क्या ख़ूब आदमी था ख़ुदा मग़फरत[1] करे॥

* * *

(२६)

'ग़ालिब' पद्य तो अच्छा लिखते ही थे, गद्य भी उनका गजब का होता था। सुनते हैं, वृद्धावस्था मे वे बहरे हो गये थे। मरने से कुछ दिन पहले उन्होंने यह शेर कहा था—

दमे वापसी, बरसरे राह है।
अज़ीज़ो अब अल्लाह ही अल्लाह है॥

अर्थात्—ऐ प्यारो! अब मुझे अल्लाह ही अल्लाह है क्योंकि उलटी साँस चल रही है और मैं मृत्यु के रास्ते पर हूँ।

* * *

(२७)

दयाशकर 'नसीम' उर्दू एव फारसी के ख्यातनामा हिंदू कवि हो गये हैं। आपने मरने से दो ही तीन घटे पहले यह शेर कहा था—

पहुँची न राहत हम से किसी को।
बल्कि अज़ीयत कोश हुए॥
जान पडी तब बारे शिकम थे।
मर के वबाले दोश हुए॥

हमसे किसी का भला न हुआ बल्कि हमी दूसरो के बोझ हुए। जब जान पडी—गर्भ में आये—तब माँ के पेट का बोझ बने और मर कर दोस्तों के कधो का बोझ बनेगे—हमारा जनाजा निकलेगा।

* * *

---

1 मग़फ़रत करे=बख्शे, स्वर्ग दे।

(२३)

'ताबाँ' बड़े अच्छे शायर थे। खेद है कि इनका देहान्त युवावस्था में ही हो गया। 'मीर' तकी इनके दिली दोस्तों में थे। इनकी मृत्यु पर मीर ने निम्नलिखित मरसिया* बना कर अपनी मनोव्यथा कम की।

दाग है ताबां अलेहुर्रहमतः का छाती प 'मीर'।
हो नज़ात उसका विचारा हम से भी था आशना॥

अर्थात्—'मीर' की छाती पर स्वर्गीय (ताबाँ) का चमकने वाला दाग पड़ गया है। वह बख्शा जाय—उसे स्वर्ग मिले। बेचारा हम से बड़ा प्रेम रखता था।

* * *

(२४)

'मजमून' उर्दू शायरी के मशहूर कवि हो गये हैं। आप के मर जाने पर आप के समकालीन मिर्जा रफी 'सौदा' ने यह गजल कही थी—

लिये मय उठ गया साक़ी मेरा भी पुर हो† पैमाना।
इलाही किस तरह देखूं मैं इन आंखों से मैख़ाना॥
विनायें उठ गईं यारों गज़ल के खूब कहने की।
गया 'मज़मून' दुनियाँ से रहा सौदा जो मस्ताना॥

* * *

(२५)

'ज़ौक़' उर्दू और फारसी के प्रसिद्ध कवि थे। उन्होंने मरने से तीन घंटे पहले यह शेर कहा था—

---

* उर्दू शायरी में दुःखपूर्ण कविता को मरसिया कहते हैं। ऐसी कवितायें प्रायः किसी की मृत्यु हो जाने पर उसके विषय में बनाई जाती हैं।

† पुर हो = भर जाय, पूरा हो जाय।

लाख मजमून और उसका एक ठठोल ।
सौ तकल्लुफ़ और उसकी सीधी बात ॥
एक रोशन दिमाग का न रहा ।
शहर में इक चिराग था न रहा ॥
नकदे-[1] मानी का गंजदाँ[2] न रहा ।
ख़्वाने-[3] मज़मूँ का मेजबाँ[4] न रहा ॥
कोई वैसा नज़र नहीं आता ।
वह ज़मीं और वह आसमाँ न रहा ॥
साथ उसके गई बहारे सख़ुन ।
अब कुछ अंदेश-ए ख़िज़ाँ[5] न रहा ॥
क्या है जिसमें वह मर्दे[6] कार न था ।
इक ज़माना कि साज़[7] गार न था ॥
शाइरी का किया हक़ उसने अदा ।
पर कोई उसका हक़-गुजार न था ॥
ख़ाकसारों से ख़ाक़सारी थी ।
सर बुलन्दों से इन्किसार[8] न था ॥
वे रियाई[9] थी ज़ुहद[10] के बदले ।
ज़ुहद उसका अगर शआर[11] न था ॥
ऐसे पैदा कहां है मस्तो[12] ख़राब ।
हमने माना कि होशियार न था ॥

---

१ नकदे मानी का = ख़यालात रूपी रुपयों का । २ गंजदाँ = ख़ज़ाञ्ची । ३ ख़्वानै मज़मूँ = मज़मून रूपी ख़्वानों । ४ मेजवाँ = मेज़वाला । ५ ख़िज़ाँ ... ...स करने वाला । ७ साज़गार = ... । ९ वेरियाई = मक्र करना, ... शआर = आदत । १२ मस्तो ... आदर ...

(२८)

सबा और नसीम दोनों आतिश के शागिर्द थे। 'नसीम' के मरने पर दुःखी हो कर इनके मित्र और समकालीन प्रसिद्ध कवि 'सबा' ने एक शेर कहा था। वह शेर है—

उठ गये हैं नसीम जिस दिन से।
ऐ सबा! वह हवाए बाग नहीं॥

* * *

(२९)

अल्ताफ हुसेन 'हाली' ने मरने से पहले यह शेर लिख रक्खी थी—

मरने पै मेरे वह रोज़ो[1] शब रोयेंगे।
जब याद करेंगे मुझे तब रोयेंगे॥
उल्फ़त[2] पै वफ़ा पै जाँनिसारी पै मेरी।
आगे नहीं रोये थे तो अब रोयेंगे॥

सचमुच मौलाना 'हाली' के बिना उर्दू साहित्य सूना और उजाड़ हो गया। सच तो यह है कि उक्त कवि के स्मरण करते ही आज भी उर्दू-काव्य-प्रेमियों की आँखों में आँसू आ जाते हैं।

* * *

(३०)

गालिब के मरने पर मौलाना हाली ने जो शोकसूचक कविता लिखी वह पत्थर को भी रुला देने वाली हुई है। उसके कुछ शेर ये हैं—

बुलबुले हिन्द मर गया हैहात।
जिसकी थी बात बात में इक बात॥
नुक्तादाँ[3] नुक्तासंज[4] नुक्ताशनास[5]।
पाकदिल पाकज़ात पाकसिफ़ात॥

---

१ रोज़ोशब = दिनरात। २ उल्फ़त = प्यार। ३ नुक्तादाँ = शायरी का नुक्ता नुक्ता जानने वाला। ४ नुक्तासंज = नुक्ता नुक्ता तौलने वाला। ५ नुक्ताशनास = नुक्ते नुक्ते की बारीकी पहचानने वाला।

(३१)

स्वर्गीय मुंशी बनवारीलाल शोला अलीगढ के नामी कवि हो गये हैं। कहा जाता है, आपने दो विवाह किये थे, परन्तु आपको वियोग का दुःख फिर भी सहना पडा· क्योंकि आपकी दूसरी स्त्री भी विवाह के थोड़े दिन बाद ही चल बसी। स्त्री की मृत्यु हो जाने पर आपको दिली रंज हुआ। उस समय आपने निम्नलिखित नौहे बनाकर अपनी वियोगाग्नि कम की :—

ओ बारे-निज़ाकत ज़रा लाशा को सँभाले।
ओ रगेहिना पावों से बोझ अपना हटा ले॥
ओ निकहते-गुल दोश[1] पै ताबूत[2] उठा ले।
जुंबिश[3] न हो काँधा मेरे काँधे से मिला ले॥
महकी हुई फूलों की तरह बू थी कफन की।
दुनिया से सवारी गई किस रश्के-चमन[4] की॥
मंज़िल पे गये राह में लेते हुए बिसराम।
हर एक की ज़बाँ पर था श्रीराम श्रीराम॥
होने लगा अहबाबो[5] अकारिब का था जो काम।
धर ही दिया आख़िर को चिता में बुते इस्लाम॥
अफ़सोस कि आग अपने ही हाथों से लगा दी।
जो रंगभरी लाश थी होली सी जला दी॥

* * *

(३२)

कहते हैं, मुंशी बनवारीलाल 'शोला' छप्पन वर्ष तक जीवित रहे। रामनवमी के दिन मामूली सी बीमारी के बाद उनकी संसारलीला समाप्त हो गई थी। उन्होंने मरते समय कहा था —

१ दोश = कंधा। २ ताबूत = जनाज़ा। ३ जुंबिश = हिलना। ४ रश्के-चमन = जिससे वाटिका को भी ईर्ष्या हो। ५ अहबाबो अकारिब = दोस्त और रिश्तेदार।

हिन्द में नाम पायगा अब कौन ।
सिक्का अपना बिठायगा अब कौन ॥
उसने सब को भुला दिया दिल से ।
उसको दिल से भुलायगा अब कौन ॥
उससे मिलने को याँ हम आते थे ।
जाके दिल्ली से आयगा अब कौन ॥
थी बिसाते-सखुन[1] में शातिर[2] एक ।
हमको चालें बतायगा अब कौन ॥
शेर में नातमाम[3] है हाली ।
ग़ज़ल उसकी बनायगा अब कौन ॥
किसको जा कर सुनायें शेरो ग़ज़ल ।
किससे दादे सखुनवरी पायें ॥
पस्त-मज़मूँ[4] है नौहये[5] उस्ताद ।
किस तरह आस्माँ पै पहुँचायें ॥
अब न दुनिया में आयेंगे यह लोग ।
कहीं ढूँढे न पायेंगे यह लोग ॥
उठ गया था जो मायेदार[6] सखुन ।
किसको ठहरायें अब मदारे[7] सखुन ॥
मज़हरे[8] शान हुस्नेफ़ितरत[9] था ।
मानिये लफ़्ज़ आदमीयत था ॥

* * *

१ बिसाते सखुन = कविता की बिसात, कलाम का बिछावन । २ शातिर = शतरंज खेलनेवाला । ३ नातमाम = अधूरी । ४ पस्त मज़मूँ = छोटे अर्थों का मज़मून । ५ नौहये = नोहा, किसी की मृत्यु पर रची गई शोक सूचक कविता । ६ मायेदार सखुन = कविता का पूँजीपति । ७ मदारे सखुन = जिस पर कविता की दारमदार हो, आधार या जिम्मेदार । ८ मज़हरे शान = प्रकट करनेवाला । ९ हुस्नेफ़ितरत = प्राकृतिक हुस्न—शोभा ।

विचित्र वार्त्ता

[कल्पित किंतु रोचक कहानियाँ]

काँधों पै जो घर के ले चले हो तावूत।
ओ प्यादो ! सवार जा चुका है कब्र का ॥

(३३)

अमेरिका के 'सयुक्तराज्य' का जन्मदाता अब्राहम लिंकन कहा जाता है। लिंकन देश की स्वतन्त्रता के लिये जी-जान से लड़ा और अन्त मे विजयी हुआ। परन्तु उसके दुश्मनो ने अन्त मे उसे नाटकघर मे धोखे से मार डाला। जब अपने नेता की मृत्यु का समाचार अमेरिकावालो को मिला तो उन लोगो को बडा दुःख हुआ। इस अवसर पर शोक तथा समवेदना प्रकट करने के लिये अमेरिकावालो ने एक स्वर से जो कविता पढी उसका कुछ अश यहाँ पर दिया जाता है—

O Captain ! my Captain !!
Rise up and hear the bells,
Rise up—for you the flag is flung,
For you the bugle trills.
It is some dream that on the deck
You have fallen cold and dead.

भावार्थ—हे आचार्य ! उठो और घटो की आवाज़ सुनो (जो तुम्हारे विजयी हो कर लौटने के कारण बजाया जा रहा है।) जल्दी उठो ! देखो तुम्हारे लिये झडियाँ फहराई गई हैं और विजय-चिह्न का बिगुल बजाया जाता है। हम लोगो के लिये (ऐसे समय) तुम्हारा ठढा पड जाना (मर जाना) स्वप्न सा झूठा मालूम होता है।

भूखे भजन न होंहि गोपाला

किसी ब्राह्मण के दो पुत्र थे। बड़ा लड़का कमाता था और छोटा विद्याध्ययन करता था। छोटा लड़का भोजन में स्वभावतः कुछ न कुछ मीन-मेष निकाल देता था। एक दिन इनकी भौजाई ने बिगड़ कर कहा—देवर जी! मुझसे तो ऐसा ही बनता है। आप व्याह कर लाइये तो देवरानी जी आप के मनोनुकूल भोजन बनाया करेंगी।

भौजाई की बात इनको लग गई और ये बाहर निकल पड़े। रास्ते में एक शहर में इन्हें भूख मालूम हुई। इन्होंने खिचड़ी पकाई। परन्तु खाने के पूर्व ही एक ऐसी घटना घटी जिसने इनका भाग्य-चक्र बदल दिया।

बात यह हुई कि उस शहर की राजकुमारी की शादी तय हो गई थी। परन्तु वर को मृगी रोग का दौरा हो गया इस लिये वर-पक्ष वालों ने दूल्हे से मिलता-जुलता कोई लड़का लाकर व्याह की रस्म पूरी करनी चाही। इत्तिफाक से ये पंडित जी मिल गये। इन्हें एक हजार अशर्फियों का लालच दे कर वे लोग लिवा ले गये और व्याह हो गया।

विवाह के बाद राजकुमारी इनसे मिली तो ये सो रहे थे। यह देख उसने कहा—

शय्या वस्त्रं भूषणं चारु गंधम्।
वीणा वाणी दर्शनीया च रामा॥

अर्थात्—ऐसी एकान्त शय्या, मेरे धारण किये हुए उत्तम वस्त्र और आभूषण, तथा सेवन करने के लिये अनेक प्रकार के इतर, पुष्प आदिक पदार्थ, वीणा के समान मेरी मनोहर वाणी और एक ओर मेरे समान सुन्दरी भार्या (इन सब आनन्ददायक पदार्थों के प्राप्त होने पर भी आप क्यों नहीं बोलते?)

घर आकर सोनारराम ने पंडित जी के यहाँ वह लेख भेज दिया परंतु उसे कोई समझ न सका। यह बात राजा भोज ने सुनी। उन्होंने वह खपड़ा मँगवाया और अपने यहाँ के पंडितों से पढ़ाया। किंतु कोई भी उसका अर्थ न निकाल सका। इस पर क्रुद्ध हो कर राजा साहब ने सब पंडितों को नजरबंद कर दिया और कहा कि एक सप्ताह के भीतर यदि आप लोगों ने इसका अर्थ न बता पाया तो सब को प्राणदंड दिया जायगा। 'वररुचि' भी उस विद्वन्मंडली में थे जिनको राजा भोज ने नजरबंद कर रक्खा था। न जाने किस तरह ये महाशय वहाँ से भाग निकले और एक घने जंगल में जा छिपे। जिस पेड़ पर वररुचि छिपे हुए बैठे थे उसी के नीचे सियार और सियारिन का एक जोड़ा आ पहुँचा और उनमें निम्नलिखित बातचीत होने लगी—

सियारिन—प्राणनाथ! मैं गर्भिणी हूँ अतः मनुष्य का मांस खाने की मेरी बड़ी इच्छा है।

सियार—प्रिये! दो दिन धीरज धरो। उसके बाद यथेच्छ मांस ला दूँगा।

सियारिन—दो दिन बाद कहाँ से ला दोगे?

सियार—प्रिये! राजा भोज ने सत्रह पंडितों को नजरबंद कर रक्खा है। परसों उत्तर न दे पाने पर वे सब लोग कत्ल कर दिये जायँगे।

सियारिन ने पूछा—आखिर बात क्या है?

तब सियार ने सोनार और ब्राह्मण की कथा कह सुनाई और कहा कि ब्राह्मण ने अंत-समय में 'अप्रंशिखः' लिखा था, जिसकी व्याख्या यों है—

अनेन तव पुत्रस्य प्रसुप्तस्य वनान्तरे।
शिखामादाय हस्तेन खड्गेन निहतं शिरः॥

अर्थात्—मैं जंगल में सोया था। तुम्हारे लड़के ने हाथ से मेरी चोटी पकड़ कर खींच ली और तलवार से मेरा सिर उड़ा दिया।

यह ब्राह्मणपुत्र भी विद्वान् था। उसने तुरत राजपुत्री के उपर्युक्त अर्ध श्लोक के उत्तर मे निम्नलिखित आधा श्लोक बना कर कहा—

नो रोचन्ते क्षुत्पिपासातुराणाम्।
सर्वारम्भास्तंडुलप्रस्थमूलाः ॥

अर्थात्—(तुमने जो कुछ कहा वह सच है परन्तु) भूखे और प्यासे पुरुष को ये भोग्य पदार्थ कैसे अच्छे लग सकते हैं। इन सब की जड़ तो मुट्ठी भर चावल ही हैं।

तदनुसार राजकुमारी ने इन्हे उत्तम भोजन कराये और दूसरे दिन वे अपने घर लौट गए।

* * *

पशुओं का पांडित्य

किसी ब्राह्मण और सोनार मे दोस्ती थी। जब विप्र जी परदेश जाने लगे तो सोनार ने कहा कि हमें भी अपने साथ लेते चलो। ब्राह्मण ने स्वीकार कर लिया और दोनो चल पडे। ब्राह्मण ने किसी राजा के यहाँ नौकरी कर ली और सोनार ने एक छोटी सी दूकान खोल ली। पडित जी ने खूब पैसा कमाया और घर जाने लगे तो सोनार से कहा कि मै घर जाता हूँ, तुम्हे कोई सदेसा कहना हो तो मैं तुम्हारे घर पर कह दूगा। सोनार ने कहा—पडित जी! मैं यहाँ अकेला न रहूँगा। मैं भी आप के साथ चलता हूँ। यह कह कर दोनो चले।

रास्ते मे एक जगल पडा और शाम हो चुकी थी, इसलिये एक पेड के नीचे दोनों ने डेरा डाला। पडित जी को जल्दी नींद आ गई परतु सोनारराम के मन मे आई कि अच्छा मौक़ा है पंडित जी को मार कर सब रुपया ले लूं। यह सोच कर उसने पडित जी की चोटिया पकड़ी और कहा कि तुम्हारा अत समय आ गया अपने घर के लिये क्या कहते हो। पडित जी ने एक खपडे पर 'अप्रशिखः' लिख दिया और कहा कि माँ को दे देना!

किसी क्षत्रिय की स्त्री कुलटा थी। पति की उपस्थिति मे वह स्त्री अपने प्रेमी को न बुला सकती थी इस लिए उसने सोचा कि यदि किसी प्रकार मेरा पति कुछ दिनों के लिए परदेश चला जाता तो अच्छा होता।

पति महाशय ने स्त्री की आतरिक इच्छा समझ ली। उन्हो ने सोचा कि यह अपने को बडी बुद्धिमती समझती है, इसको सबक सिखा देना चाहिए। यह सोच दूसरे दिन प्रातः-काल उठते ही क्षत्रिय महाशय ने स्त्री से कहा—आज मैंने बड़ा बुरा सपना देखा है। वह यह कि एक ऋषि ने मुझसे कहा है कि यदि तू घी-दूध खायगा तो तीन महीने के अन्दर तू अन्धा हो जायगा। स्त्री ने बनावटी दुःख दिखाकर कहा—"अच्छा आज से न दिया करूँगी।" परन्तु भीतर-भीतर वह खुश थी कि अब तो तरकीब मालूम हो गई, काम बन जायगा। उस दिन से वह दाल पकाते समय डेढ पाव घी डाल देती ताकि पति देव जल्दी अन्धे हो जायँ। इधर क्षत्रिय महाशय की पाचो घी मे थी और वे भी अपनी ताक में थे कि इसकी अक्ल दुरुस्त कर देना है। कुछ दिनो बाद पति जी ने अपनी पत्नी से कहा—तुमने अभी घी-दूध बन्द नहीं किया, मेरी आँखों में दिन पर दिन पर्दा सा पडता जाता है। स्त्री ने मामला ठीक होते देख घी छोडना जारी रक्खा। यहा तक कि एक दिन पति ने कहा 'हमें दिन पर दिन कम दिखाई देने लगा है जान पडता है अन्धा हुए बिना न बचूगा।'

तीन चार दिन बाद उस क्षत्रिय ने झूठमूठ टटोल कर चलने की मुद्रा बनाई और कहा लो! मैं जो कहता था वही हुआ। आज मुझे बिल्कुल नहीं दिखाई पड़ता। उसकी स्त्री यह जान कर बडी खुश हुई कि पतिदेव अब मेरे कृत्यों को न देख पायेंगे।

उसी रात उसने अपने प्रेमी को बुलवाया। पति महाशय तो यह सब लीला देख ही रहे थे अतः मौका पाकर उन्हों ने दोनों का सिर उड़ा दिया।

ज्यों ही वररुचि को अप्रशिखः की व्याख्या मालूम हो गई वे ठठाकर हँसने लगे। जब सियार को मालूम हुआ कि हम लोगों की बात इस आदमी ने सुन ली तो उसने कहा—

दिवा निरीक्ष्य वक्तव्यं रात्रौ नैव च नैव च।
धूर्त्ताः सर्वत्र तिष्ठन्ति वटे वररुचिर्यथा॥

अर्थात्—दिन मे इधर उधर देख ले (कि कोई है तो नहीं) तब गुप्त बात को प्रकट करे और रात मे गोप्य विषय की चर्चा ही न करे, क्योंकि धूर्त्त सब जगह होते हैं जिस प्रकार बरगद पर वररुचि।

वररुचि के उत्तर से भोजराज प्रसन्न हो गये और उन्होंने इनको पुरस्कृत तो किया ही साथ ही इनके कहने पर इनके साथी सब पंडितों को बंदीगृह से मुक्त कर दिया।

* * *

साँप और क्षत्रिय का कालक्षेप

एक साँप नदी में तैर रहा था, इतने में एक मेढक उछल कर साँप के फन पर आ बैठा। साँप के सिर पर मेढक को बैठा देख एक बगुला ठहाका मार कर हँसने लगा। बगुले को हँसते हुए देखकर साँप ने पूछा—

कथं हसासि भो पक्षिन्! नाहं दर्दुरवाहनः।
कालक्षेप करिष्यामि घृतांधःक्षत्रियो यथा॥

अर्थात्—ऐ बगुले! क्यों हँसता है। मैं मेढक की सवारी नहीं हूँ (कि इसे सिर पर बिठा कर घूमूँ)। जिस प्रकार घी खाकर अन्धा बनने वाला क्षत्रिय मौका देख रहा था वैसे ही मैं भी कालयापन कर रहा हूँ (और मौका पाकर मेवाराम को चट कर जाऊँगा)।

बगुले ने साँप की बात सुन कर कहा—'घृतांध-क्षत्रिय' कौन था और वह क्यों अन्धा बना था यह मैं नहीं जानता। साँप ने कहा सुनो—

लगी और सारा दूध गिर गया। इस पर जब यह ठठा कर हँसी तो उसकी सहेलियों ने पूछा—ऐ बहन! तेरा इतना नुकसान हो गया और तब भी तू हँसती है! इस पर उस औरत ने उत्तर दिया—

हत्वा नृपं पतिमवेक्ष्य भुजंगदष्टम्।
देशान्तरे विधिवशाद्गणिकास्मि जाता॥
पुत्रं मृतं समधिगम्य चिता प्रविष्टा।
शोचामि गोपगृहिणी कथमद्य तक्रम्॥

अर्थात्—राजा को मार कर, साँप से डँसे जाने के कारण पति को मरा देख, दैववश मैं दूसरे देश में गई और वहाँ वेश्या बनाई गई। वहाँ जाने पर चिता में प्यारे बेटे को जलते देख मैं भी चिता में कूद पड़ी! बाद में तुम्हारे यहाँ आ गई। (जब इतनी विपत्तियाँ पड़ने पर मैंने चिंता न की तो) आज जरा से मट्ठे पर क्यों शोच करूँ।

* * *

मूर्त्ति का दुर्भाग्य

एक पंडित जी थे। उन्होंने एक अहीर के लड़के को नौकर रक्खा था। पंडित जी प्रतिदिन ठाकुर जी की पूजा करके प्रसाद खा लेते, तब भोजन करते थे। कभी कभी वे नौकर को भी पंचामृत दे दिया करते थे।

एक दिन पंडित जी कहीं बाहर गए थे। अच्छा मौका पा कर अहीर के लड़के ने ठाकुर जी का पंचामृत बनाया। परन्तु उसे यह तो मालूम न था कि पंचामृत में क्या क्या पड़ता है, इसलिये उसका पंचामृत रोज जैसा न बना। अहीर ने समझा कि ठाकुर जी मुझ पर नाराज हो गये हैं। अतः गुस्से के मारे उसने ठाकुर जी को कुयें में फेंक दिया और सिंहासन में शालग्राम जी की जगह एक बड़ा सा काला पत्थर रख दिया ताकि पंडित जी को यह भेद मालूम न होने पाये।

साँप ने कहा कि 'ऐसा ही मौका मैं भी देख रहा हूँ'। तब तक साँप किनारे जा लगा और उछल कर मेंढक को अपने पेट के हवाले कर दिया।

* * *

विपत्ति पर विपत्ति

एक साह अपनी स्त्री और लड़के के साथ कहीं जा रहा था। उसकी स्त्री सुन्दरी थी अतः उस देश के राजा ने उसे पकड मँगाया। राजा के आगे बेचारे साह की क्या चलती, चुप हो कर बैठ रहा। परन्तु उसकी स्त्री पतिव्रता और वीर रमणी थी अतः एक रात को उसने राजा का सिर काट लिया। तत्पश्चात् वह अपने घर गई परन्तु साँप के काट लेने से उसका पति पहले ही मर चुका था। पति-वियोग मे रोती-भटकती वह दूसरे देश मे जा पहुँची। वहाँ कुछ वेश्याये नाच रही थीं। उन्होंने इसे रोते देख कहा—यदि तुम हम लोगों की वृत्ति स्वीकार कर लो तो हमारे साथ चलो। वह राजी हो गई और वेश्या बन कर नाचने-गाने लगी।

एक बार वह किसी बारात मे गई और वहाँ उसने अपना नाच किया। उसे देख कर एक व्यक्ति के मन मे विकार उत्पन्न हो गया। पीछे जब उसे मालूम हुआ कि यह वेश्या तो मेरी माँ है, तब उसे ऐसी लज्जा आई कि वह चिता बना कर जल मरा। पुत्र के शोक मे वह वेश्या भी चिता मे दौड पडी, परन्तु आँच न सह सकने के कारण वहाँ से निकल कर एक नदी मे कूद पडी। बहते बहते वह दूसरे देश मे जा लगी। वहाँ कुछ अहीरिनें बैठी थीं, उन्होंने इसे पानी से निकाला और सारा हाल पूछा। चलते समय वे अपने साथ इसे भी लेती गईं।

दैववश उन्हीं दिनो गाँव के एक अहीर की स्त्री मर गई। लोगों ने उस अहीर का ब्याह इससे करा दिया। एक बार वह अपनी पड़ोसी अहीरिनों के साथ दूध बेचने निकली। रास्ते मे एक पत्थर की ठोकर

संयोग की बात

एक राजा थे। किसी कवि ने उन्हे अपनी कविता भेट की। राजा ने कवि जी को पुरस्कृत करके वह कविता अपने कमरे में टँगवा दी। दैववशात् कुछ दिनो के बाद उन राजा साहब के घरेलू डाक्टर से और उनसे आपस मे खटपट हो गई। डाक्टर साहब ने राजा को मार डालने के लिये उनके नाई को जहरीला छुरा देकर कहा कि यदि मेरा काम बन गया तो तुम्हे बहुत सा रुपया इनाम मिलेगा।

सदा की भाँति इस बार भी वह हज्जाम राजा साहब की दाढी बनाने के लिये छुरा तेज करने लगा। तब तक राजा की निगाह उस कविता पर पहुँच गई जिसे कवि जी ने उन्हें भेट किया था। राजा साहब उसे पढने लगे। वह कविता थी—

काहे का तुम घिसो घिसाओ घिस घिस लाओ पानी।
जौनि बात तुम्हरे मन मा है तौनि बात हम जानी॥

इसे सुनते ही नाईराम का चेहरा उतर गया, क्योंकि उसने समझा कि मेरी चालबाजी खुल गई। वह राजा साहब के पैरों पड़ा और माफी माँगने लगा। पीछे, जब राजा को मालूम हो गया कि यह सब षड्यन्त्र उनके डाक्टर साहब का रचा हुआ है तो उन्होंने डाक्टर साहब का देश-निकाला कर दिया। साथ ही उक्त कविता बनानेवाले कवि जी को बुलवाकर सम्मानित किया, क्योंकि कवि जी की कविता के कारण ही राजा साहब की जान बची थी।

* * *

घोड़े की स्वामिभक्ति

एक बार एक राजा शिकार खेलने गया। रास्ते में उसे प्यास लगी। पानी की तलाश मे घूमते घूमते उसने देखा कि किसी पेड़ ने

घर लौटने पर जब रोज की तरह पडित जी ने ठाकुर जी को स्नान कराने के लिये निकाला तो उन्हे पुलपुला पाया। पडित जी ने नौकर से पूछा कि क्या मामला है। उसने हॅसते हुए कहा—

पुनि पुनि चन्दन पुनि पुनि पानी।
ठाकुर सरिगे हम का जानी?

अर्थात्—मुझे ठीक ठीक तो नहीं मालूम, परन्तु मेरा ख्याल है कि रोज रोज आप उन्हे धोते और चन्दन लगाते हैं इसलिये वे सड गये हैं।

* * *

दो चोर

दो चोर किसी गॉव मे चोरी करने गये। जब गॉववालों ने उनका पीछा किया तो उनमें से एक तो भाग निकला और दूसरा कुयें में कूद पड़ा। गॉववाले रस्से ले ले कर पहुॅच गये और उस चोर को कुयें से निकालने का उपाय करने लगे।

इधर वह भागा हुआ चोर भी अपने साथी का पता लेने के लिये वहीं आ पहुॅचा। कुये के अन्दर पडे हुए चोर ने अपने साथी को पहचाना और इशारा करके कहा—

मरब राम के मारे। जियब कान के फारे॥

उसका साथी—दूसरा चोर इसका मतलब समझ गया। तदनुसार पास ही खड़ी हुई एक लडकी के कान से उसने सोने की बालियाँ खींच लीं और भाग निकला। जेवर ले कर उसे भागते देख गाँव के सब लोग उसके पीछे दौड़ पडे। इधर सुनसान मौक़ा पा कर कुयेवाला चोर रस्सों के सहारे बाहर निकल आया और अपने साथी से जा मिला।

* * *

बूझै लालबुझक्कड और न बूझै कोय ।
पैर में चक्की बाँध के हिरन न कूदा होय ॥

सुनते ही लोगो मे कहकहा मच गया। सभी लालबुझक्कड की पहुँच की तारीफ कर कहने लगे कि हिरन बडे बडे काम कर डालता है तो पैरो मे चक्की बाँध कर गाँव से निकल जाना कोई बड़ी बात नही है।

* * *

(२)

इसी प्रकार किसी कुएँ मे लाल रग का एक फूल जा पडा। पानी भरते समय गाँव के लोगो ने उसे देखा और उस पर अपनी अपनी राय देने लगे। परन्तु लोगो मे सन्तोष न हुआ। यहाँ तक कि वे ही लाल-बुझक्कड बुलाये गये। आपने कुएँ मे झाँक कर देखा। सारा मतलब समझते हुए हँस कर आपने कहा—

जानै लालबुझक्कड, और न जानै कोय।
कुआँ पुराना हो गया, काँच न निकली होय ॥

बात लोगो के मन मे बैठ गई और वे कहने लगे कि लालबुझक्कड दादा के बिना ऐसी सगीन बात कौन समझे!

पानी टपक रहा है। उसने घोड़ा बाँध दिया और पेड़ के नीचे कटोरी रख दी कि पानी भर जाय। कटोरी भरने ही को थी कि घोड़े ने पीछे से एक ऐसी लात जमाई जिससे कटोरी का पानी जमीन में गिर गया।

राजा साहब ने दुबारा वह कटोरी रख दी और इस बार भी घोड़े ने पानी गिरा दिया। अब राजा साहब को गुस्सा आ गया और अपनी तलवार निकाल कर उन्होंने घोड़े का काम तमाम कर दिया। घोड़े की मृत्यु के बाद राजा के मन में आई कि आखिर बात क्या है जो यह घोड़ा बार बार पानी गिरा देता था। पेड़ पर चढ़ने से मालूम हुआ कि वह बूँद बूँद टपकनेवाली चीज पानी नहीं था बल्कि किसी साँप का सड़ा हुआ माँस था और वही गलगल कर टपक रहा था।

घोड़े की स्वामिभक्ति देख कर राजा साहब को बड़ा पश्चात्ताप हुआ कि नाहक मैंने उसे मारा, वास्तव में उसने ही मेरी जान बचाई है। उसी शोक की दशा में उन्होंने निम्नलिखित दोहा पढ़ा—

बिना बिचारे जो करै सो पीछे पछिताय।
काम बिगारै आपनो जग में होत हँसाय॥

* * *

लालबुझक्कड़ की सूझ

(१)

किसी गाँव में 'लालबुझक्कड़' नामक एक बेवकूफ आदमी रहता था। उसकी मूर्खता से भरी बातें सुनने में लोगों को बड़ा मजा आता था। एक बार रात में गाँव से एक हाथी गया। दूसरे दिन प्रातःकाल हाथी के पैरों के निशान देख कर लोग कहने लगे—भाई यह क्या है? इतना बड़ा कौन सा जानवर है जिसके ये पैर हैं। अब यह ठहरी कि लालबुझक्कड़ को बुला कर उनसे पूछा जाय। तदनुसार लालबुझक्कड़ जी बुलाये गये। उन निशानों को देख कर आपने कहा—

कुसुम-कुञ्ज

इस कुंज में उन कुसुमों का मधु-संचय है जो किसी विशेष काव्यवाटिका में नहीं, किन्तु वन-पुष्पों की भाँति प्रकीर्ण या बिखरे हुए हैं।]

अमृत की चर्चा

किसी राजा ने अपनी विद्वन्मण्डली मे यह प्रश्न रक्खा कि अमृत क्या है और किन किन स्थानो पर पाया जाता है। राजा ने लोगों से इस विषय पर अपनी अपनी सम्मति काव्य-बद्ध कर ले आने के लिए कहा। दूसरे दिन कविगण अपनी अपनी रचनाये ले आये। एक कवि ने पढा—

अमृतं शिशिरे वह्निः।

(जाडे के दिनो मे आग अमृत है)

दूसरे कवि ने कहा—

अमृतं लघुभोजनम्॥

(थोडी मात्रा में भोजन करना अमृत है)

तीसरे का मत था—

अमृतं राजसम्मानम्।

(राजा के यहाँ सम्मान पाना अमृत है)

चौथे कवि ने कहा—

अमृतं प्रियदर्शनम्॥

(प्रिय व्यक्ति से भेट हो जाना अमृत है)

तदनन्तर एक बङ्गाली कवि ने कहा—

केचिद्वदन्त्यमृतमस्ति सुरालयेषु।
केचिद्वदन्ति वनिताधरपल्लवेषु॥
ब्रूमो वयं सकलमेव विचारदक्षाः।
जम्बीरनीरपरिपूरित मत्स्यखण्डे॥

अर्थात्—किसी का मत है कि अमृत मधुशाला मे है, कोई कहते हैं कि रमणी के अधरों मे है। परन्तु हम लोग सोच विचार कर इस

तमाखू-सेवन का समर्थन

किसी कवि-मण्डली में एक सज्जन ने तमाखू-सेवन का विरोध किया। मण्डली में अधिक संख्या तमाखू-सेवियों की थी। उन्हें यह बात अच्छी न लगी। उनमें से एक व्यक्ति ने विरोधी महाशय के भ्रम का निवारण करने के लिये तमाखू-स्तोत्र का यह श्लोक बनाया—

तमाखुवाहनः पायात् तमाखुं यः प्रशंसति।
तमाखुवाहनो हन्यात् तमाखु यश्चनिन्दति॥

अर्थात्—जो तमाखू की प्रशंसा करता है, तमाखुवाहन—गणेश जी उसकी रक्षा करते हैं और जो तमाखू की निन्दा करता है उसका संहार कर देते हैं।

* * *

पूरी-स्तुति

किसी स्थान पर भोज हो रहा था। निमन्त्रित सज्जनों में से एक ने कहा—कचौरी जैसी सुस्वादु वस्तु पर आज तक किसी ने रचना नहीं की। इत्तिफाक से उस भोज में एक कवि जी भी आये थे। लोगों ने उनसे प्रस्ताव किया कि कचौरी पर आप कुछ बनाइये। तदनुसार कवि जी ने निम्नलिखित श्लोक बना कर पढ़ा—

गोधूमचूर्णचय चारुसुधाकराभा।
माषप्रपिष्ठ लवणाद्रकहिंगुगर्भा॥
हैयंगवेन परिपाचित कोमलांगी।
पूरी मुखे विशति पुण्यवतां जनानाम्॥

अर्थात् चन्द्रमा की कांति की तरह सफेद, गेहूँ के आटे में नमक, अदरख, हींग आदि मसालों से युक्त उर्द की दाल जिसमें भरी गई हो

निश्चय पर पहुँचे हैं कि शोरवे से लबालब मछली के टुकडे मे जैसा अमृत है वैसा और कहीं नहीं है।

संस्कृत की रचनाओं के बाद 'हरिऔध' नामधारी एक हिन्दी कवि ने अमृत पर अपना मत प्रकट करते हुए कहा—

कोऊ कहै अमी को निवास अमरावती मैं,
कोऊ कहै कवि की कलित कवितान मैं।
कोऊ कहै अमल मयंक की मरीचिन मैं,
कोऊ कहै सिसु की सरस बतरान मैं॥
'हरिऔध' कोऊ कहै मंजुल रसाल माहि,
कोऊ कहै गौरवी गवैयन के गान में।
मेरे जान केवल निवास है अमिय केरो,
कामिनी के कुसुम समान अधरान मैं॥

इसके बाद राजकवि ने अपना मत प्रकट करते हुए कहा—

अब्धौ विधौ वधुमुखे फणिनां निवासे।
स्वर्गे सुधा वसति वै विबुधा वदन्ति॥
क्षारं क्षयं पतिमृतिर्गरलं निपातो।
कंठे सुधा वसति वै भगवज्जनानाम्॥

इस श्लोक का अनुवाद किसी कवि ने इस तरह किया है—

सिंधु में बतावै कोय, चन्द्र में लखावै कोय,
वाम के अधर-बीच नाग-राजधानी में।
सिन्धु मे जो होत तौ न खारो जल ताको होत,
चन्द्र मे जो होत तौ न कलाहीन जानो मैं॥
मरत न पति होत अधर में वाम के जौं,
नागहू में जानो जात विष की निशानी में।
सत्य के विचारो बात साँची उर धारो मम,
अमृत बसत एक सज्जन की बानी में॥

* * *

इत्यापन्नशिशूनसून् विजहतो दृष्ट्वा तु झिल्लीरवै ।
लूतातन्तुवितानसवृतमुखी चुल्ली चिरं रोदिति ॥

अर्थात्—हे राजन् ! मेरे घर की चुहिया मच्छड के बराबर है । बिल्ली चुहिया के बराबर है । कुतिया बिल्ली भर है और मेरी घर वाली (स्त्री) कुतिया की तरह हो गई है । और लोगो का क्या हाल कहूँ । विपद्ग्रस्त बच्चों को प्राण छोडते देख झिल्ली-झनकार द्वारा चूल्हा रोता है और उसमे मकडी ने अपना जाला तान रक्खा है ।

राजा साहब को यह समझने मे देर न लगी कि स्पष्ट-रूप से मॉगने मे इसको लज्जा आती है और यह भूखों मर रहा है । उन्होने पुरस्कार-स्वरूप बहुत सा धन दरिद्र ब्राह्मण को दिलवा दिया ।

(२)

द्वन्द्वो द्विगुरपिचाहं मद्गेहे नित्यमव्ययीभावः ।
तत्पुरुष कर्मधारय येनाहं स्यां बहुव्रीहिः ॥

इस एक श्लोक मे हिन्दी और संस्कृत के मुख्य छः (द्वन्द्व, द्विगु अव्ययीभाव, तत्पुरुष, कर्मधारय और बहुव्रीहि) समासो के नाम आ गए हैं । परन्तु इस श्लोक का इतना ही महत्व नहीं है । साहित्यिक दृष्टि से भी यह छन्द इसलिये प्रसिद्ध है कि इसके अतर्गत एक घटना छिपी हुई है, जो यों है—

एक बार किसी निर्धन किन्तु विद्वान् ब्राह्मण के भोजन का कहीं भी ठिकाना न लगा । हताश हो कर वह उस देश के राजा के यहाँ गया और उसने दरबार मे यही श्लोक पढा । इस श्लोक का मतलब उसने यह लगाया—

हम घर के दो (स्त्री और पुरुष) हैं । मेरे यहाँ दो गायें हैं । मेरे घर मे कभी भी कुछ खर्च नहीं किया जाता (आशय यह कि पैसा ही नहीं खर्च क्या करे) । इसलिये हे महानुभाव, कोई ऐसा उपाय कीजिये जिससे मैं बहुत अनाजवाला हो जाऊँ ।

ऐसी मुलायम-मुलायम घी में पकाई हुई कचौरियाँ पुण्यवान् मनुष्यों के ही मुँह मे जाती हैं।

* * *

अरसिक जन और कविता

किसी कवि ने एक राजा को अपनी कविता सुनाई। राजा साहब ने उसे लापरवाही से सुना। कविता सुदर थी। परतु प्रशसा करने की कौन कहे उन्होंने कविता के विपय मे मुँह से एक शब्द भी न कहा। कवि जी दरबार से जाने लगे तब भी राजा साहब के मुहर्रमी चेहरे से धन्यवाद अथवा कविताजन्य आनन्द का एक भी भाव न प्रकट हुआ अब कवि जी से न रहा गया। झुझला कर उन्होंने यह श्लोक बनाया और बडे जोर जोर से चिल्ला कर दरबार मे पढा—

इतर पापफलानि यथेच्छया-
वितरतानि सहे चतुरानन।
अरसिकेपु कवित्वनिवेदनम्-
शिरसि मा लिख मा लिख मा लिख॥

अर्थात्—हे विधाता! और पापों के फल जो चाहे मुझे दे दो, मैं उन्हे भोग लूगा, परन्तु जो रसिक नही हैं उन्हे अपनी कविता सुनाना मेरे भाग्य में मत लिखो। मत लिखो!! मत लिखो!!!

इतना कह कर वह दरबार से चलता बना।

* * *

धन प्राप्त करने का उपाय

(१)

एक अत्यन्त दरिद्र पुरुप ने किसी राजा के यहाँ आ कर यह श्लोक पढा—

मद्गेहे मुपकीव मूपकवधूर्नूपीव मार्जारिका।
मार्जारीव शुनी शुनीव गृहिणी वाच्य: किमन्यो जनः॥

कविता में इतने मग्न थे कि सारी रात बीत गई पर उन्हे इसकी कोई खबर ही नहीं। जब जयन्ती जागी तो पूछा कि आज आप लिखते ही रहे, सोये नहीं ? कृष्णनाथ ने कहा आज नायिका-वर्णन का अधिकाश भाग पूरा कर दिया है। इसलिये न सो सका।

इन्होने हँसकर कहा—ओफ, आपने इसी के वर्णन मे सारी रात बिता दी, देखिये में कैसा थोडे मे इसे बनाये देती हू। इन्होने निम्नलिखित श्लोक बनाकर वह रचना पूरी कर दी—

अहिरयं कलधौतगिरिभ्रमात्।
स्तनसगात्किल नाभि ह्रदोत्थितः॥
इति निवेदयितु नयनेहियत्।
श्रवणसीमितिकं समुपस्थिते॥

रमणी के नाभि-सरोवर से निबिड रोमश्रेणी रूपी सर्प बाहर निकला और पर्वत के भ्रम से स्तनयुग्म के आश्रय में चला गया, इस बात को सुनाने ही के लिये क्या दोनो नेत्र कानों के पास आ रहे हैं।

इनके पतिदेव स्त्री के मुँह से इतनी सुन्दर कविता सुनकर अवाक् रह गये और ऐसी विदुषी स्त्री पाने के लिये परमात्मा को धन्यवाद देने लगे।

* * *

विष्णु भगवान् की चिन्ता

एक बार दो मित्र—जिनमे से एक कवि था, किसी तीर्थ को गए। वहाँ उन्होंने भगवान् विष्णु की लकडी की एक मूर्ति देखी। दूसरे ने अपने कवि मित्र से पूछा—भाई! भगवान् विष्णु लकड़ी के क्यों हो गये ? यह सुन कर कविजी ने कहा—

एका भार्या प्रकृतिमुखरा चंचला सा द्वितीया।
पुत्रश्चैको भुवनविजयी मन्मथो दुर्निवार.॥

कहना न होगा कि राजा साहब ने उसके लिये प्रतिदिन एक सीध दिलवा देने की व्यवस्था कर दी।

* * *

जयन्ती देवी और उनके पति

(१)

बंगाल में एक जयन्ती देवी बड़ी प्रसिद्ध विदुषी हो गई हैं। कहा जाता है कि ये देखने में काली थीं, इसलिये इनके पति महाशय इनसे प्रेम न करते थे। ये बेचारी इस दु:ख से बड़ी दुखी थीं। अन्त में वे इसका कोई उपाय सोचने लगीं। जब और कोई उपाय न सूझा तब इन्होंने स्त्रियों की दुरवस्था प्रकट करनेवाला यह श्लोक बना कर अपने पति के पास भेज दिया—

जितं धूम सहायाय, जितं व्यजन वायवे।
मशकाय मयाकायः सायमारभ्य दीयते॥

इस मनोहर श्लोक को पढ़ कर इनके पति की आखें खुल गई और उन्होंने बड़े दु:ख के साथ यह उत्तर लिख भेजा—

अविज्ञातुर्नाम त्वदतुलगुणग्राममनघम्।
वधूरत्नऽमाया न भवदपराधस्त्वयि मम॥
इदानीं नैऽस्त्यान्नु किमनुतापार्त हृदय.।
क्षमाहस्ते भद्रे प्रकृतिकठिनी माऽग्जन.॥

इसका साराश यह है कि प्रिये, तू रमणी-रत्न है, मैंने तेरे गुणों को नहीं पहचाना था, इसलिये मैं तेरा अपराधी हूँ, आज मुझे बड़ा पश्चात्ताप है। भद्रे, क्या तुम मुझ सरीखे कठोर हृदय वाले को क्षमा न करोगी?

* * *

(२)

इन्हीं के विषय में एक दूसरी किंवदन्ती प्रसिद्ध है कि एक बार इनके पति पंडित कृष्णनाथ जी सन्ध्या समय कविता कर रहे थे। वे

शिवमहिम्नस्तोत्र की रचना

कुसुमदशन अथवा पुष्पदन्त नामक गन्धर्वराज शङ्कर जी का बड़ा भक्त था। वह किसी राजा की फुलवाडी से प्रतिदिन अलक्ष्य होकर पुष्प चुन लिया करता था। इसकी सूचना पाकर राजा साहब ने सोचा—यदि उक्त गन्धर्व शिव-निर्माल्य को लाँघ जायगा तो उस फूल चुनने वाले की—अन्तर्धान होने की सब शक्ति नष्ट हो जायगी। राजा के उपाय से अपरिचित होने के कारण उस उपवन में प्रवेश करते ही पुष्पदन्त शक्तिहीन हो गया। जब प्रणिधान द्वारा, शिवनिर्माल्य के लाघने से उसे अपनी शक्ति के ह्रास का पता चला तब उसने शिव की महिमा और अपनी भक्ति के व्यक्त करने के लिए 'शिवमहिम्नस्तोत्र' की रचना की। इस स्तोत्र में इकतीस श्लोक हैं। स्तोत्र का दूसरा श्लोक यों है—

अतीतः पन्थानं तव च महिमावाङ्मनसयो-
रतद्व्यावृत्यायं चकितमभिधत्ते श्रुतिरपि ॥
स कस्यस्तोतव्यः कतिविधगुणः कस्य विषयः।
पदेत्ववर्वाचीने पतति न मनः कस्य न वचः ॥

अर्थात्—हे वरद! आपकी महिमा तक न किसी की वाणी पहुँच सकती है और न मन ही। वेद भी विस्मित हो कर 'नेति नेति' कहता है फिर उस महिमा की कौन स्तुति कर सकता है और कौन गुण जान सकता है। आप के सगुण स्वरूप में तो किसी की वाणी और मन चलता ही नहीं फिर निर्गुण रूप की महिमा का पार पाना तो असम्भव है।

स्तोत्र के समाप्त होते ही शिव-भक्ति के कारण उस गन्धर्वराज में फिर पहले जैसी शक्ति आ गई और वह अन्तर्धान हो गया।

* * *

शेषः शैया भुवनमुदधौ वाहनं पन्नगारिः ।
स्मारं स्मारं स्वगृहचरितं दारुभूतो मुरारिः ॥

अर्थात्—एक स्त्री (सरस्वती) स्वाभाविक ही वाचाल है। दूसरी (लक्ष्मी) चञ्चल है। पुत्र एक (कामदेव) है, जो भुवनविजयी होते हुए भी आवारा है। बिछौना शेषनाग का है। घर समुद्र में है। सांपों के शत्रु गरुड उनकी सवारी में हैं। इस प्रकार अपने घर का हाल याद कर कर के (परेशानी के मारे) भगवान् विष्णु काठ के बन गये हैं !

* * *

बुढ़ापे की लकड़ी

एक बूढ़ा भिखमंगा किसी शहर की गली में यह कहते हुए चला जा रहा था—

या पाणिग्रहपालिता सुसरला तन्वी सुवंशोद्भवा ।
गौरी स्पर्श-सुखावहा गुणवती नित्यं मनोहारिणी ॥
सा केनापि हृता तया विरहितो गंतुं न शक्नोम्यहम् ।

अर्थात्—जो हाथ में पकड कर पाली गई, सीधी, सुन्दर और अच्छे वंश (बाँस) की थी, जो गोरी, छूने में सुख देने वाली, गुणवती और सदैव मन को मुग्ध करने वाली थी। हाय ! उसको कौन हरण कर ले गया ! उसके विना मैं चल फिर सकने में असमर्थ हूं।

इसे सुन किसी राही ने आश्चर्य में आकर उससे पूछा—

रे भिक्षो ! तव कामिनी ?

[हे भिक्षु ! क्या वह तुम्हारी स्त्री थी ?]

भिक्षुक ने रोकर जवाब दिया—

नहिं नहिं प्राणप्रिया यष्टिका !

[नहीं नहीं वह मेरी प्राणप्यारी लाठी थी]

* * *

मालवीय जी की एक सामयिक उक्ति

सुनते हैं, एक बार महामना मालवीय जी से एक राजनीतिक नेता बात कर रहे थे। विषय कांग्रेस की गुप्त योजनाओं का था। तब तक एक सी० आई० डी० आ पहुँचे। मालवीय जी ताड गये और उन्होंने नेता जी की ओर इशारा किया कि इस विषय की बातचीत करना अब ठीक नहीं। परन्तु अपनी बातों के आवेश में उन्होंने कुछ ख्याल न किया। अब मालवीय जी को उन्हें चुप करने का एक उपाय सूझा और उन्हों ने सी० आई० डी० महाशय की ओर हाथ उठा कर निम्नांकित दोहा कहा—

रहिमन यहि संसार में सब सों मिलिये धाय।
ना जानै केहि वेष में नारायण मिलि जाय॥

कहना न होगा कि यह सुनते ही नेता जी ने बात-चीत का प्रसङ्ग बदल दिया।

* * *

केतकी के इत्र का आचमन

एक बार एक इत्र बेचने वाला किसी गाँव मे गया। गाँव वाले गँवार थे। गन्धी ने नमूने के लिये केतकी के इत्र की एक-एक फुलेहरी प्रत्येक व्यक्ति को दी। इतने में एक आदमी ने अपनी हथेली फैलाकर उस गन्धी से कहा—

गन्धी जी! थोड़ा सा और दीजिए, देखूं मीठा है? अपने इत्र की ऐसी कदर देख केतकी—जिसके फूल का वह इत्र था—को सङ्केत करके अचार ने यह दोहा पढ़ा—

विधि-विधान

कहते हैं, एक भौंरा कमल के फूलों का रस लेता हुआ किसी तालाब में आनन्द से घूम रहा था, इतने में सूर्य अस्त हो गए। सायंकाल होते ही कमल के फूल बन्द होने लगे और बेचारा भौंरा फूल में ही फँस गया। कमल में बन्द हो जाने पर वह भौंरा अपने मन में विचार करता है—

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातम् ।
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्रीः ॥

अर्थात्—जब बीतिहै राति प्रभात समै रवि की किरनैं तम को हरिहैं।
खिलिहैं दल उत्पल के तबहीं खुलिहै मम बन्ध कली झरिहैं ॥

वह भौंरा इतना ही कह पाया था कि किसी मतवाले हाथी ने आकर समूल कमल को उखाड़ कर रौंद डाला जैसा कि श्लोक के उत्तरार्द्ध से ज्ञात होता है—

इत्थं विचिन्तयति कोषगते द्विरेफे।
हा हन्त हन्त नलिनीं गज उज्जहार* ॥

अर्थात्—इमि सोचत हो अलि पङ्कज में समझ्यौ नहिं दैव कहा करिहै।
मदमाते मतंग ने तोरयौ सनाल सरोरुह षट्पद सो मरिहै ॥

* * *

* किसी कवि ने इस पूरे श्लोक का अनुवाद यों किया है—

बीते निशा समय भोर अवश्य होगा।
आदित्य देख बन पंकज का खिलेगा ॥
यों कोश भीतर मधुव्रत सोचता था।
कि प्रात मत्त गज ने नलिनी उखाड़ी ॥

प्राणी सा मान कर उससे श्रीराम लक्ष्मण का कुशल-सवाद पूछने लगी। परन्तु जड पदार्थ अँगूठी से यह उत्तर कैसे मिलता ! अन्त मे कातर हो कर सीता जी ने मुद्रिका के मौन रहने का कारण हनुमान् जी से पूछा। हनुमान् जी ने इसका उत्तर यों दिया—

तुम पूछत कहि मुद्रिके मौन होति यहि नाम।
कंकन की पदवी दई तुम विन या कहँ राम॥

—केशवदास

अर्थात्—हे सीते ! तुम उसे 'मुद्रिका' पुकार कर इससे उत्तर माँगती हो परतु अब तो यह मुद्रिका रह नही गई। तुम्हारे विरह मे श्रीरामचन्द्र जी ऐसे दुर्बल हो गये हैं कि वे इसका व्यवहार कंकण के स्थान पर करने लगे हैं। अत. सप्रति 'कंकण' नामधारी यह द्रिका तुम्हे कैसे उत्तर दे।

* * *

संख्या-वाची मुहावरे

आए हौ पठाए वा छतीसे छलिया के इतै,
बीस बिसै ऊधौ वीर बावन कलाँच ह्वै।
कहै 'रतनाकर' प्रपञ्च ना पसारौ गाढे,
बाढे पै रहौगे साढे बाइस ही जाँच ह्वै॥
प्रेम अरु जोग मै है जोग छठै-आठैं परयो,
एक ह्वै रहैं क्यो दोऊ हीरा अरु काँच ह्वै।
तीन गुन पाँच तत्त्व बहकि बतावत हौ,
जैहै तीन-तेरह तिहारी तीन-पाँच है।

: बेगम प्रेम की अन्वन्यता पर उन्होंने

यह छन्द व्रजभाषा के प्रसिद्ध कवि 'रत्नाकर' जी का बनक दिलासा है। इसमे उन्हों ने सख्याविषयक मुहावरो का प्रयोग किया है।

नहिं गङ्गा नहि गोमती, नही राग-संचार।
तू कित फूली केतकी, गोथी गॉव गॅवार ॥

इस दोहे का व्यंग्य अपने ऊपर समझ हाथ मे इत्र मागने वाले महाशय लज्जित हो गए।

* * *

राम-नाम की महिमा

एक बार विभीषण ने लका से रामचन्द्र जी के पास कोई सन्देश भेजा। हरकारे को एक कागज देते हुए विभीषण ने उससे कहा, "रास्ते मे समुद्र पड़ता है। उससे पार होने के लिये यह मत्र तुम्हे हम देते हैं। इसे अपने पास रखना। परतु यदि तुमने इसे खोल कर पढ़ा तो इसका चमत्कार जाता रहेगा।"

दूत लका से चला और समुद्र को पार कर वह सकुशल अयोध्या पहुँच गया। अपना काम कर चुकने पर वह फिर लका लौटा। समुद्र-तट पर पहुँचते पहुँचते उसके मन मे आई कि देखे तो सही यह कैसा मत्र है जिसके प्रभाव से समुद्र उथला हो जाता है। फलतः उसने कागज खोल कर पढ़ा। उसमे लिखा था—

रघुपति राघव राजाराम।
पतितपावन सीताराम॥

पढते ही मत्र के प्रति उसकी आस्था जाती रही क्योंकि वह इस मत्र को एक साधारण लेख समझने लगा। फल यह हुआ कि वही समुद्र जिसे पहले उसने बात की बात मे तय कर लिया था इस बार अथाह एव दुर्गम हो गया और उसे पार करने की हिम्मत न पडी।

* * *

मुद्रिका से कंकण

हनुमान् ने लका मे जा कर सीता जी को श्रीरामचन्द्र की ॲगूठी दी थी। सीता जी उसे पा कर तन्मय हो गई। वे मुद्रिका को जीवित

अंक १३ अशुभ

इंगलैंड में १३ को अशुभ मानते हैं। किसी अंग्रेज के मकान का नम्बर १३ था। फलतः उसके घर में अनेक विपत्तियाँ आईं और विवश हो कर उस व्यक्ति को अपने मकान का नम्बर बदलवाना पड़ा।

* * *

मुल्ला जी और शराबी

एक मुसलमान किसी मस्जिद में बैठा हुआ शराब पी रहा था। तब तक किसी मुल्ला ने बिगड़ कर कहा—तू मस्जिद में बैठा शराब पीता है ? अरे कम्बख्त तुझे और कहीं जगह नहीं मिली ? इसे सुन कर शराबी ने उत्तर दिया—

ज़ाहिद ! शराब पीने दे मस्जिद में बैठ कर।
या वह जगह बता दे जहाँ पर ख़ुदा न हो॥

अर्थात्—ऐ मुल्ला साहब ! मुझे मस्जिद में बैठ कर शराब पीने दीजिये क्योंकि ख़ुदा कहाँ नहीं है जहाँ जाकर मैं शराब पिऊँ !

शराबी की बात सुन कर मुल्ला साहब शर्मा गए और उन्हें उत्तर का कोई उपाय न सूझा।

* * *

झूठा प्रेम

एक बादशाह अपनी बेगम को बहुत चाहता था। वह प्रायः बेगम से कहा करता कि मैं तुम पर मर रहा हूँ। बेगम ने बादशाह के प्रेम की परीक्षा लेने के लिये एक बार जुलाब ले लिया और अपनी अस्वस्थता का हाल बादशाह को दिया। वे आए और बीबी की दशा पर उन्होंने समवेदना प्रकट की। बेगम साहबा ने कहा—यदि आप मुझे दिलासा देते रहें और मेरे पास बैठे तो उम्मीद है कि मैं अच्छी हो जाऊँ।

छतीसे छलिया = बहुत होशियार (छत्तीस प्रकार की बुद्धि से छलनेवाले)।

बीस बिसै = पूरा-पूरा (बीस बिसुवा)।

बीर बावन कलाच = धोखा देना (वामन की क्लांच)।

साढ़े बाइस जॉच = व्यर्थ या निकम्मा।

छठें-आठे = एक दूसरे का विरोध।

तीन-तेरह = छिन्नभिन्न हो जाना, तितर-बितर होना।

तीन-पॉच = तर्क-वितर्क करना।

* * *

७४॥ क़सम क्यों है ?

चिट्ठियों पर ७४॥ का अङ्क लिख देने से उसे दूसरा नह... सकता। क्योंकि यह एक प्रकार की कसम हो जाती है। इस विषय में निम्नलिखित किम्वदन्ती प्रसिद्ध है :—

बादशाह औरंगजेब बड़ा अत्याचारी था। सुना जाता है कि उसके हम्माम का पानी ७४॥ सेर (कुछ लोग मन बताते हैं जो ठीक नहीं जान पड़ता) जनेऊ आग में झोंककर गर्म किया जाता था। बादशाह के कर्मचारी बड़ी निर्दयता-पूर्वक ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्यों जिसे जनेऊ छीन लेते थे। तभी से यह अङ्क शपथ के रूप में परिणत एव हुआ।*

* * *

---

*कुछ लोगों का ऐसा भी मत है कि औरंगजेब ने राजपूताने पर हमला ... और बहुत से लोगों को कत्ल करवा दिया। उन आदमियों ... दी थी। इकट्ठे किये गये तो ७४॥ मन वज़न में निकले।

लड़कपन खेल में खोया।
जवानी नींद भर सोया॥
बुढ़ापा देख कर रोया।
मुहम्मद या रसूलिल्लाह॥

* * *

क्लिष्ट रचना पर व्यंग्योक्ति

एक उर्दू के शायर बड़ी क्लिष्ट रचना करते थे। इससे तंग आ कर उनके एक मित्र ने उनकी कविता के लिये यह व्यंग्य बनाया—

भला वह भी कोई कविता है जिसको पढ़ लिया समझे।
नहीं कुछ आर्ट[1] है उसमें जिसे हर बेपढ़ा समझे॥
वही कविता कलामय है जिसे आलम तो क्या समझे।
अगर सौ बार सर मारे तो मुश्किल से खुदा समझे॥

क्लिष्ट रचना करने वाले महाशय को जब यह मालूम हुआ तो उन्होंने राय दी कि अन्तिम पाद बदल कर यों कर दीजिये तो अच्छा हो—

अगर सौ बार सर मारे तो शायद ही खुदा समझे॥

* * *

गुरु-शिष्य-संवाद

इन्ट्रेंस के किसी मुसलमान परीक्षार्थी ने कुछ नहीं पढ़ा और खेल-कूद में पड़ा रहा। छमाही परीक्षा में बैठने पर जब उसने देखा कि प्रश्नपत्र के कोई भी प्रश्न वह नहीं हल कर सकता तो उसने परीक्षा की कापी पर निम्नलिखित शेर लिख दिया—

हज़ारों की किस्मत तेरे हाथ है।
अगर पास कर दे तो क्या बात है॥

---

१ आर्ट=कला, तारीफ।

परन्तु बादशाह ऐसा नहीं कर सके क्योंकि उन्हे अब अपनी बीबी की विकृत अवस्था पर घृणा हो गई थी। जब बादशाह दिखाऊ प्रेम प्रदर्शित कर बेगम को बिना उत्तर दिये ही जाने लगे तो वे बोलीं—

मुझ पै तुम मरते नहीं थे, मर गए इन चार पर—
नाज़[1] पर, अन्दाज़[2] पर, रफ्तार[3] पर, गुफ्तार[4] पर ॥

बादशाह को अपनी कही हुई बात याद आ गई परतु 'अब पछताये होत क्या जब चिड़ियाँ चुन गईं खेत।'

* * *

बनारस का फ़क़ीर

बनारस का एक फकीर बडी सुन्दर कविता कह कर भीख माँगा करता था। कहा जाता है कि उसकी सदा लोगों को ऐसी पसन्द आई कि बहुतों ने उसे अपनाया। बनारस के उन मुहल्ले के प्रायः सभी लडकों ने उसे याद कर लिया। फकीर की सदा थी.—

जिन्हों के बाल थे काले।
अमाने दूध से पाले ॥
खुदा ने साफ कर डाले।
मुहम्मद या रसूलिल्लाह ॥

जिन्हो घर झूमते हाथी।
हजारों लोग थे साथी ॥
उन्हो पर पड गई माटी।
मुहम्मद या रसूलिल्लाह ॥

---

१ नाज़=सुकुमार शरीर की गति। २ अन्दाज़=तौल। ३ रफ्तार=चाल। ४ गुफ्तार=मीठी बोली।

"तरुण-भारत-ग्रन्थावली" के ग्रन्थों का परिचय

१—प्राणायाम-रहस्य (सचित्र)

(लेखक स्वामी सर्वानन्द सरस्वती)

और श्रीरामरत्नाचार्य

श्वास ही मनुष्य का जीवन है। इसी को बढा कर योगी लोग सैकडों वर्ष का दीर्घजीवन प्राप्त करते हैं। इस पुस्तक मे योगियों के कठिन प्राणायाम तो दिये ही गये हैं, साथ ही गृहस्थो के योग्य भी सीधियों सरल प्राणायाम-विधियाँ अनेको चित्रो के साथ समझाई गई हैं। यदि आप बिना ओषधि के ही, सिर्फ प्राणायाम-साधन के द्वारा, पूर्ण स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन का उपभोग करना चाहते हैं, तो इस पुस्तक को मॅगाकर इसके अनुसार नित्य प्रति प्राणायाम का अभ्यास करे। सजिल्द और सचित्र सुन्दर पुस्तक का मूल्य सिर्फ १॥) है।

२—आहार-शास्त्र (सचित्र)

(लेखक, आयुर्वेद-पचानन पं० जगन्नाथप्रसाद जी शुक्ल भिषड्मणि)

आजकल आहारशास्त्र के विषय मे सर्वसाधारण मे घोर अज्ञान छाया हुआ है। इसी कारण हमारे देश मे नित्य प्रति नये नये रोग और मृत्युसंख्या बढती जाती है। कितने ही लोग आवश्यकता से अधिक भोजन करके, तो कितने ही लोग भोजन बहुत ही कम, या बिलकुल ही न पाकर अकाल ही काल के ग्रास बनते हैं। इस लिए इस पुस्तक में गरीब और अमीर सभी के लिए उपयुक्त भोजन की वैज्ञानिक मीमांसा की गई है। भिन्न भिन्न खाद्य, उनके रासायनिक मिश्रण, पचनक्रिया का वैज्ञानिक विवेचन, विटामिन का इतिहास और भिन्न भिन्न पदार्थों

परीक्षक महोदय ने इसे पढा। उन्हे यह समझते देर न लगी कि यह लडका नटखट है। उसे शिक्षा देने के लिये परीक्षक ने उस शेर के नीचे निम्नलिखित पंक्तियाँ लिख दीं.—

किताबो की ढेरी[1] तेरे पास थी।
अगर याद करता तो क्या बात थी॥

कहते हैं, विद्यार्थी को जब वह कापी लौटाई गई और उसने परीक्षक की चेतावनी पढी तो उसे बडी शर्म मालूम हुई। उस दिन से वह मन लगा कर पढने लगा और सालाना इम्तहान मे वह अच्छे नम्बरो से पास हुआ।

४—गार्हस्थ्यशास्त्र

(लेखक—पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी)

इस पुस्तक मे गृहस्थी का प्रारम्भ, घर कैसा हो, घर की स्वच्छता, वायु का प्रबन्ध, शौककूप और शौचक्रिया, स्नान और स्नानागार, शयन और शयनागार, भंडारघर, रसोईघर, घर की फुलवाड़ी का प्रबन्ध, आमदनी और खर्च का हिसाब रखना, बचत का रुपया कैसे और कहाँ रखना, कपडे और उनकी व्यवस्था, कपडे धोना, कपड़े रँगना, फसल पर सामान खरीदना, आभूषणों की उपयोगिता और निरुपयोगिता, त्योहार, उत्सव, संस्कार और धर्मादाय, गृहशोभा का सामान, सामान की सफाई के नुसखे, बर्तन-भाडे, चिरागबत्ती, नौकर-चाकर, गाय-भैंस, जल का प्रबन्ध, स्त्रियो के फुरसत के काम, सौर का प्रबन्ध, शिशुपालन, रोगी की सेवा-शुश्रूषा, स्त्रियों, बालकों और साधारण रोगो के घरेलू नुसखे, इत्यादि गृह-प्रबन्ध की सभी बातों पर पूर्ण प्रकाश डाला गया है। Domestic Science यानी घरेलू विज्ञान पर हिन्दी में यह एक ही पुस्तक है। घर घर इस पुस्तक का प्रचार हो रहा है। थोडे ही समय मे इसकी चार आवृत्तियाँ निकल गई हैं। स्त्री पुरुष, दोनो के लिए यह पुस्तक समान ही उपयोगी है। लगभग तीन सौ सफे की पुस्तक का मूल्य १) रुपया रखा गया है।

५—धर्मशिक्षा

(लेखक—पं० लक्ष्मीधर जी वाजपेयी)

इस पुस्तक में पहले महर्षि मनु के बतलाये हुए दस धर्मलक्षणो पर अलग अलग व्याख्यान लिखे गये हैं। फिर चार वर्ण, चार आश्रम, पाँच महायज्ञ, सोलह संस्कार, आचारधर्म, यज्ञ, दान, तप, ईश्वरभक्ति, गुरुभक्ति, अतिथि-सत्कार, प्रायश्चित्तविधान, स्नानसंध्या, ईश्वर, जीव, प्रकृति, सृष्टिरचना का स्वरूप, पुनर्जन्म और मोक्ष की आध्यात्मिक व्याख्या, इत्यादि आर्य-हिन्दूधर्म के सभी अंगों पर सप्रमाण विवेचन

में उसके परिमाण का निर्णय और आयुर्वेद से उसका समन्वय, दुग्धाहार, फलाहार, मांसाहार, शाकाहार की तुलनात्मक मीमांसा, ब्रह्मचर्य, उपवास, वस्तिकर्म, व्यायाम, स्नान इत्यादि भोजन के सहायक उपायों का आहार पर प्रभाव, ऋतुभेद, अवस्था-भेद, देशभेद से आहार का विवेचन, अमीरों और गरीबों तथा अन्य श्रमभेद और श्रेणीभेद से यथोचित आहार का निर्णय, भोजन पकाने और अग्नि से अछूते आहार की तुलनात्मक उपयोगिता, भिन्न भिन्न खाद्य द्रव्यों में मिलावट और उससे बचने के उपाय इत्यादि आहारसम्बन्धी सभी ज्ञातव्य बातों का पूरा पूरा विवेचन किया गया है। पूरी पुस्तक ३१ अध्यायों में समाप्त हुई है। विषय के अनुसार आठ चित्र और अनेकों कोष्ठक-चित्र दिये गये हैं। हिन्दी भाषा में यह ग्रन्थ बिलकुल अपूर्व बना है। प्रत्येक गृहस्थ के घर इस पुस्तक की एक प्रति अवश्य रहनी चाहिए। बढ़िया कागज, सुन्दर छपाई। मूल्य सिर्फ २) रु० है

३—कालिदास और उनकी कविता

(लेखक—आचार्य पं० महावीरप्रसाद जी द्विवेदी)

कविकुलगुरु कालिदास संस्कृत भाषा के सर्वश्रेष्ठ कलाकारों में हैं। हिन्दी पाठकों को इनके चरित्र और इनकी काव्यकला के विषय में बहुत ही कम ज्ञान है। इसी लिए आचार्य द्विवेदी जी ने महाकवि कालिदास का आविर्भाव-काल और उनका जीवनचरित उन के समय के भारतवर्ष की दशा, उनके ग्रन्थों की विवेचना और उनकी कविता की मार्मिक आलोचना पर यह अनुपम ग्रन्थ तैयार किया है। यदि आप कविकुल-कमल-दिवाकर महाकवि कालिदास के समय के भारतवर्ष की सैर करना चाहते हैं, यदि आप उनकी कविता की मार्मिक आलोचना पढ़कर उसका रसास्वादन करना चाहते हैं, तो इस पुस्तक को मँगाकर आप इसका अवलोकन करें। हिन्दी भाषा में कालिदास पर यही एक सुन्दर ग्रन्थ निकला है। मूल्य सिर्फ २) रुपया।

८—हृदय का कांटा

(लेखिका—श्रीमती तेजरानी जी पाठक एम० ए०)

यह एक सामाजिक उपन्यास है। एक जमीदार का लड़का महेशचन्द्र, अपनी कुरूपा स्त्री प्रतिभा से विमुख होकर अपनी साली मालती की सौन्दर्यआग में कूदता है, और फिर उसी के पीछे अपना सर्वस्व खोकर जगह जगह ससार में ठोकरे खाता है, तब कही उसे होश आता है; और अपनी पतिव्रता पत्नी की विभूतियों पर न्योछावर हो जाता है। बालिका कनक और मालती के चरित्रचित्रण द्वारा, वर्तमान हिन्दू समाज मे लड़कियो और विधवाओं का क्या हाल है, इस पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। महेश द्वारा त्यक्त किये जाने पर, मालती के वेश्या हो जाने पर, एक स्वयसेवक द्वारा उसका उद्धार पाना देश के स्वयसेवकों के लिए अनुकरणीय आदर्श है। चरित्रचित्रण, मालती और महेश के समान ही, प्रतिभा का भी अच्छा हुआ है। इसमे सन्देह नहीं, अगर हमारे घरों की महिलाए प्रतिभा सी वीर, पतिपरायण और कर्मनिष्ठ हों, तो गृहस्थआश्रम बड़ा ही सुखकर हो जाय। उपन्यास-प्रेमियों को यह उपन्यास एक बार अवश्य पढ़ना चाहिए। पुस्तक की सजावट भी एक ही है। मूल्य सिर्फ १॥)

९—जीवन का मूल्य

(लेखक—बा० प्रभातकुमार मुखोपाध्याय)

धनिक लोग भावों मे किस प्रकार बहते हैं, उनके चापलूस मित्र अपना उल्लू सीधा करने के लिए किस प्रकार उनको वेवकूफ बनाते रहते हैं, स्वाभिमानी पुरुष मृत्यु को भी स्वीकार करके किस प्रकार अपने मान की रक्षा करते हैं, हिन्दू समाज मे कन्याओं और स्त्रियों की दशा कितनी पराधीन है, इत्यादि बातों का बहुत ही हृदयस्पर्शी चित्र इस उपन्यास मे खींचा गया है। बीच बीच में हास्यरस की भी

किया गया हैं। यह पुस्तक विद्यार्थियों और सर्वसाधारण के लिए इतनी उपयोगी सिद्ध हुई है कि इसकी पाच आवृत्तियाँ हजारों की तादाद में थोडे ही समय में निकल गई हैं। प्रत्येक गृहस्थ को यह पुस्तक अवश्य अपने पास रखनी चाहिए। धार्मिक ग्रन्थों के सैकड़ो प्रमाण इसी एक पुस्तक मे आप को मिलेंगे। मूल्य सिर्फ १) रुपया।

६—साहित्य-सीकर

(लेखक—आचार्य पं० महावीरप्रसाद जी द्विवेदी)

इस ग्रथ मे आचार्य द्विवेदी जी ने अपने लिखे हुए बीसियों साहित्यिक निबन्धो का ग्रन्थन किया है। सस्कृत और हिन्दी साहित्य का रहस्य जानने के लिए इस ग्रन्थ के कई निवन्ध बहुत ही उपयोगी हैं। सम्पादकीय योग्यता, हिन्दीसाहित्य का वर्तमान स्वरूप इत्यादि पर आलोचनात्मक लेख भी हैं। हिन्दी व्याकरण के कई जटिल प्रश्नों पर भी प्रकाश डाला गया है। द्विवेदी जी की मार्मिक लेखनशैली का परिचय पाने के लिए साहित्य-रसिकों को यह ग्रन्थ अवश्य पढना चाहिए। मू० सिर्फ १)

७—सदाचार और नीति

(लेखक—पं० लक्ष्मीधर जी वाजपेयी)

सदाचार का मानवजीवन से क्या सम्बन्ध है, मातापिता के सदाचार और शिक्षा का जीवन पर क्या प्रभाव पडता है, सार्वजनिक व्यवहार में सदाचार और नीति के नियमों का किस प्रकार पालन करना चाहिए, आत्मनिरीक्षण, आत्मसयम, सदाचार और श्रद्धा, समाज में सदाचार के नियमो की पाबन्दी, इत्यादि विषयो पर इस पुस्तक में पूर्ण प्रकाश डाला गया है। मनोरजक दृष्टान्त और सस्कृत तथा हिन्दी कवियों की रोचक कविताए बीच बीच मे देकर चरित्रगठन के गम्भीर विषय को सुलभ और मनोरञ्जक बनाने की पूरी पूरी चेष्टा की गई हैं। पुस्तक अध्ययन करने योग्य है। मूल्य सिर्फ ||/) आने।

और लेखनशैली चित्ताकर्षक है। आजकल के नवयुवक और नवयुवतियाँ इसको पढ़कर अपने जीवन की रहस्यमयी समस्याओं को सहज में सुलझा सकती हैं। आप भी इस पुस्तक को मँगाकर एक बार अवश्य पढ़े। मूल्य सिर्फ १) रुपया।

१३—हमारे बच्चे स्वस्थ और दीर्घजीवी कैसे हों

(लेखक, आयुर्वेद-विशारद पं० महेन्द्रनाथ जी पांडेय)

हमारे बच्चे कमजोर क्यों पैदा होते हैं, गर्भधारण के पहिले और बादको माता पिता को किन नियमों का पालन करना चाहिए, जिससे मजबूत सन्तान पैदा हो, और पैदा होने के बाद बच्चों का पालन-पोषण और शिक्षण-निरीक्षण कैसे किया जाय कि जिससे वे सुन्दर स्वस्थ जीवन के साथ दीर्घायु प्राप्त करके सब प्रकार से सुखी रहें, इत्यादि बातें इस पुस्तक में बहुत ही योग्यता के साथ समझाई गई हैं। शिशुपालन के सम्बन्ध की सभी बातें इसमें आप को मिलेगी। मूल्य सिर्फ १) रु०

१४—भोजन और स्वास्थ्य पर महात्मा गान्धी के प्रयोग

फलाहार, वनस्पति-आहार, अनाज, मसाला, नमक, दूध, इत्यादि पदार्थ हमारे भोजन में कहाँ तक आवश्यक हैं, भोजन की मात्रा, भोजन का समय, अग्नि से अछूते अर्थात् बिना पकाये हुए आहार का शरीर पर प्रभाव, प्राकृतिक रूप से पके हुए फल और मेवों से शरीर का पोषण, इत्यादि भोजन-सम्बन्धी अनेक बातों का महात्मा जी ने अपने जीवन में बार बार प्रयोग किया है। इसी प्रकार उपवास, जल, मिट्टी, वायु इत्यादि की प्राकृतिक चिकित्सा का भी उन्होंने अपने जीवन में खूब अनुभव किया है। इस पुस्तक में महात्मा जी के उपर्युक्त सभी अनुभवों का बहुत अच्छा वर्णन किया गया है। प्रत्येक गृहस्थ को यह पुस्तक अपने पास रखनी चाहिए। मूल्य सिर्फ ।।।) आने।

अच्छी पुट दी गई है। उपन्यास के शौकीनों को अवश्य पढना चाहिए। पुस्तक का बाहरी रूप रग भी दर्शनीय है। मूल्य सिर्फ १॥)

१०—बिखराफूल

(लेखिका—श्रीमती स्वर्णमयी देवी)

बँगला के "छिन्नमुकुल" नामक प्रसिद्ध उपन्यास का सुन्दर अनुवाद। भाषा और भाव बिलकुल अपूर्व। शृङ्गार और करुणरस का अनोखा सम्मिश्रण। ललित उपन्यासकला का मनोहारी प्रदर्शन। भिन्न भिन्न मानवी चरित्रों का मनोमुग्धकारी सरस वर्णन। पढकर आप का चित्त प्रसन्न हो जायगा। गेट अप बहुत बढिया।

मूल्य सिर्फ १॥) रु०।

११—चिपटी खोपड़ी (सचित्र)

(लेखक मास्टर अवधविहारीलाल जी श्रीवास्तव बी० ए० एल० एल० बी०)

यदि आप हास्यरस की पुस्तके पढने के शौकीन हैं, तो आप इस प्रहसन को पढिये। आप का चित्त प्रफुल्लित होगा, और तन्दुरुस्ती बढेगी। हास्यरस के साहित्य मे यह पुस्तक अपना सानी नहीं रखती। पुस्तक के बीच में चार कार्टून चित्र दिये गये हैं। टाइटिल भी रगीन हँसी से भरा हुआ है। मूल्य सिर्फ १) रु० है।

१२—जीवन के चित्र

(लेखक "सरस्वती" और "बालसखा" के सम्पादक ठा० श्रीनाथसिह जी)

इस पुस्तक मे कहानियो के रूप मे ठाकुरसाहब ने हिन्दूसमाज के भिन्न भिन्न पहलू के बहुत ही हृदयस्पर्शी चित्र दिखलाये हैं। सभी कहानियाँ मनोरजक, शिक्षाप्रद और सुरुचिपूर्ण हैं। भाषा बहुत ही सरल

१८—महादेव गोविन्द रानडे

(लेखक "विशालभारत" सम्पादक पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी)

जस्टिस रानडे का जीवनचरित्र क्या है, भारत की वर्तमान जागृति का प्रारम्भिक इतिहास है। रानडे का चरित्र और लेखक पं० बनारसीदास जी सोने मे सुगन्ध है। इस पुस्तक की समालोचना करते हुए "प्रताप" ने लिखा है, "इस सचित्र पुस्तक मे पूज्य नेता रानडे महोदय का जीवन बड़ी सजीव भाषा मे चित्रित किया गया है। उनके स्वभाव और गुणों के आदर्श-चित्रण में लेखक ने बड़ी विद्वत्ता से काम लिया है।" पुस्तक शिक्षाप्रद तो है ही, मनोरजक भी काफी है। २०० पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य सिर्फ ॥।) आने।

१९—मराठों का उत्कर्ष

(लेखक—न्यायमूर्ति महादेव गोविन्द रानडे)

यह पुस्तक रानडे महोदय की सुप्रसिद्ध अँगरेजी पुस्तक "राइज आफ मराठा पावर" का अनुवाद है। छत्रपति शिवा जी ने मराठो का सगठन कर के मुगलो को किस प्रकार शिकस्त दी, हिन्दू राज्य के पुनरुत्थान में महाराष्ट्र के साधु-महात्माओ ने कैसा भाग लिया; फिर मराठा सरदारों ने तमाम विरोधी शक्तियो का मुकाबला करते हुए किस प्रकार अपना झडा अटक से लेकर कटक तक फहराया, इत्यादि बातें बहुत ही प्रभावोत्पादक भाषा में लिखी गई हैं। पुस्तक सजिल्द है। मूल्य २) रु०।

२०—निशीथ

(लेखक—श्रीयुत "कुमार हृदय" जी)

यह साहित्यिक भाषा मे लिखा हुआ एक सुन्दर सामाजिक नाटक है। कथानक बहुत ही रोचक और सुरुचिपूर्ण है। भाषा का प्रवाह, भावो का तारतम्य और कल्पना की ऊँची उडान। भारतीय समाज की

१५—ब्रह्मचर्य पर महात्मा गान्धी के अनुभव

ब्रह्मचर्य क्या है, ब्रह्मचर्य के साधन, ब्रह्मचर्य की आवश्यकता, ब्रह्मचर्य और आत्मसंयम, ब्रह्मचर्य और स्वास्थ्य, ब्रह्मचर्य और सत्य, ब्रह्मचर्य और सन्तान-निग्रह, ब्रह्मचर्य और मनोवृत्तियाँ अप्राकृतिक व्यभिचार, ब्रह्मचर्य का रक्षक भगवान्, ब्रह्मचर्य के प्रयोग, ब्रह्मचर्य व्रत, भोजन और उपवास से ब्रह्मचर्य का सम्बन्ध, मन का संयम इत्यादि विषयों के साथ महात्मा जी के अन्य भी कई उपदेशों का संग्रह किया गया है। पुस्तक का मूल्य लागत मात्र सिर्फ ॥) प्रचारार्थ रखा है।

१६—दिल्ली-इन्द्रप्रस्थ (सचित्र)

(लेखक, रायबहादुर दत्तात्रेय बलवन्त पारसनीस)

सम्राट युधिष्ठिर से लेकर राजपूत हिन्दू सम्राटों और मुगल बादशाहों तक इन्द्रप्रस्थ और दिल्ली का बहुत ही मनोरञ्जक इतिहास इस पुस्तक में दिया गया है। महाभारत से लेकर बहुत से इतिहासिक ग्रन्थों की पूरी पूरी खोज करके तथा स्वयं दिल्ली के पुराने और नये स्थानों की जाँच करके विद्वान् ग्रन्थकार ने यह ग्रन्थ लिखा है। हिन्दू और मुगल सम्राटों के प्राचीन स्मारक और उनकी मनोरञ्जक कहानियाँ पढ़ते हुए इन्द्रप्रस्थ और दिल्ली का प्राचीन वैभव मूर्तिमान आप के सामने आकर खड़ा हो जायगा। प्राचीन ऐतिहासिक स्थानों के १०-१२ हाफटोन चित्र भी पुस्तक में दिये गये हैं। मूल्य सिर्फ ॥।) आने।

१७—अपना सुधार

(लेखक, साहित्य-विशारद पं० नर्मदाप्रसाद जी मिश्र बी० ए०)

इस पुस्तक मे शारीरिक, मानसिक और अध्यात्मिक शक्तियों की उन्नति करने के लिए ऐसे ऐसे उपयोगी उपाय बतलाये गये हैं कि जिनको पढ़कर मनुष्य के आचरण मे निश्चित ही शुभ परिवर्तन होता है। जनता ने इसको बहुत पसन्द किया है। चौथा संस्करण है। मूल्य सिर्फ ॥=) आने।

२४–ग्रीस का इतिहास

(लेखक—बाबू प्यारेलाल जी गुप्त)

ग्रीस देश के प्रारम्भिक इतिहास से लेकर रोम के शासन तक का इतिहास, ग्रीस की प्राचीन सभ्यता, धार्मिक, राजनैतिक, सामाजिक क्रान्तियाँ, सिकन्दर बादशाह का पराक्रम, इत्यादि बहुत ही ओजस्विनी भाषा मे वर्णन किया गया है। मूल्य १।) रुपया

२५–इटली की स्वाधीनता

(लेखक—पं० नन्दकुमारदेव शर्मा)

मेजिनी, ग्यारीबाल्डी, कावूर, इत्यादि इटालियन देशभक्तो ने स्व-
[देश] के लिए अपने प्राणों की आहुति देकर किस प्रकार उसको आजाद [ब]नाया, पढ़कर आपके हृदय मे इन आजादी के दीवानो के विषय में [अ]पूर्व श्रद्धा और भक्ति उत्पन्न होगी। बहुत ही अनूठी रोमाञ्चकारी [पु]स्तक है। मूल्य सिर्फ ॥) आने

२६–एब्राहम लिंकन

(लेखक—पं० लक्ष्मीधर जी वाजपेयी)

प्रेसिडेंट एब्राहम लिंकन ने एक गरीब झोपडी में जन्म लेकर [अ]मेरिका के राष्ट्रपति का आसन ग्रहण किया। परोपकार-बुद्धि और [उ]द्योगशीलता उनके जीवन का मूल मन्त्र था। यह लिंकन का ही [उ]द्योग और चातुर्य था कि जिसने हजारों विरोधी शक्तियो को नीचा [दि]खा कर अन्त मे अपने देश से मनुष्यो के क्रयविक्रय, अर्थात् नीच [गु]लामी की प्रथा को सदैव के लिए जड से उखाड कर फेक दिया। [पु]स्तक शिक्षाप्रद और मनोरजक है। मूल्य ॥।) आने

२७–इच्छाशक्ति के चमत्कार

(लेखक—बाबू बुद्धिसागर वर्मा बी० ए०, एल० टी०, विशारद)

इच्छाशक्ति के बल पर ही मनुष्य महान् से महान् कठिन काम कर [स]कता है। इस पुस्तक में इच्छाशक्ति और उसका महत्त्व, माननिक

करुण अवस्था का सुन्दर चित्रण। आदर्श बहुत ही उच्च, पवित्र और देश की वर्तमान दशा के अनुकूल है। गद्य-काव्य का पूरा पूरा आनन्द। पुस्तक बहुत ही मनोमोहक ढँग से छापी गई है। मूल्य सिर्फ ॥)

२१—गुजरात की वीराङ्गना

[सरदार-बा नाटक]

(लेखक—श्रीयुत "कुमार हृदय" जी)

गुजरात की एक मनोहार ऐतिहासिक घटना को लेकर यह दृश्य काव्य रचा गया है। देश-प्रेम और वीररस से भरा हुआ आदर्श क्षत्रिय वीराङ्गना का पवित्र चरित्र इतने चातुर्य से चित्रित किया गया है कि पढ़ कर आपका रोम रोम फड़क उठेगा। नाटक स्टेज में खेलने के योग्य है। बढ़िया छपाई और गेटअप। मूल्य ॥) आने

२२—फ्राँस की राज्यक्रान्ति

(लेखक—बाबू प्यारेलाल गुप्त)

फ्राँस की राज्यक्रान्ति यूरोप के इतिहास में एक बहुत ही महत्वपूर्ण घटना है। इस राज्यक्रान्ति ने फ्राँस की काया तो एकदम पलट ही दी, बल्कि यों कहना चाहिए कि यूरप में स्वतन्त्रता, समता और जनसत्ता की नींव भी स्थापित कर दी। पुस्तक इतने रोचक ढँग से लिखी गई है कि पढ़ने में उपन्यास का सा आनन्द आता है। मूल्य १) रुपया

२३—रोम का इतिहास

(लेखक डा० ज्वालाप्रसाद जी एम० ए०)

पश्चिमी जगत् में रोम साम्राज्य के विकास ने ही भिन्न भिन्न यूरोपीय जातियों में एकता के सूत्र स्थापित किये, और नाना प्रकार के आचार, व्यवहार, विद्या, कलाकौशल आदि में उनको प्रभावित किया। यूरप की भिन्न भिन्न जातियों की सभ्यता, भाषा, शासनपद्धति इत्यादि का ज्ञान प्राप्त करने के लिए रोम और ग्रीस के इतिहासों का पढ़ना अनिवार्य है। पुस्तक संग्रह करने योग्य है। मूल्य १) रुपया

पूरा विज्ञान दिया गया है। बहरेपन और कान के सब रोगों से बचने के उपाय बतलाये गये हैं। बड़ी अच्छी पुस्तक है। मूल्य सिर्फ ।) आने।

३१—साम्यवाद के सिद्धान्त

(लेखक—श्रीयुत सत्यभक्त जी)

गरीब-अमीर, किसान-जमीदार, मजदूर-पूजीपति, राजा-प्रजा इत्यादि में जो सघर्ष इस समय चल रहा है, उसका रहस्य क्या है, और भविष्य मे यह लहर कहाँ जाकर टकराने वाली है, इत्यादि बातो का बहुत ही गम्भीर विचार इस पुस्तक में किया गया है। इस एक ही पुस्तक के पढ जाने से साम्यवाद के बारे में सब मोटी मोटी बाते आप को मालूम हो जायँगी। मूल्य ॥) आने।

३२—भावविलास

(टीकाकार, पं० लषमीनिधि जी चतुर्वेदी साहित्यरत्न)

महाकवि देव का "भावविलास" ग्रन्थ बहुत प्रसिद्ध है। रस अलकार का यह सर्वोत्तम ग्रन्थ है। महाकवि देव की रचनाचातुरी और कवि-कौशल के विषय में कहना ही क्या है। टीकाकार ने कठिन शब्दों का अर्थ तथा छन्दों का भावार्थ भी दे दिया है, जिससे पुस्तक विद्यार्थियों और सर्व साधारण के लिए बहुत ही सुगम हो गई है। छपाई, कागज और जिल्द बहुत बढ़िया है। मूल्य सिर्फ १॥) रुपया।

३३—गोरा-बादल की कथा

(टीकाकार, पं० अयोध्याप्रसाद शर्मा "विशारद")

मेवाड़ की महारानी पद्मावती की सतीत्वरक्षा के लिए गोराबादल ने जो वीरता और चातुर्य तथा युद्धकौशल प्रकट किया, उसकी वीर-गाथा बहुत ही ओजस्वी कविता में दी गई है। यह कविता जटमल

विचारों का स्वास्थ्य पर प्रभाव, इच्छाशक्ति को दृढ़ और उपयोगी बनाने के साधन, इच्छाशक्ति के द्वारा सब मनोरथों के सिद्ध करने के सरल उपाय बतलाये गये हैं। मूल्य सिर्फ ।-) आने

२८—उषःपान

(लेखक—पं० लल्लीप्रसाद जी पांडेय)

उषःपान प्रातःकाल रात के चौथे पहर मे, सूर्योदय के पहले, उषःकाल में किया जाता है। प्राचीन ऋषियों और योगियों की निकाली हुई स्वास्थ्य-सम्पादन की यह प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणाली है। आरोग्य और प्राकृतिक चिकित्सा, पानी की उपयोगिया, उषःपान किस तरह किया जाय, शरीर के अंग प्रत्यंग में उषःपान का प्रभाव, उषःपान से कौन कौन रोग नाश होते हैं, इत्यादि बातें बहुत ही सरल भाषा में बतलाई गई हैं। अन्त में कई अभ्यास करनेवालों के भिन्न भिन्न अनुभव और हठयोग के प्रमाण भी दिये गये हैं। मूल्य ।-) आने

२९—हमारा स्वर मधुर कैसे हो।

(लेखक—श्रीरामरत्नाचार्य)

स्वर का उत्थान, स्वर की साधना, स्वर के अनेक भेद, स्वर और श्वास का सम्बन्ध, कर्कश और कठोर स्वर से हानि, स्वर और सात्विक आहार विहार इत्यादि स्वरविज्ञान की अनेक उपयोगी बातें इस पुस्तक में बतलाई गई हैं। यदि आप अपने कंठ को कोमल मधुर और आकर्षक, कोयल की तरह, बनाना चाहते हैं, तो इस पुस्तक में बतलाई हुई तरकीबों पर अमल करें। मूल्य ।-) आने।

३०—कान के रोग और चिकित्सा

(लेखक एक अनुभवी)

इसमें कान की भीतरी बाहरी बनावट और श्रवणशक्ति का पूरा

अपने को बलिदान करने वाले वीरों की गाथा पढकर रोमाञ्चित हो उठेंगे, वहाँ अत्याचार-पीडितो की करुण कहानी पढ कर अवश्य आँसू बहाने लगेंगे। फूलवाली और महाराज नन्दकुमार का चरित्र-चित्रण बहुत हीं अपूर्व है। इस उपन्यास को आप एक बार अवश्य पढिये। मूल्य सिर्फ २) रुपये।

३७—साहित्य-सुषमा

(सम्पादक—पं० नन्ददुलारे वाजपेयी और

पं० लक्ष्मीनारायण मिश्र)

काव्य, नाटक, उपन्यास, प्रहसन इत्यादि साहित्य के भिन्न भिन्न अङ्गों और उपाङ्गों पर हिन्दी के वर्तमान धुरन्धर विद्वानो के लिखे विद्वत्तापूर्ण निबन्धो का ऐसा सुन्दर संग्रह अब तक कोई नहीं निकला था। सम्पादको ने अपनी मार्मिक साहित्यिक दृष्टि से निबन्धों का चुनाव कितना सुन्दर किया है, निबन्धों के सम्पादन करने में कितना परिश्रम किया है, सो इस पुस्तक के देखने से ही प्रकट होगा। वर्तमान समय के सभी मुख्य मुख्य साहित्यकारो का इसमें समावेश हुआ है। साहित्य का उच्च अध्ययन करनेवालो के लिए बड़े काम की चीज है। कागज, छपाई और जिल्द बहुत ही बढ़िया है। मूल्य सिर्फ १॥) रु०

३८—बच्चों की कहानियाँ

पाँच भाग

(लेखक—पं० लक्ष्मीधर जी वाजपेयी)

बाल-साहित्य में इन कहानियों का विशेष स्थान है, क्योंकि ये कहानियाँ बहुत ही छोटी छोटी परन्तु मनोरञ्जक और कौतूहलवर्धक ऐसी हैं कि बालक इनको पढते हुए हँसते जाते हैं, साथ ही उनके मन पर उत्तम शिक्षा का संस्कार भी आप ही आप अङ्कित होता जाता है।

कवि की सम्वत् १६८० की रची हुई है। पुस्तक बडी खोज और योग्यता के साथ सम्पादित की गई है। कठिन शब्दो के कोश और टिप्पणियों से पुस्तक की उपयोगिता बढ गई है। प्रयाग विश्वविद्यालय के सुयोग्य अध्यापक श्रीरामकुमार वर्मा एम० ए० ने एक बहुत ही विद्वत्ता-पूर्ण भूमिका लिखी है। मूल्य सिर्फ ।=) आने।

३४—दयालु माता

(लेखक—श्रीयुत सन्तराम जी बी० ए०)

यह एक बहुत ही सुन्दर गार्हस्थ्य कहानी है। घर की लक्ष्मी अपने कुटुम्ब और समाज का उपकार करते हुए किस प्रकार एक सफल गृहिणी बन सकती है, इसका आदर्श बहुत ही मनोरञ्जक और उपदेश-प्रद है। प्रत्येक गृहस्थ और गृहिणी को पढना चाहिए। मूल्य ।=) ।

३५—सद्गुणी पुत्री

(लेखक—श्रीयुत सन्तराम जी बी० ए०)

एक सद्गुणी कन्या का आदर्श चरित्र इस कहानी में अंकित किया गया है। एक कुमारिका मातृपद और गृहिणी-पद प्राप्त करके किस प्रकार अपने दोनों कुलो की उजियाली बन सकती है, यह कन्याओं के लिए बहुत ही शिक्षादायक है। मूल्य सिर्फ ।=) आने।

३६—फूलवाली

(लेखक—बाबू सुरेन्द्रमोहन भट्टाचार्य)

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासनकाल में जो अत्याचार हमारे देश वासियों पर हुए हैं, उनका नग्न चित्र इस उपन्यास में बहुत ही कौशल के साथ खींचा गया है। यह ऐतिहासिक उपन्यास, वीर और करुण रस से इतना भरा हुआ है कि आप जहाँ एक ओर देश पर हँसते हुए

कहानियों मे अस्वाभाविकता नहीं है। अधिकाश कहानियाँ नीति सौन्दर्य और प्रकृतिनिरीक्षण से सम्बन्ध रखती हैं, अतएव बहुत सुरुचिपूर्ण हैं। प्रत्येक कहानी सचित्र है। भाषा बोलचाल की बहुत ही सरल है। बालक और बालिकाएं दोनों साथ बैठकर पढ सकते हैं। प्रत्येक भाग में बीस बीस कहानियाँ और बीस बीस चित्र दिये गये हैं। कागज बढ़िया चिकना, छपाई चार रगों की और टाइटिल बहुत ही आकर्षक है। मूल्य प्रत्येक भाग का सिर्फ ।=) आने।

३९—सुभाषित और विनोद

(लेखक—पं० गुरुनारायण सुकुल)

इस पुस्तक में कोरा विनोद ही नहीं है, बल्कि हास्यविनोद के साथ ही साथ साहित्य की अपूर्व छटा भी है। सैकडो ऐसे सरस साहित्यिक चुटकुले बड़े परिश्रम से सग्रह किये गये हैं, जिनसे मनोरजन के साथ साथ पाठकों का साहित्यिक ज्ञान और चातुर्य भी बढता है। सुरुचिपूर्ण सुभाषित और हास्यरस से भरे हुए ऐसे चुटकुले हिन्दी में अन्यत्र कहीं न मिलेंगे। पुस्तक सजिल्द है। मूल्य सिर्फ १।।) रुपया।

४०—रासपंचाध्यायी और भ्रमरगीत

(टीकाकार—साहित्यरत्न पं० उदयनारायण जी त्रिपाठी एम० ए०)

नन्ददासकृत "रासपचाध्यायी" और "भ्रमर-गीत" ये दोनों काव्य हिन्दी में प्रायः दुर्लभ हो रहे थे। हमने बडे परिश्रम से इन दोनो काव्य-ग्रन्थों को सुसम्पादित करा के प्रकाशित किया है। विद्वान् टीकाकार ने पाठान्तर और टिप्पणियों के अतिरिक्त एक विस्तृत भूमिका भी लिखी है, जिसमें आलोचनात्मक दृष्टि से दिखलाया गया है कि नन्ददास की कविता कैसी सरस, हृदय-हारिणी और आह्लाद-कारिणी है। ...क जिल्ददार है। मूल्य १।।) रुपया।